Nagari-Pracharini Granthamala Series No 17

भूषणग्रन्थावली ।

श्यामबिहारी मिश्र एम० ए० और

शुकदेवबिहारी मिश्र बी० ए०

सम्पादित

तथा

काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

द्वितीय संस्करण १०००] १९१६ ई० [मूल्य बारह आना

सूचीपत्र ।

(१) भूमिका पृष्ठ १–८७

(२) शिवराज भूषण ग्रन्थ पृष्ठ १-१३३

शब्दालंकार ।

शब्दार्थालंकार ।

प्रसिद्ध नामों की अक्षरक्रम से तालिका ।

नाम व ग्रन्थ के पृष्ठ	नाम व ग्रन्थ के पृष्ठ

नाम व ग्रन्थ के पृष्ठ ।		नाम व ग्रन्थ के पृष्ठ ।	
कल्यान	७५	किशोर (सिंह)	१२२
कमाऊँ	८७, १५२ १६७	कुतुब साह (कुतुबशाह) २२	
कक्कर	१६८	२७, ५६, ७५, ८८, १५३	
कमधुज (कबंधज)	१४१	कुड़ाल	११२
कशमीर	१४८	कूरम	१४१

ख

खजुआ	१४९	खान (जहां) बहादुर ३४ १०८	
खवास खां ७२, ८९, १०७, ११२		११५, १२१	
खंडहर	५७	खानदौरा(नौशेरीखाँ) ३९ १०६	
		खुरासान	१५३, १६८

ग

गढ़	४५	गोलकुंडा ८४, १४७, १५२, १५४	
गुजरात	५८, १४५	गोसलखाना, (गुस्लखाना)	
गूजर (बड़)	१४१	१२, २९, ७१, ७३, ९३, १४०	
गोकुल	१४९	गौर (ग़ौर)	५८
गोंड़वानों	१५४	गौर	५०, ९१, १४१

च

चकत्ता १२, ७१, १३६ इत्यादि		चालकुंड	१४७
चन्द्रावत	३६, ७९, १०२	चाँदा	४५
चन्द्रावल	१४१, १४६	चितौर	८७
चम्पति	१५९ इत्यादि	चीन	१४५

नाम व ग्रन्थ के पृष्ठ।	नाम व ग्रन्थ के पृष्ठ।

भ

म

र

नाम व ग्रन्थ के पृष्ठ ।	नाम व ग्रन्थ के पृष्ठ ।

नोट (१) यह सब नाम वही है जो ग्रन्थ मे आए हैं और ग्रन्थ ही के पृष्ठों के हवाले दिए गए है न कि भूमिका के, क्योंकि भूमिका में आए हुए विशिष्ट नाम इस तालिका में नहीं है और न उनकी तालिका बनाना हमने आवश्यक समझा ।

नोट (२) इस तालिका मे जिन पृष्ठो के नम्बरो के नीचे एक आड़ी रेखा खींची है उन पृष्ठों पर उक्त नामो का ब्यौरा टिप्पणी में दिया गया है ।

नोट (३) इस तालिका मे कई नाम छोड़ दिए गए है यथा शिवाजी (शिवराज) औरंगजेब, भूषण, मरहट्टा, सैयद पठान, भौंसिला, सरजा, खुमान पौराणिक, देवता व पुरुष प्रसिद्ध ऐतहासिक पुरुष, आगरा, दिल्ली, वल्दियत (यथा साहि सुत, चम्पति तनय, इत्यादि) आर अन्य ऐसे ही नाम । इनमे से बहुतेरो के नाम बार बार ग्रन्थ मे आए हैं और शेष को हमने तालिका मे दर्ज करना अनावश्यक समझा ।

भूषण-ग्रन्थावली की

भूमिका

••••••••••

" एक लहै तप पुञ्जन के फल ज्यों तुलसी अरु सूर गोसाईं ।
एकन को बहु सम्पति केशव भूषन ज्यों बलबीर बड़ाईं ॥
एकन को जस ही सों प्रयोजन है रसखानि रहीम की नाईं ।
दास कबित्तन की चरचा गुनवन्तन को सुखदै सब ठाईं " ॥

वास्तव में दास जी का उपरोक्त सवैया भूषण जी के विषय में जो कुछ कहता है वह बिलकुल ठीक है। सम्पत्ति और बड़ाई जैसी कुछ कविता से भूषण जी को प्राप्त हुई वैसी औरों को नहीं मिली।

हमारे भाषासाहित्य में वीर रौद्र तथा भयानक रसों का सर्वोच्चपद है, क्योंकि हिन्दी कविता इन्हीं रसों का अवलम्ब ले पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई है। सबसे प्रथम जिस ग्रन्थ के निर्मित होने का हाल हम लोगों को ज्ञात है वह चन्दकृत पृथ्वीराज रासो है और वह विशेषतया उन्हीं रसों के वर्णन का भाण्डार है। उसके पश्चात् बीसलदेव रासो आदि जो ग्रन्थ बने उनमें भी विशेषतया इन्हीं रसों को आदर दिया

गया है। मलिक मुहम्मद जायसी ने भी यत्र तत्र उपर्युक्त ग्रन्थों की भांति इन रसों का समावेश पद्मावत में किया है। तदनन्तर "चौथे पन जाइय नृप कानन" की बात स्मरण कर चौथे की कौन कहै श्रीरामचन्द्र जी की भाँति प्रायः पहिले ही पन में हमारी भाषा काव्यकानन को चल दी और भगवत भजन करने लगी। अतः ऐसे रसों को छोड़ तुलसीदास, सूरदास, कबीर इत्यादि कवीश्वरों की सहायता से इसने शान्त * रस के बड़े ही मनोरञ्जक राग अलापे, परन्तु असमय की कोई भी बात चिरस्थायी नहीं होती सो हमारे साहित्य का चित्त भी शांत रस में न लगा। शांत का वास्तविक प्रादुर्भाव तो शृङ्गार के पश्चात् होता है, जब विषयों का उपभोग कर प्राणी कुछ थक सा जाता है तभी उसके चित्त में, राजा ययाति की भांति उन विषयों की तृष्णा हट कर, निर्वेद का राज्य होता है। सो हमारे साहित्य ने अपना पुराना उत्साह तो छोड़ ही दिया था, अब वह निर्वेद को भी तिलांजलि दे अपना शृङ्गार करने में पूर्णतया प्रवृत्त हो गया और हमारे कवियों ने पुण्यात्मा सरस्वती देवी को "नायकाओं" के गुण कथन में लगाया। इस कार्य्य में (जैसा कि हम हिन्दी-काव्य-आलोचना † में लिख चुके हैं) उनको

---

* अवश्य ही सूरदास जी ने शृंगार एवं अन्य कतिपय कवियों ने और रसों की भी कविता की है पर प्रधानता शांतरस की ही रही।

† सरस्वती भाग १ संख्या १२ देखिए।

विषयी और उद्योगशून्य राजाओं से विशेष सहायता मिली। शृङ्गाररस के वर्णन में उसी समय से अब तक हमारी कविता ऐसी कुछ उलझ पड़ी है कि उसका छुटकारा होना ही कठिन दीखता है। वहां तो जहां देखिए पति अथवा उपपति और पत्नी का विहार, मान, दूतीत्व, पश्चात्ताप, बिरह की उसासैं, उपपतियों और जारों की ताक झांक, सुरतान्त के लटके, नायकाओं के नखशिख और विशेष करके कटि नेत्र व नितम्बों के वर्णन, उलाहने, गणिकाओं का अधिक धन वसूल करने का प्रयत्न इत्यादि इत्यादि, विशेषतः यही हमारी कविता हमको दिखा रही है! हमारे इस प्रबन्ध के नायक भूषण महाराज ऐसे ही समय में उत्पन्न हुए थे, पर इन्हें ऐसे वर्णन पसन्द न थे अतः वे लिखते हैं—

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यन्त पुनीत तिहूपुर मानी।
राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकि हु व्यास के सङ्ग सोहानी॥
भूषन यों कलि के कविराजन राजन के गुन पाय नसानी।
पुन्य चरित्र सिवा सरजै बर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी॥

हमारे भूषण महाराज का यह भी एक बड़ा गुण है कि केवल शृंगार को ही नहीं बरन सभी अनुपयोगी विषयों को लात मार कर इन्होंने भारतमुखोज्वलकारी महाराज शिवाजी भोंसला एवं छत्रसाल बुन्देला जैसे महापुरुषों के गुणगान में अपनी अलौकिक कवित्वशक्ति को लगाया और ऐसे उपयोगी वर्णनों की ओर लोगों की रुचि आकर्षित की

यहां तक कि उन्होंने सिवाय एक छुन्द के (स्फुट कविता छुन्द नं० ५ देखिए) और कुछ शृङ्गाररस के वर्णन में न कहा और उसमें भी, मानो प्रायश्चित्तार्थ, उन्होंने युद्ध का ही रूपक बाँधा है।

हर्ष की बात है कि जैसे इन्होंने शृंगार एवं अन्य अनुपयोगी विषयों को लात मार बीर, रौद्र, भयानक रसों ही को प्रधानता देकर अन्य कवियों को सदुपदेश सा दिया वैसे ही इनका मान भी ऐसा हुआ जैसा इससे श्रेष्ठतर कवियों का भी कभी स्वप्न तक में न हुआ, जैसा कि दास जी के शिरोभाग में उद्धृत छुन्द से भी प्रकट होता है। बिहारीलाल जी सदैव कलियुग के दानियों की निन्दा ही करते रहे ("तुम हूं कान्ह मनो भए आजु काल्हि के दानि") परन्तु यह न विचार किया कि उन्हीं के समकालीन भूषण कवि किस प्रकार की कविता करने से किस स्थान को पहुंच गए हैं। अस्तु।

शिवसिंह सरोज,तथा अन्य पुस्तकों में इन महाशय के बनाए चार ग्रन्थ लिखे हैं, (१) शिवराज भूषण, (२) भूषण हजारा, (३) भूषण उल्लास, (४) दूषण उल्लास। इनमें अन्तिम तीन ग्रन्थों को अद्यावधि मुद्रण का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ है, और न हमने उन्हें कहीं देखा ही है। नहीं मालूम उनके रचयिता भूषण जी हैं या नहीं। एक यह भी प्रश्न है कि शिवाबावनी एवं छत्रशालदशक कोई स्वतंत्र ग्रन्थ हैं अथवा भूषण की

स्फुट कविता के संग्रह मात्र। प्रथम प्रश्न के उठने का यह कारण है कि किसी महाशय ने भूषण जी के उक्त चार ग्रन्थ होने का कोई प्रमाण नहीं दिया है। उन्होंने केवल यही कह दिया है कि भूषण के ये चार ग्रन्थ हैं। यदि वे लिखते कि उन्होंने इन चार ग्रन्थों को देखा है अथवा उनका होना किसी स्थान विशेष पर किसी प्रामाणिक रीति पर सुना है, तो उनका कथन अधिक मान्य होता। हमारा इस विषय में यह मत है कि यद्यपि हम नहीं कह सकते कि भूषण महाराज के कौन कौन और ग्रन्थ हैं। ("हजारा" का होना कालिदास त्रिवेदी ने लिखा है, और उसका नाम यों भी बहुत सुन पड़ता है) तथापि इसमें सन्देह नहीं कि इन्होंने कुछ अन्य ग्रन्थ निर्माण अवश्य किए होंगे। इस मत की पुष्टि में निम्न-लिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं।

(१) भूषणजी ने शिवाजी के सन् १६७४ वाले राज्याभिषेक के वर्णन में एक भी छन्द न लिखा हो ऐसा सम्भव नहीं। ऐसे प्रधान उत्सव में कविजी अवश्य ही सम्मिलित होंगे अथवा घर से लौटने पर उसका पूर्ण वृतान्त तो उन्होंने सुना ही होगा। अवश्य ही भूषण शिवाजी को सदैव से राजा और महाराज कहते थे, पर शिवाजी भी तो ऐसा ही करते थे, सो जब उन्होंने अपना विधिवत शास्त्रानुकूल अभिषेक बड़ी धूम धाम से करना आवश्यक समझा तब भूषण जी उसका वर्णन करना कैसे अनुचित मानते? जान

पड़ता है कि कहीं न कहीं भूषण जी ने इसका वर्णन किया ही होगा पर जिस ग्रन्थ में यह वर्णन होगा वह अभी तक कहीं छिपा ही पड़ा हुआ प्रतीत होता है।

(२) इन महाशय ने कितनी ही अन्य सुप्रसिद्ध घटनाओं का अपने विदित ग्रन्थों में समावेश नहीं किया है, सो यदि इनके अन्य ग्रन्थों का प्रस्तुत होना न मानें तो आश्चर्य्य-सागर में मग्न होना पड़ेगा। इसी प्रकार उस समय के कितने ही इनके निकटस्थ प्रसिद्ध व्यक्तियों के नाम तक इनके विदित ग्रन्थों में नहीं मिलते। भला शिवाजी और छत्रसाल की भेंट का हाल भूषण जी कैसे न लिखते? अथवा तन्नाजी, मोरोपंत एवं गुरुवर श्रीरामदास जी तथा कविवर तुकाराम जी का हाल लिखे बिना भूषण जी कैसे रहते? सम्भाजी के प्रधान कृपापात्र कुलूष नामक एक कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे, जिन्हें औरंगज़ेब ने पकड़ कर मरवा डाला था। भूषण भी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे तथापि क्या वे कहीं कुलूष का नाम ही न लिखते? शिवाजी का शील स्वभाव बनाने में, उनके पालक दादा जी सोनदेव तथा उनकी माता जीजा बाई का बड़ा प्रभाव पड़ा था तथापि क्या भूषण जी इनका कहीं नाम तक न लेते? क्या यह सम्भव है कि भूषणजी ब्राह्मण होकर महात्मा रामदास के एवं कवि होकर मराठी कवियों के शिरोमणि तुकारामजी के विषय में एकदम मौन धारण कर लेते? भूषणजी, जैसा कि आगे

लिखा जायगा, साहूजी के राजत्व काल तक अवश्य जीवित थे, परन्तु इनके प्रस्तुत ग्रन्थों में साहूजी के विषय में केवल एक छन्द मिलता है। इन सब बातों से स्पष्ट विदित होता है कि भूषणजी के कई ग्रन्थ देखने का अभी हम लोगों को सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ है।

(३) भूषणजी दीर्घजीवी हुए हैं, और प्राय ८० वर्ष की अवस्था में उनका देहान्त हुआ। पर शिवराजभूषण उन्होंने केवल छः सात साल के भीतर (सन् १६६७ से १६७३-७४ ईसवी तक) बना डाला। उस समय के ४०-४१ वर्ष पीछे तक वे जीवित रहे, सो क्या इतने दिनों में उन्होंने दो चार भी अन्य ग्रन्थ न लिखे होंगे? यह तो विदित है कि अन्तिम समय तक वे कविता करते रहे।

शिवाबावनी एवं छत्रसालदशक के विषय में हमारा यह मत है कि वे स्वतंत्र ग्रन्थ कदापि नहीं हैं वरन भूषण जी के अन्य ग्रन्थों अथवा स्फुट कविता से संग्रहीत हुए हैं।

कवि की जीवनी।

भूषण महाराज कान्यकुब्ज ब्राह्मण काश्यप गोत्री त्रिपाठी (तेवारी) थे। इनके पिता का नाम रत्नाकर था, और यह त्रिविक्रमपुर (वर्तमान तिकवाँपुर) में रहते थे। यह तिकवाँपुर यमुना नदी के बाएँ किनारे पर ज़िला कानपुर परगना व डाकखाना घाटमपुर में मौजा "अकबरपुर बीरबल" से दो

मील की दूरी पर बसा है। जो पक्की सड़क कानपुर से हमीर पुर को गई है, उसके किनारे कानपुर से ३० वें एवं घाटमपुर से ७ वें मील पर 'सजेती' नामक एक ग्राम है जहाँ से तिकवाँ-पुर केवल दो मील रह जाता है। "अकबरपुर बीरबल" अब भी एक अच्छा मौजा है जहाँ अकबर बादशाह के सुप्र. सिद्ध मंत्री और मुसाहब महाराज बीरबल उत्पन्न हुए (शायद तब इसका कुछ और नाम हो) और रहते थे (शि० भू० के छुन्द नं० २६ व २७ देखिए)।

सुना जाता है कि उक्त रत्नाकरजी श्रीदेवीजी के बड़े भक्त थे और उन्हींकी कृपा से इनके चार पुत्र उत्पन्न हुए। अर्थात् चिन्तामणि, भूषण, मतिराम, और नीलकंठ उपनाम जटाशङ्कर।

शिवसिंह सरोज में भूषणजी का जन्मकाल संवत १७३८ विक्रमी लिखा है, परन्तु यह नितान्त अशुद्ध है। शिवसिंह जी के वास्तवमें हमलोग इस "सरोज" के कारण बड़े ऋणी हैं पर कहना ही पड़ता है कि उसमें सन संवत् का बड़ा गड़-बड़ रहता है। शिवसिंहजी भूषण महाराज का शिवाजी एवं छत्रसाल के दरबारों में रहना मानते हैं पर शिवाजी सन् १६८० ईसवी (अर्थात् १७३६-३७ वि॰ मी) में गोलोकवासी हुए थे सो क्या भूषण जी अपने जन्म के साल डेढ़ साल पहिले ही शिवाजी के यहाँ पहुँच गए? भूषणजी लिखते हैं कि संवत् १७३० में उन्होंने शिवराज भूषण समाप्त किया पर

शिवसिंहजी भूषण एवं मतिराम दोनों ही का जन्म संवत् १७३८ का लिखते हैं ! शोक का विषय है कि भूषण के ग्रन्थों से उनके जन्मकाल का कुछ भी पता नहीं चलता न मतिराम कृत रसराज और ललितललाम अथवा चिन्तामणि कृत कविकुल कल्पतरु से ही कुछ सहायता मिलती है एवं मतिराम और चिन्तामणि कृत (अपूर्ण) पिंगलों में भी इसका कुछ पता नहीं। इन कवि-बन्धुओं के कोई अन्य ग्रन्थ हमारे देखने में नहीं आए । भूषण-ग्रन्थावली की बंगवासी वाली प्रति की भूमिका में लिखा है कि चिन्तामणि जी के ग्रन्थ सन् १६२७ से १६५६ ईसवी तक बने। हम नहीं कह सकते कि इस कथन का क्या प्रमाण है, परन्तु यदि वह सत्य मान लिया जाय तो चिन्तामणिजी का जन्म सन् १६११ ईसवी के पीछे का नहीं माना जा सकता क्योंकि १६ वर्ष की अवस्था के पहिले कोई मनुष्य कदाचित ही काव्यग्रन्थ रच सके। इस हिसाब से भूषण का जन्म सन् १६१४ इसवी के आसपास या उससे पहिले का मानना पड़ेगा। परन्तु हमने आगे सप्रमाण लिखा है कि भूषणजी प्रायः सन् १७१५ ईसवी तक जीवित रहे सो यदि बंगवासी वाली बात ठीक हो तो भूषण का एक सौ वर्ष से कुछ अधिक काल तक जीवित रहना पाया जायगा (जो असम्भव नहीं तो संदिग्ध अवश्य है।)

यहाँ तक हम खण्डनालोचना (Destructive Criticism) की बातें लिखते आए। अब इसी विषय पर मण्डनालोचना

(Constructive Criticism) लिखना उपयुक्त होगा। यह बात प्रसिद्ध है कि पहिले भूषण जी बिलकुल अपढ़ और निकम्मे थे एवं चिन्तामणिजी कमासुत और कुटुम्ब के आधार थे। भूषण सदा घर बैठे बैठे बगलें बजाया करते और बड़े भाई की कमाई से पेट भरते थे। एकदिन भोजन करते समय भूषण ने अपनी भावज से लवण माँगा तो उसने क्रोध से कहा "हाँ, बहुत सा लवण तुमने कमा कर रख दिया है, जो उठा लाऊँ !" यह बात इन्हें असह्य हो गई और इन्होंने मुँह का ग्रास उगल कर कहा "अच्छा अब जब नमक कमाकर लावेंगे तभी भोजन करेंगे।" ऐसा कह भूषणजी खाली हाथ घर से यों ही निकल पड़े और कहते हैं कि इन्होंने अपनी जिह्वा काट कर श्रीजगदम्बाजी पर चढ़ा दी और ये एकदम भारी कवीश्वर हो गए। इस बीसवीं शताब्दी में लोग शायद ऐसी बातों पर पूर्ण विश्वास न कर सकें, पर कम से कम जीभ का काटना सम्भव हो सकता है। हमने एक भाट को देखा है, जिसने इसी भाँति श्रीदेवी जी पर अपनी जिह्वा कुछ ही दिन पूर्व चढ़ाई थी। पर शोक की बात है कि उसमें हमने कवित्व शक्ति कुछ भी न पाई। अस्तु जो हो, इसमें सन्देह नहीं कि भूषण जी ने इसी समय से विद्याध्ययन में बहुत चित्त लगाया और वे थोड़े ही दिनों में कविता करने लगे। इसके बाद वे चित्रकूटाधिपति हृदयराम के पुत्र रुद्र-राम सुलंकी के आश्रय में कुछ दिन रहे। इनकी कवित्वशक्ति

से प्रसन्न हो रुद्रराम ने इन्हें "कवि भूषण" की उपाधि दी और तभी से ये भूषण कहाने लगे, यहाँ तक कि इनके मुख्य नाम का अब पता भी नहीं लगता (शि० भू० छन्द २८ देखिए) इन महाराज रुद्रराम सुलंकी का हमने चित्रकूट जाकर एवं बाँदा से जहाँ हम डेढ़ साल तक रहे हैं बहुत कुछ पता लगाया लेकिन कुछ भी न विदित हो सका और न बुन्देलखंड गजेटियर में ही इनका नाम मिला। कदाचित ये चम्पतिराय की मातहती में कोई छोटे जमीदार हों अथवा रीवाँ वाले सुलंकियों के बबुवाने में हों। अस्तु।

यहाँ से भूषणजी महाराज शिवाजी के दरबार को गए। यह वह समय था जब शिवाजी दक्षिण के अनेक दुर्ग जीत कर रायगढ़ में राजधानी नियत कर चुके थे (शि० भू० छं० १४ देखिए) अर्थात् सन् १६६२ ईसवी के पश्चात। अनुमान होता है कि भूषणजी महाराज शिवाजी के यहाँ उस समय के कुछ ही पीछे पहुँचे थे जब वे दिल्ली से निकल आए थे और छत्रसाल बुन्देला से मिल चुके थे अर्थात् सन् १६६७ ईसवी के अन्त में। निम्नलिखित विचारों से इस अनुमान की पुष्टि होती है।

(१) शिवाजी के यहाँ पहुँचने पर भूषण उनका वर्तमान निवासस्थान रायगढ़ बतलाते हैं और सिवाय उसके और कहीं शिवाजी का रहना भूषण नहीं लिखते। शिवाजी रायगढ़ सन् १६६२ ईसवी में आए थे, अतः भूषण उनके दर्बार में सन् १६६२ के पश्चात पहुँचे होंगे (शि० भू० छं० १४ व १६)

(२) शिवाजी सन् १६६६ में दिल्ली गए थे और वहाँ से लौट कर घर तक पहुँचने में उन्हें नौ मास लगे थे। अतः यदि इस समय के पहिले भूषणजी शिवाजी के यहाँ पहुँचे होते तो इन नौ मास के बीच में हतोत्साह हो कर वे घर लौट आते। उन्होंने सन् १६७३-७४ ईसवी में शिवराजभूषण समाप्त किया और जान पड़ता है कि सन् १६६७ ईसवी में ही उन्होंने उसका निर्माण प्रारम्भ कर दिया था क्योंकि ग्रन्थारम्भ ही में तीन बड़े प्रभावशाली छन्दों में शिवाजी के दिल्लीश्वर से साक्षात्कार का वर्णन है। (छन्द नम्बर ३४, ३५ व ३८ देखिए)। यदि भूषणजी सन् १६६६ के पहले शिवाजी के यहाँ पहुँचे होते और हतोत्साह होकर लौट आते तो इतना शीघ्र एक ही साल के भीतर उस समय के भयावने मार्ग का इतना लम्बा सफर करके अपने घर से फिर महाराष्ट्र देशतक न पहुँच सकते। इससे विदित होता है कि शिवाजी के दिल्ली से लौटने के पश्चात् भूषणजी उनके दरबार में हाजिर हुए (अर्थात् सन् १६६७ में)।

(३) यदि भूषणजी सन् १६६७ के बीच तक शिवाजी के यहाँ पहुँच गए होते, जब कि छत्रसाल बुन्देला ने शिवाजी से भेंट की थी (लालकृत छत्रप्रकाश देखिए) तो वे इस भेंट का हाल शिवराजभूषण में ही कहीं न कहीं अवश्य लिखते। इससे जान पड़ता है कि १६६७ ईसवी के अन्त में भूषण शिवाजी के यहाँ पहुँचे होंगे।

अब यदि भूषणजी की भावज ने बीस वर्ष की अवस्था में उन्हें लवण सम्बन्धी कटुवाक्य कहे हों (क्योंकि इससे कम अवस्था के लड़कों से ऐसी चानक की बात कदाचित कोई भी न कहेगा) और यदि तत्पश्चात भूषण के पाँच वर्ष विद्याध्ययन और दूसरे पाँच वर्ष कवित्वशक्ति सम्पादन एवं भूषण की उपाधि प्राप्त करने में लगे हों तो तीस बत्तीस वर्ष की अवस्था में ये महाशय शिवाजी के यहाँ (सन् १६६७ ईसवी में) पहुँचे होंगे। अतः इनका जन्म काल सन् १६३५ ईसवी (सम्वत् १६९२) के लगभग मानना पड़ेगा। ऐसा मानने से इनकी पूरी अवस्था अस्सी वर्ष के आस पास पहुँचती है जो अयुक्त भी नहीं जान पड़ती। हमें इस मत के विरुद्ध कोई युक्तियुक्त बाधा नहीं देख पड़ती और इसलिये हम भूषणजी का यही जन्मकाल ठीक मानते हैं। इसके विरुद्ध दो एक महाशयों ने कुछ लिखा है पर किसीने अपने कारण नहीं विदित किए अथवा उनके कारण ठीक नहीं जँचते।

भूषण जी के जन्म से लेकर रुद्रराम सुलंकी के यहां जाने तक में तो कोई दो मत नहीं हैं पर वहाँ से कतिपय लोग इनका दिल्लीश्वर औरंगज़ेब के यहां जाना बतलाते हैं और बादशाह से लड़ाई झगड़े की बातें करके उनका शिवाजी के यहाँ जाना मानते हैं पर ये बातें सर्वथा अग्राह्य हैं। बादशाह कोई साधारण जमीदार तो था ही नहीं, सो उनके सम्बंध में

ऐसी कहावतें केवल लड़कों की कहानी मात्र मानी जा सकती हैं। शिवाबावनी में दो छन्द (नं० १४ व १५) ऐसे हैं कि जिन पर लोगों को ऐसी कहानियाँ गढ़ डालने का अच्छा अवसर हाथ लग गया। एक तीसरा छन्द (शिवाबावनी, छं० नं० ४१) अब तक प्रसिद्ध न था और न मुद्रित प्रतियों में उसका उल्लेख ही पाया जाता है नहीं तो ऐसे लोग इस खूँटी के सहारे कदाचित् कोई और भी आश्चर्य्यजनक कहानी लटका देते। कहानी यों है कि एक दिन बादशाह ने अपने कवियों से कहा कि आप लोग हमारी सदा प्रशंसा ही किया करते हैं सो क्या हममें कोई दोष है ही नहीं? इस पर भूषण जी ने क्षमा का बचन पाकर शिवाबावनी के कवित्त नं० १४ व १५ पढ़े जिससे औरंगज़ेब बहुत नाराज़ हुआ और भूषण जी उसकी सभा से चलदिए। तत्पश्चात् वे अपनी कबुतरी घोड़ी पर चढ़े चले जाते थे और उधर औरंगज़ेब जुम्मा मस्जिद को नमाज़ पढ़ने जा रहा था*, सो भूषण ने उसे सलाम न कर उसके साथ वाले कवीश्वरों को प्रणाम किया। बादशाह ने क्रोधांध हो भूषण के पकड़ने को सवार दौड़ाए पर वे कबुतरी घोड़ी † मारे हुए निकल गए और किसी के हाथ न आए! भला ऐसी बातें क्या लड़कों की सी

---

* मानो वह कोई साधारण गाव का लम्बरदार हो। बादशाहों की सवारी ऐसे ही निकलती है!

† घोड़ी क्या मानो स्टीम एंजिन थी!

कहानियाँ नहीं हैं? इस कथा पर जिस तरह से बिचार कीजिए वैसे ही वह ऊटपटांग प्रतीत होती है। इसके विरुद्ध कुछ लोग एक दूसरी ही कहानी उड़ाते हैं कि भूषणजी ने औरंगज़ेब से यह कहा था कि मेरे भाई (चिन्तामणिजी) की शृंगार रस की कविता सुन कर आपका हाथ ठौर कुठौर पड़ता होगा पर मेरी वीर काव्य सुन कर वह मुच्छ पर पड़ेगा सो पहिले पानी से धोकर हाथ शुद्ध कर लीजिए। निदान ऐसी ऐसी कहानियों का खंडन करना व्यर्थ ही प्रतीत होता है। क्योंकि अवश्य ही वे साधारण आदमियों की चलाई हुई हैं, जिन्हें ऐसी बातों के विचारने की योग्यता ही न थी कि इतने बड़े बादशाह का कितना बड़ा और कैसा दरबार होगा और उसमें कैसी बात चीत होती होगी एवं औरंगज़ेब जैसे बादशाह के सम्बन्ध में ऐसी बातें कहां तक युक्ति युक्त मानी जा सकती हैं?

औरंगज़ेब के यहाँ भूषणजी के जाने का कोई भी प्रमाण नहीं मिलता अथवा यों कहिए कि हिन्दी के किसी भी कवि का उस दरबार में जाना प्रतीत नहीं होता। औरंगजेब के पुत्र आज़मशाह को अवश्य हिन्दी की प्रीति थी और उसने विहारी सतसई को क्रमबद्ध कराया एवं देवकृत भावविलास भी उसने "सुन्यो सराह्यो ग्रन्थ यह अष्ट याम संजूत"। औरंगज़ेब जैसे परधर्मद्वेषी कट्टर मुसल्मान का हिन्दी कवियों को आश्रय देना ही ध्यान में नहीं आता और

दूसरे सिवाय एक भँडौवा के और दूसरा कोई कबित्त औरंगजेब के सम्बन्ध में हमने नहीं देखा न सुना ही। वह भँडौवा यों है।

तिमिर लंग लइ मोल रही बाबर के हलके।
चली हुमाऊं संग गई अकबर के दल के॥
जहाँगीर जस लियो पीठ को भार हटायो।
साहजहां करि न्याव ताहि पुनि मांड़ चटायो॥
बल रहित भई पौरुष थक्यो भगी फिरत बन स्यार डर।
औरंगज़ेब करिनी सोई लै दीन्हीं कबिराज कर॥

इस भंडौवा में किसी कवि का नाम नहीं और न यही ध्यान में आता है कि इतना बड़ा बादशाह किसी कवि को ऐसी बुड्ढी हस्तिनी देता। अवश्य ही यह षट पद कविराज श्री सुखदेव मिश्र का नहीं है। सम्भव है कि किसी उर्दू या फ़ारसी के कवि को बादशाह ने कोई हस्तिनी दी हो, क्योंकि कवि यह नहीं कहता कि स्वयं उसीने वह करिणी पाई अथवा यह भी सम्भव है कि औरंगजेब की कट्टरता से नाराज़ होकर किसीने उसका उपहास करने को यों ही भंड़ौवा बना डाला हो। अस्तु।

या तो भूषण जी रुद्रराम सुलंकी के यहाँ से सीधे शिवा-जी के यहां गए होंगे अथवा "अवधूतसिंह" (स्फुट छन्द नं० ४ देखिए) के यहाँ होते हुए पहुँचे हों। (सम्भव है कि रुद्रराम को ही भूषण जी ने अवधूतसिंह लिखा हो क्योंकि

इस नाम के किसी राजा का हमें कहीं भी नाम तक न मिला और "शंकर (रुद्र) अवधूत" की बात प्रसिद्ध ही है)।

शिवाजी की राजधानी में पहुँच कर भूषणजी एक देवालय पर संध्या को ठहरे और कुछ रात बीते महाराज शिवाजी भी अकेले ही वहां पूजनार्थ पहुँचे। भूषण से उन्होंने पूछा और हाल जान कर कहा कि शिवराज के दर्बार में पहुँचने के पूर्व हमें भी कोई छन्द सुनाइए। भूषण ने बड़ी कड़क से शि० भू० का छ० नं० ५६ पढ़ा। शिवाजी ने उनकी प्रशंसा कर उस छन्द को फिर सुनना चाहा और भूषण ने कह सुनाया। इसी भांति १८ * बार इसी छन्द को पढ़ कर भूषणजी थक गए और १६ वीं बार आगंतुक (शिवाजी) की पुनर्बार प्रार्थना पर भी न पढ़ सके। तब शिवाजी ने अपना नाम बतला कर कहा कि हमने प्रतिज्ञा की थी कि जितनी

---

* कोई कोई कहते हैं कि १८ नहीं ५२ बार भूषण ने ५२ भिन्न भिन्न छन्द पढ़े और वे ही छन्द शिवाबावनी के नाम से प्रसिद्ध हुए पर यह नितान्त अशुद्ध है। (शिवाबावनी सम्बन्धी भूमिकांश देखिए)। कुछ लोग यह भी कहते है कि एक ही छन्द ५२ बार पढ़ा गया पर १८ बार ही पढ़ा जाना अधिक मान्य प्रतीत होता है। शिवाजी का दान निम्नलिखित छन्दो में वर्णित है जो उपरोक्त बड़े दान की सत्यता सिद्ध करते है–यथा शि० भू० छन्द १४०,१७१, १७५,२१५,३२६,२२१,२८०,२८३,३३६,३४० इत्यादि इत्यादि कहां तक लिखे ?

बार आप यह छुन्द पढ़ेंगे उतने ही लक्षमुद्रा, उतने हाथी और उतने ही ग्राम हम आपको देंगे, सो अधिक मिलना आपके भाग्य में न था। भूषणजी ने इतने ही पर पूर्ण सन्तोष प्रगट कर कहा कि अब विशेष मुझे क्या चाहिए? निदान इसी समय से शिवाजी के यहाँ जा वे राजकवि बने। सुनते है कि इस १८ लक्ष मुद्रा में से भूषण ने एक लक्ष का लवण अपनी भावज के पास भेज दिया था। इसी समय (सन् १६६७ ईसवी के अन्त) से ये महाशय धीरे धीरे सन् १६७३-७४ ईसवी (सम्वत् १७३०) तक "शिवराज भूषण" ग्रन्थ के छुन्द अलंकारों के हिसाब पर बनाते रहे। (इस विषय पर शिवराज भूषण सम्बन्धी भूमिकाश देखिए)

सन् १६७४ या ७५ ईसवी के आसपास भूषणजी कुछ दिनों को अपने घर लौटे और रास्ते में छत्रसाल बुंदेला के यहाँ पहुँचे। उन्होंने सम्भवतः छत्रसाल दशक के दो प्रारम्भिक दोहे एवं छुन्द नं० ३ इस अवसर पर पढ़ा और बड़े सम्मान के साथ वे कुछ दिन वहीं रहे। चलते समय छत्रसालजी ने भूषण के शिवाजीकृत सम्मान का ध्यान कर उनकी पालकी का डंडा स्वयं अपने कंधे पर रख लिया। तब तो भूषणजी अत्यन्त प्रसन्न हो चट पालकी से कूद पड़े और "बस महाराज! बस" कहते हुए दशक के सम्भवतः छुन्द नं० ४ व ५ एवं दो चार अन्य कवित्त जो अप्राप्य हैं तत्काल पढ़े। छुन्द नम्बर ३ में उन्होंने छत्रसालजी को "लाल छिति-

पाल" क्या ही ठीक कहा है क्योंकि उन महाराज की अवस्था उस समय केवल २४, २५ साल की थी। वैसे ही छन्द नं० ४ व ५ में भी किसी घटना विशेष की बात न कह कर यों ही छत्रसालजी की प्रशंसा की गई है। छत्रसाल ने तब तक कोई ऐसी बड़ी लड़ाई नहीं जीती थी जो सलहेरि परनालो इत्यादि युद्धों के द्रष्टा और वर्णनकर्ता भूषणजी की निगाह में जँचती। बुंदेला महाराज की उस समय भूषणजी ने छत्रसाल हाड़ा (महाराज बूँदी) से तुलना करके भी मानो प्रशंसा ही की है। क्योंकि तब तक वास्तव में वे ५२ युद्धों में सम्मिलित रहने और लड़ने वाले बीर बर हाड़ा महाराज के बराबर कदापि न थे, यद्यपि वे आगे चल कर बूंदीनरेश से बहुत अधिक बढ़ गए।

कुछ दिन अपने घर रह कर भूषणजी कमाऊं महाराज के यहां गए और स्फुट छन्द नं० ६ पढ़ा। महाराज ने समझा कि भूषणजी के सम्मान की जो बातें शिवाजी के सम्बन्ध में उन्होंने सुनीं वे शायद ठीक न होंगी, सो वे कविजी की वैसी खातिर बात किए बिना उन्हें एक लक्ष रुपए का दान देने लगे। तब भूषणजी ने कहा कि अब रुपए की चाह नहीं हम तो केवल यह देखने आए थे कि महाराज शिवराज का यश यहां तक पहुँचा है या नहीं। यह कह भूषणजी रुपया पैसा लिए बिना घर लौट आए। जान पड़ता है कि इसी प्रकार भूषण जी छत्रसालजी के यहां भी आए थे पर अभूतपूर्व

सम्मान से मुग्ध हो उन्हें शिवाजी के जीते हुए भी छत्रसाल को अपनी सरकार मानना ही पड़ा।

थोड़े दिनों बाद ये महाराज शिवाजी के यहाँ फिर गए और समय समय पर उनके कवित्त बनाते रहे जिनमें शिवा-बावनी के छन्द भी हैं। सम्भव है कि इन बीचों इन्होंने शिवाजी पर दो एक और ग्रन्थ भी बना डाले हों जिनका अब पता नहीं चलता।

सन् १६८० ईसवी में शिवाजी के स्वर्गवासी होने पर कदाचित छत्रसालजी के यहाँ होते हुए ये फिर घर लौट आए और उक्त छत्रसालजी के यहाँ आते जाते रहे।

सन् १७०७ ई० में जब शाहूजी ने दिल्लीश्वर की कैद से छूट कर अपना राज्य पाया तब भूषणजी अवश्य ही उनके यहां गए होंगे और सदा की भांति सम्मानित हुए होंगे। साल डेढ़ साल वहां रह कर भूषणजी फिर घर लौट आए और आनन्द से रहने लगे।

जान पड़ता है कि सन् १७१० ई० के निकट अपने अनुज मतिरामजी के कहने से ये महाशय बूँदी नरेश राव बुद्धसिंह के दरबार में गए और उनके वृद्ध प्रपितामह सुप्रसिद्ध महाराज छत्रसाल हाड़ा के दो छन्द (छ० सा० दशक, छन्द १ व २) और स्वयं राव बुद्ध का एक कवित्त (स्फुट नम्बर ३) पढ़ा। अवश्य ही जैसी खातिर बात बूँदी में मतिरामजी की होती थी उससे कुछ विशेष भूषणजी की हुई होगी पर भूषण

महाराज का चित्त तो बढ़ा हुआ था सो उन्हें वह खातिर कुछ जँची नहीं और वे असंतुष्ट रहे । यों तो भूषणजी वहीं कुछ कहे बिना न रहते (जैसा कि कमाऊं में किया था) पर मतिरामजी की हानि के विचार से कुछ न बोले और महेवा होते हुए छत्रसाल से मिलते घर लौटे। इसी मौके पर " और राव राजा एक मन मैं न ल्याऊं अब साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को " वाला छन्द (छ० सा० दशक नं० १०) बना। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि सन् १७०७ ईसवी में जाजमऊ का समर जीतने पर औरंगजेब के पुत्र बहादुरशाह बादशाह ने राव बुद्ध को "राव राजा" की उपाधि दी थी सो भूषणजी के इस उपरोक्त कवित्त में " राव राजा " शब्दों से राव बुद्ध का साफ इशारा है ! एवं वे शब्द किसी राव या राजा पर भी घटित हो सकते हैं। राव बुद्ध सन् १७०६ ई० के लगभग गद्दी पर बैठे थे।

जान पड़ता है कि मतिराम जी अपना सम्मान बढ़ाने के लिये ही भूषण जैसे राजसम्मानित एवं जगत्प्रसिद्ध कवि को अपनी सरकार में सहठ ले गए, नहीं तो प्रायः ७५ वर्ष की अवस्था में उस समय की तीन चार सौ मील की दुर्गम यात्रा करके भूषण जी बूँदी जाने का श्रम कदापि न उठाते। यह इस बात का भी प्रमाण है कि मतिराम अवश्य भूषण जी के भाई थे। राव बुद्ध हिन्दी के रसिक थे क्योंकि मतिराम जी इनके दरबार में रहते ही थे और इनके प्रपितामह के

अग्रज राव भाऊसिंह के यहां रह कर 'ललितललाम' बना चुके थे, एवं आगे चलकर कवीन्द्रजी ने भी राव बुद्ध की प्रशंसा में कई कवित्त कहे हैं पर तो भी भूषणजी राव बुद्ध की ख़ातिरबात से बिलकुल अप्रसन्न रहे। यहां तक कि इसके पश्चात् उन्होंने साफ़ कह दिया कि अब और राव राजा मन में भी न लाऊँगा! इससे स्पष्ट विदित होता है कि छत्रसाल बुन्देला ने लड़कपन के जोश में इनकी पालकी का डण्डा अवश्य कन्धे पर रखलिया होगा क्योंकि ये शिवाजी के भी सम्मानित थे और छत्रसाल शिवाजी को बहुत ही पूज्य दृष्टि से देखते थे जैसा कि लालकृत "छत्रप्रकाश" से विदित होता है। इसी छन्द में इन्होंने छत्रसाल के पहिले साहू को सराहने की प्रतिज्ञा की है और फिर ऐसे समय में जब यह स्वयं छत्रसाल के यहां प्रस्तुत थे। इससे स्पष्ट है कि साहूजी ने भी इनका पूरा सम्मान किया होगा। लगभग सन् १७१५ ई० में एक बार भूषणजी फिर साहूजी के दरबार में गए। इसी समय स्फुट छन्द नम्बर ७ बनाया गया था। यह छन्द उस समय का है कि जब साहूजी का राज्य भली भांति स्थापित हो चुका था और उन्होंने उत्तर का धावा किया था। यह छन्द मुद्रित प्रतियों में छपा है पर प्रायः लोग भ्रमवश इसे शिवाजी विषयक समझ बैठे हैं। यह अवश्य ही साहूजी के विषय में है। एक तो इसमें "साहू" (साहूजी) का नाम ही प्रस्तुत है और दूसरे शिवाजी के विषय में औरं-

ज़ेब के होते यह कदापि नहीं कहा जा सकता था कि "टक्कर लेवैया कोऊ वार है न पार है"। पर साहू जी के समय में ऐसा ही हो गया था। भूषणजी की कविता अथवा किसी अन्य प्रसंग से उनके इस समय के पीछे जीवित रहने का कोई प्रमाण नहीं मिलता है। सम्भव है कि उनके अन्य छन्दों अथवा ग्रन्थों से जो अभी हम लोगों ने नहीं देखे हैं उनके इस समय के पीछे भी जीवित रहने का पता लगे, परतु जब तक ऐसा पता नहीं लगता है तब तक हम यही समझते हैं कि भूषणजी सन् १७१५ ई० के गलभग १०२ वर्ष की अवस्था में स्वर्गबासी हुए होंगे। खेद का विषय है कि भूषणजी के घरेलू चरित्रों से हम नितान्त अनभिज्ञ हैं। उनके बिवाह अथवा पुत्रों पुत्रियों एवं मित्रों के विषय में हम कुछ भी नहीं कह सकते। केवल इतना कह सकते हैं कि इनका विवाह अवश्य हुआ था और ये पुत्रवान भी थे, क्योंकि सुना जाता है कि प्रसिद्ध दोहाकार वृन्द कवि एवं सीतलकवि इन्हीं के वंशधर थे और तिकवाँपुर में तहकीकात करने से विदित हुआ कि ज़िला फ़तेहपुर एवं कहीं मध्यप्रदेश में भूषणजी के वंशज अब भी वर्तमान हैं। पर इसका ठीक पता कुछ भी नहीं है। ये महाराज पूर्णतथा धन सम्पन्न थे और बड़े आदमियों की भाँति रहते थे। देश भर में और राजा महाराजों के यहाँ इनका सदैव बड़ा मान रहा। इनकी कविता से इतना और भी ज्ञात होता है कि इन्होंने देशाटन बहुत किया था

क्योंकि इनके छन्दों में सैंकड़ों देशों एवं तत्कालीन ऐतिहासिक मनुष्यों के नाम आए हैं। इस महाकवि की कविता से प्रगट होता है कि ये बड़े ही सत्यप्रिय और यथार्थ भाषी थे यहाँ तक कि इन्होंने शिवाजी की पराजय का भी वर्णन किसी न किसी रीति से कर ही दिया है और जहाँ शिवाजी ने कोई बेजा काम किया है उसे भी कह दिया है (देखिए शि० भू० छन्द नं० ६३, ६६, २१२, २१३, २५२)। भूषणजी को हिन्दू जातीयता का सदैव पूरा विचार रहता था। ये बड़े ही प्रभावशाली कवि हो गए हैं और इनका जैसा सम्मान अथवा धन किसी कवि ने अद्यापि उपार्जन नहीं किया है।

भूषणजी के प्रस्तुत ग्रन्थों में शिवराजभूषण, श्री शिवा बावनी, छत्रसालदशक तथा स्फुट कवित्त इस ग्रन्थ में दिए गए हैं। इनके ग्रन्थों से उस समय के राजाओं एवं मुगल साम्राज्य की भी दशा भली भांति विदित होती है। अतः हम सबसे प्रथम भूषण की प्रस्तुत कविता से उस समय का जो कुछ हाल ज्ञात होता है वह लिखते हैं। हर्ष का विषय है कि भूषणजी का वर्णन इतिहास के विरुद्ध नहीं है क्योंकि भूषण जी को इतिहास विरुद्ध बनाकर बातें लिखना पसन्द न था। केवल इनका लिखा हुआ हाल इतिहास से अधिक विस्तृत अवश्य है क्योंकि कवि जितने विस्तार और समारोह के साथ कोई घटना लिखेगा वैसा इतिहासकार नहीं करता। इसमें केवल सन् संवत का ब्योरा और घटनाओं

का क्रम हमने अपनी ओर से लिखा है शेष सब भूषण के छन्दों से लिखा गया है। भषणजी के लिखे अनुसार उस समय का इतिहास यों है।

सूर्य्यवंश पृथ्वी पर विख्यात है जिसमें परमेश्वर ने बार बार अवतार लिया। इसी वंश में एक बड़ा प्रतापी राजा हुआ। जिसने अपना सिर शङ्करजी पर चढ़ा कर अपने और स्ववंशजों के लिये सीसौदिया (हिन्दूपति महाराणा उदयपुर एवं नैपाल के राजा इसी उज्ज्वलवंश में हैं) की उपाधि प्राप्त की! उसी वंश में एक बड़ा पराक्रमी राजा माल मकरन्द हुआ जिसके वंशज राजा साह जी भौंसला हुए! साहजी बड़े दानी और वहादुर थे और उन्हीं के पुत्र महाराज शिवराज छत्रपति (शिवाजी) हुए जो श्रीशङ्कर जी के बड़े भक्त थे और जिन्हें शैव कथाओं के सुनने से बड़ा प्रेम था। वे बड़े ही उदार दानी थे एवं उनके साहस की कोई सीमा ही न थी। उस समय दक्षिण में आदिलशाही, कुतुबशाही, निज़ामशाही, इमादशाही और बरीदशाही नामक पांच * राजघराने शाह कहलाते थे। जिनके राजस्थान

* ये पांचो राज घराने दक्षिण की बहमनी राज्य के टूटने पर बने थे। बहमनी राज्य सन १३४७ ईसवी मे स्थापित हुआ था और १५२५ तक रहा। यह राज्य प्राय: वर्तमान हैदराबाद रियासत पर विस्तृत था। बीजापुर सन् १४८९ मे स्थापित हुआ और १६८८ मे औरंगज़ेब ने इसे छीन लिया। गोलकुण्डा सन् १५१२ ई० मे

यथाक्रम बीजापुर, गोलकुण्डा, अहमद नगर, एलिचपुर और बिदर थे। उत्तर में मुग़लों का सुविशाल साम्राज्य था। उस समय श्रीनगर, नैपाल, मेवार, ढुंढार, मारवाड़, बुन्देलखण्ड, झारखण्ड और पूर्व पश्चिम सब देशों के राजा अर्थात् राना, हाड़ा, राठौर और कछवाहे, गौर इत्यादि सब मुगलों से दबते थे और सब उनकी प्रजा के समान थे। वे राज्य तो

स्थापित हुआ और इसे भी औरंगजेब ने सन् १६८८ मे जीत लिया। अहमदनगर का राज्य सन् १४९० मे स्थापित हुआ और १६३६ ई० मे इसे शाहजहां ने जीत लिया। एलिचपुर सन् १४८४ मे स्थापित हुआ और १५७२ ई० मे मोग़ल राज्य मे मिला लिया गया। बिदर राज्य १४९८ मे स्थापित हुआ और १६५७ मे इसे औरंग़ज़ेब ने जीत लिया। इन सभो मे से बीजापुर और गोलकुण्डा प्रधान थे। शिवाजी के पिता शाहजी पहिले निज़ामशाही बादशाहो के यहा सर्व प्रधान कारबारी थे और शाहजहां से उन्होने घोर युद्ध किया था और क्रमशः कई बादशाहो को तख्त पर बिठा कर अपने ही बाहु और बुद्धि बल से शाहजहां को हैरान कर रक्खा था। तभी तो भूषणजी ने उन्हे 'साहिनिज़ामसखा' (शिव० भू० छन्द नं० ७) और "साहिन को सरन सिपाहिन को तकिया" (छन्द न० १०) कहा है। इसके बाद वे बीजापुर मे नौकर होगए और तजौर के निकटस्थ राज्य मे अपनी मृत्यु पर्य्यन्त गवर्नरी (शासन) करते रहे। पछि इनके द्वितीय पुत्र वेंकोजी तजौर के स्वतन्त्र राजा हो गए थे। उनके वंशधरो से यह राज्य उन्नीसवीं शताब्दी मे अँगरेजो ने छीन लिया। लार्ड डलहौसी ने तंजौर के राजा की पोलिटिकल पेन्शन भी बंद करदी।

अवश्य करते थे परन्तु अपनी स्वतन्त्रता खो बैठे थे। ऐसे भयावने समय में शिवाजी ने मुसलमानों का सामना करने का साहस किया। उसकी चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने की उच्च अभिलाषा थी। उसके परिश्रम का यह फल हुआ कि उसने बाल्यावस्था ही में बीजापुर, गोलकुण्डा को जीतकर युवावस्था में दिल्लीपति को पराजित किया और उसके राज्य का प्रजा तथा हिन्दू समाज पर यह प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा कि बेद पुराणों की चर्चा एवं द्विजदेवों की अर्चा की प्रथा फिर लोक में फैल गई। शिवाजी ने प्रथम बीजापुर के बादशाह से लड़ना प्रारम्भ किया। सन् १६५५ में उन्होंने चन्द्रावल (चन्द्रराव मोरे) को मारकर जावली ज़ब्त कर लिया। फिर ये और छोटे छोटे दुर्ग लेते रहे। सन् १६५८ में औरंगज़ेब अपने भाई दारा एवं मुराद को मार शाहशुजा को दिल्ली भगा और अपने पिता शाहजहां को कारागार में डाल-कर राज्य करने लगा। सन् १६५६ में आदिलशाह ने शिवाजी से लड़ने को एक बड़ी सेना के साथ अफ़ज़ल ख़ाँ को भेजा। यह स्थिर हुआ कि शिवाजी अफ़ज़ल ख़ाँ से अकेले मिले। इस अवसर पर अफ़ज़ल ने दग़ा करके शिवाजी पर कटार का वार किया। शिवाजी पहिले से ख़ाँ को मारना चाहते थे सो उन्होंने ख़ाँ का मुहँ लोहे के बने हुए शेर के पंजे से नोचलिया और फिर गड़बड़ में खड्ग से उसे मार डाला। फिर उसकी सब सेना को भी शिवाजीने परास्त किया। यह

सुनकर उसी सन् में बीजापुराधीश ने रुस्तमे ज़मां को भेजा परन्तु शिवाजी से उसे भी पराजित होना पड़ा। सन् १६६१ में शिवाजी ने शृंगापुरी को जीत लिया। १६६२ में (अपने पिता शाहजी की सम्मति से) उसने रायगढ़ * को अपना निवासस्थान स्थिर किया और राजगढ़ को छोड़ दिया। इस समय वह दक्षिण के सब किले जीत चुका था। शिवाजी की सभा बहुत ही उत्तम और दुर्ग बड़ा ऊँचा तथा पुष्ट था। शिवाजी ने बहुत से दुर्ग बनवाए और अपना राज्य अनेकानेक विजयों द्वारा बहुत बढ़ाया।

सन् १६६३ में मुग़लों ने इनका बल बहुत बढ़ते देखकर

---

* भूषणजी ने रायगढ़ का ही हाल लिखा है परन्तु उसका नाम राजगढ़ लिखा है। शिवाजी सन् १६४७ से १६६२ तक राजगढ़ मे रहे थे और १६६२ ई० से मरण पर्य्यन्त (१६८०) रायगढ़ में रहे। भूषणजी ने लिखा है कि शिवाजी ने दक्षिण के सब दुर्ग जीत कर राजगढ़ में बास किया (शि० भू० छन्द नं० १४) फिर शिवराज भूषण ग्रन्थ मे राजगढ़ का बास वर्तमान काल मे वर्णित है। यह ग्रन्थ सन् १६६७ मे या १६६८ में प्रारम्भ और सन् १६७३-७४ में समाप्त हुआ था जब शिवाजी राजगढ़ में न थे। इसीसे विदित है कि "राजगढ़" लिखने से भूषण का रायगढ़ का प्रयोजन था, नहीं तो उनका राजगढ़ सम्बन्धी समस्त वर्णन अशुद्ध हो जाता है। अतः यही मानना चाहिए कि य और ज मे भेद न मान कर भूषण ने रायगढ को राजगढ़ लिखा है।

जोथपुर के महाराजा जसवन्तसिंह और शाइस्ता ख़ां को इनके विरुद्ध एक बड़ी भारी फौज के साथ भेजा। शाइस्ता ख़ां एक लाख फ़ौज के साथ पूना में आकर ठहरा। शिवाजी ने उसे बड़ी बुद्धिमानी से परास्त किया। फिर अहमदनगर के युद्ध में उसने नौशेरी ख़ाँ (ख़ानेदौरां) को हराया। सन् १६६४ में इन्होंने मुग़लों के राज्य में घुस कर सूरत को लूटा (और फिर मक्का जानेवाले बहुत से सैय्यदों की नौकाएं लूट लीं और सैय्यदों को दण्ड लेकर छोड़ा) इस पर औरंगज़ेब ने बड़ा क्रोध करके एक बड़ा दल जैपुर के महाराजा जैसिंह के आधिपत्य में शिवाजी से लड़ने को भेजा। अब शिवाजी को बड़ा संकट पड़ा क्योंकि वे हिन्दू का ख़ून बहाना नहीं चाहते थे। अतः सन् १६६६ में उन्होंने जैसिंह को कुछ गढ़ दिए और फिर वे दिल्ली को भी गए। औरंगज़ेब ने अभिमान करके इन्हें पंजहज़ारी सरदारों में खड़ा किया। इस पर इन्होंने शाह को सलाम नहीं किया और मुच्छ पर ताव देकर अपनी स्वतन्त्रता एवं क्रोध प्रकाश किया। इनके रोब से दरबार में सन्नाटा पड़ गया। इनके हाथ में कोई अस्त्र न था नहीं तो वहीं मार काट होने लगती। औरंगजेब गुस्लख़ाने * में जा छिपा तब उसके प्राण बचे। फिर तरकीब से शिवाजी दिल्ली से निकल आए और अपना राज्य भोगने लगे।

---

* यह गुस्लख़ाने का वर्णन इतिहासों मे नहीं है, परन्तु भूषणजी ने इसे कई बार कहा है।

सन् १६६६ में औरंगज़ेब ने हिन्दुओं के असंख्य मन्दिर खोदवाए, मथुरा को ध्वस्त करके देहरा तोड़वा डाला और स्वयं काशी विश्वनाथ के मन्दिर तक को नष्ट करके उसके स्थान पर मसजिद बनवायी (शिवा० बा० छन्द नं० २०, २१, २२ देखिए) † सन् १६७० में शिवाजी ने फिर सूरत लूटा। उसी साल उसने उदैभान राठौर को मार कर सिंहगढ़ मुग़लों से छीन लिया। यह दुर्ग सन् १६६६ में शिवाजी ने जैसिंह को दिया था।

मुग़लों ने शिवाजी की यह प्रचण्ड धृष्टता देख बड़ा क्रोध करके एक बिकराल सेना दिलेरख़ां और इख़लासखां के आधिपत्य में भेजी परन्तु सन् १६७२ ई० में शिवाजी ने सलहेरि पर इस बृहत् सेना को पूर्णतया परास्त किया। इस युद्ध में दिल्ली के तेंतीस बड़े सेनापति इन्होंने पकड़ लिए और कोटा के नृप कुमार किशोरसिंह, मोहकमसिंह, भाऊ-सिंह, करणसिंह, सफ़दरजंग, तलबख़ां इत्यादि को परास्त करके समस्त दिल्ली दल का बड़ा ही विकराल क़तले आम किया। इसी युद्ध में कितने ही रुहेले, सैय्यद, पठान, चन्दा-वत आदि मारे गए। तदन्तर दिलेरख़ां को पराजित करके

---

† इस समय शिवाजी और महाराणा राजसिंह ने औरंगज़ेब को जो पत्र लिखे हैं वे देखने योग्य है। ग्रॅट डफ कृत मरहटों के इतिहास और टाड राजस्थान में उनके अनुवाद दिए हुए हैं।

शिवाजी ने रामनगर एवं जवार पर बैरियों को परास्त किया और गुजरात को भी नीचा दिखाया।

इसके पश्चात् इसने सन् १६७३ में मृत आदिलशाह के नाबालिग़ पुत्र के पालक एवं समस्त राज्य के प्रबन्धकर्त्ता ख़वासख़ां से कुछ देश मांग भेजे परन्तु वज़ीरों ने न दिया। तब दो ही दिनों में दौड़कर इसने परनाले का क़िला छीन कर करनाटक की सरहद्द तक सब देश पददलित किए। इस पर ख़वासख़ां ने बहलोलख़ां को इससे लड़ने को भेजा परन्तु उसे भी मरहटों ने घेर लिया और दंड लेकर ही जाने दिया। इस समय बीजापुर समान शत्रु नहीं रहा था, इसी लिये भूषण लिखते हैं "बापुरो एदिलसाहि कहां कहां दिल्लि को दामनगीर शिवाजी।"

* इस प्रकार अपना बल भली भांति से स्थापित करके शिवाजी सन् १६७६ से ७८ तक करनाटक वश करने में लगे रहे। ऐसी प्रचण्ड और प्रभाव पूरित इनकी कोई चढ़ाई नहीं हुई थी और इसका वर्णन भी कवि ने बड़े

---

* इसी समय सन् १६७४ मे शिवाजी ने अपना अभिषेक किया और अपने नाम का सिक्का चलाया। सन् १६६७ ई० मे प्रसिद्ध छत्रसाल बुन्देला शिवाजी से मिलने आए थे और इनसे प्रोत्साहित होकर मुगलों से लड़ने लगे थे। सन् १६७४ तक वे महाराज भी कई छोटे छोटे दलों को जीत बुन्देलो का दल जोड़ मुगलों से बडे बल के साथ लड़ने लगे थे।

उत्कृष्ट छन्दों में किया है (शि० बा० के छन्द नं० ४२, ४५, ४६ देखिए)।

इस समय इनकी ऐसी धाक बँध गई थी कि ईरानी फिरंगानेवाले तथा पुर्तगालबासी तक इन महाशय को नज़रें भेजते थे। बीजापुर एवं गोलकुण्डावाले इनसे पीछे दबते थे (बरन पांच लक्ष और तीन लक्ष रुपये सालाना कर भी देते थे), औरङ्गज़ेब का राज्य नर्म्मदा के उत्तर तक रह गया था। इसी समय भूषणजी ने औरंगज़ेब को ललकारा था (शि० बा० नं० ३६ देखिए)। शिवराज के प्रयत्नों का फल स्वरूप भूषण ने यह यथार्थ छन्द कहा है "बेद राखे बिदित" इत्यादि (शि० बा० नं० ५१ देखिये)। भूषणजी का लिखा हुआ इतिहास इसी जगह समाप्त होता है †

अब हम पाठकों के लाभार्थ उस समय के ऐसे इतिहास को भी सूक्ष्मतया लिखते हैं जिससे उन्हें भूषण के काव्य का पूर्ण प्रभाव समझने में सुभीता हो।

शिवाजी का जन्म सन् १६२७ ई० में हुआ था। इनकी माता का नाम जीजी बाई था। शिवाजी के जन्म के पश्चात् जीजी बाई और शाहजी में कुछ अनबन हो गई। इस कारण शाहजीने अपना दूसरा विवाह कर लिया और वे अपनी नवीन

---

† पाठक गण देख सकते है कि ऊपर के इतिहास में "काव्य" की कुछ चड़क भड़क छोड़, प्रायः सभी बाते सत्य है।

स्त्री के साथ तंजूर में रहने लगे। इसी स्त्री के पुत्र वेंकाजी थे। जीजी बाई अपने पुत्र शिवाजी के साथ शाहजी के मुख्य निवासस्थान पूना में रहती रहीं और शाहजी की पैत्रिक जागीर का प्रबन्ध करती रहीं। इस समय शाहजी ने दादाजी सोनदेव को शिवाजी के पालनार्थ एवं पैत्रिक संपत्ति के रक्षणार्थ नियत कर रक्खा था। बालक शिवाजी पढ़ने लिखने में जी नहीं लगाता था परन्तु अस्त्रविद्या के सीखने एवं दौड़ धूप के कामों में अधिक उत्साह रखता था। उसका जी गौवों ब्राह्मणों और देवालयों की बुरी दशा देख मुसल्मानों की ओर से बहुत हट गया था और वह बाल्यावस्था से ही हिन्दूराज्य स्थापित करने और म्लेच्छों को मार भगाने के स्वप्न देखने लगा था। * शाहजी मुसल्मानों के नौकर थे, अत उन्हें शिवाजी का यह हाल सुनकर बड़ा भय उपस्थित हुआ और उन्होंने दादाजी से इसके निषेध करने को लिख भेजा परन्तु पिता और पालक दोनों के निषेध करने पर भी बालक शिवाजी ने अपना ढंग नहीं बदला। वह क़िलेदारों से एक एक करके दुर्ग लेने लगा। बड़ा आदमी होते हुए भी छोटे छोटे लोगों के यहां तक यह चला जाता था और इसी लिये वे लोग इसे बहुत चाहने लगे और इसके सच्चे चित्त से अनुयायी हो गए। इसी समय दादाजी सोनदेव

---

* वह समय ही ऐसा अनिश्चित था।

मृतशय्या पर पड़े और मरने के प्रथम उन्होंने शिवाजी को हृदय से लगा कर उसे प्रोत्साहित किया।

इसी समय से शिवाजी और भी साहस के काम करने लगा। वह आदिलशाह से खुल्लम खुल्ला लड़ने में प्रवृत्त हुआ यद्यपि उस समय भी शाहजी आदिलशाह के ही नौकर थे। अन्त में आदिलशाह ने शिवाजी के विरोध में शाहजी की भी गुप्त सम्मति का भ्रम करके उन्हें कारागृह में डाल दिया परन्तु शिवाजी ने शाहजहाँ की नौकरी करना स्वीकार करके उसके दबाव से अपने पिता को बीजापुर के कारागार से छोड़वा लिया। इसके कुछ पीछे आदिलशाह जान गया कि शिवाजी अपने बादशाह ही का नहीं वरन अपने पिता का भी बिरोधी है अतः उसने शाहजी को फिर तंजौर में भेज दिया। शिवाजी ५३ वर्ष की अवस्था में सन् १६८० ई० में स्वर्गवासी हुए। किसी किसी ने शिवाजी को सुलंकी कहा है परन्तु सुलंकी अग्निवंशी हैं और शिवाजी सूर्य्यवंशी थे।

इसी सन् में उदयपुरके महाराणा राजसिंह ने मुग़लों की अधीनता को लात मारकर औरंगजेब का सामना करके चार घोर युद्धों में उसे परास्त किया। प्रथम युद्ध नालघाटी के पास हुआ जिसमें मुग़लों की पचास हज़ार सेना औरंगजेब के पुत्र अकबर के साथ थी। दूसरी लड़ाई देसौरीघाटी के आगे हुई; उसमें भी मुग़लों की उतनी ही सेना शाहज़ादा अकबर को बचाने गई थी। तीसरे युद्ध में स्वयं औरंगज़ेब शाह-

ज़ादा आज़म के साथ मुग़लों का मुख्य दल लिए अकबर और दिलेरख़ां की बाट जोहता था। इस तीसरे युद्ध में औरंगज़ेब को बड़ी ही कातरता से भागना पड़ा और शाही झण्डा, हाथी और साज सामान राणाजी के हाथ लगा। जब औरंगज़ेब भागकर अजमेर पहुँचा तब उसने वहाँ से ख़ान रुहेला को बारह हज़ार सेना के साथ साँवलदास से लड़ने भेजा, परन्तु यह दल भी पुरमंडल में पराजित हुआ। इसी समय पर राणाजी ने अपने प्रधान अमात्य दयालसाह को भेजा और उन्होंने मालवा मे नर्म्मदा और बेतवै तक का देश लूटा। फिर सारंगपुर, देवास, सारोंज, मण्डी, उज्जैन और चन्देरी भी लूटे गए। इसी समय उसने अपना दल महा-राणा के बड़े पुत्र जैसिंह से मिलाकर शाहज़ादा आज़म को चित्तौर के समीप परास्त किया। तब महाराणा के द्वितीय पुत्र भीम ने अपना दल जोधपुर के राठौरों के दल से मिला कर शाहज़ादा अकबर और तहौवरख़ां को गनोरा पर हराया। इस प्रकार मुग़लों की प्रचंड हार से प्रोत्साहित होकर सिसो-दिया और राठौरों ने शाहज़ादा अकबर को अपनी ओर मिला कर औरङ्गज़ेब को तख़्त से उतार देने का प्रबन्ध किया परन्तु दुर्भाग्य वश इनको यह सन्देह हो गया कि अकबर अपने पिता से मिला हुआ है; अतः जीत जिताकर वे अपने इरादे से हट गए और औरङ्गज़ेब बच गया।

इस युद्ध में सिसौदिया और राठौरों ने मिलकर औरंग-

ज़ेब से युद्ध किया। राठौरों के मिलने का यह कारण था कि महाराजा जसवंत सिंह भीतरी सूरत से औरंगज़ेब के घोर शत्रु थे परन्तु दिखाने को उससे मिले हुए थे। जब ये महाराज मुग़लों की ओर से सन् १६६३ ई० में शाइस्ताख़ां के साथ शिवाजी से लड़ने गए थे तब शिवाजी से मिलकर इन्होंने शाइस्ताख़ा के दल की दुर्गति करा डाली थी। इसी प्रकार शाहशुजा से मिलकर इन्होंने औरंगज़ेब को धोखा दिया था। इन कारणों से औरंगज़ेब इनसे बहुत कुढ़ता था परन्तु इनसे खुल्लम खुल्ला लड़ना अच्छा नहीं समझता था। इसी कारण उसने इन्हें काबुल में लड़ने के लिये भेज दिया और वहां जब ये महाराजा सन् १६८० में मर गए तब उसने राठौरों पर क्रोध प्रकट किया। महाराजा जसवन्त सिंह के सब पुत्र मर चुके थे, केवल एक कई मास का लड़का जो काबुल में पैदा हुआ था जीवित था। जब राठौर लोग काबुल से लौट कर दिल्ली आए तब औरंगज़ेब ने उन्हें घेर लिया और उस लड़के सहित उन्हें मार डालने का पूर्ण प्रयत्न किया परन्तु राठौरों ने उस बच्चे को किसी प्रकार बचा लिया और मुग़लों से लड़ते भिड़ते वे जोधपुर जा पहुँचे। मुग़लों ने उनका पिंड जोधपुर में भी न छोड़ा और प्रायः समस्त मारवाड़ पर अपना दख़ल जमा लिया परन्तु दुर्गादास के आधिपत्य में राठौर लोग अपने बालक महाराज को पहाड़ों में छिपाए हुए औरंगज़ेब से लड़ते रहे। यही बालक समय पाकर राठौरों का प्रसिद्ध और

प्रतिभाशाली अजीतसिंह नामक महाराजा हुआ। बहुत वर्ष मुग़लों से लड़कर अजीत ने अपना राज्य फिर पाया था, इसी कारण राठौर लोग महाराणा के साथ मुग़लों से लड़े थे। राठौरों का यह युद्ध सन् १७१० ई० तक चलता रहा था।

जब क्षत्रियों ने अकबर को छोड़ दिया तब अपने पिता से सिवा प्राणदण्ड के और किसी बात की आशा न होने के कारण वह फिर राठौरों की शरण में गया। इसपर दुर्गादास बालक अजीत को अपने भाई के साथ छोड़कर अकबर को लेकर दक्षिण चला गया। अकबर के दक्षिण निकल जाने से औरंगज़ेब को बड़ा भय हुआ और उसने महाराणा राजसिंह से सन्धि करके दक्षिण जाने का दृढ़संकल्प कर लिया। अतः वह अपने दल का मुख्यांश लेकर दक्षिण चला गया और इधर छत्रसाल बुन्देला से लड़ने को तहौवरख़ां को आज्ञा देता गया। अकबर औरंगज़ेब के दक्षिण जाने से फ़ारस भाग गया; तब औरङ्गजेब ने बीजापुर और गोलकुण्डा पर चढ़ाई करके दो साल के युद्ध में सन् १६८८ ई० में उन्हें स्ववश कर लिया। सन् १६८९ में उसने मरहटों पर धावा करके शिवाजी के पुत्र शम्भाजी को भी बन्दी कर बड़ी निर्दयता से मरवा डाला। शम्भाजी के पुत्र साहूजी को भी पकड़ लिया था परन्तु उसके एक छोटे बच्चे होने के कारण बध न करके उसे अपने यहां के एक महाराष्ट्र ब्राह्मण के सुपुर्द कर दिया। साहूजी का नाम कुछ और था परन्तु औरंगज़ेब ही ने उसका नाम साहू यह

कह कर रक्खा कि इस बच्चे के पिता और पितामह चोर थे परन्तु यह चोर नहीं साहु है। मरहटों ने इस समय भी धैर्य्य नहीं छोड़ा और शिवाजी के द्वितीय पुत्र राजाराम को राजा बनाकर वे मुग़लों से लड़ने लगे। लड़ते लड़ते यहां से वहां और वहां से यहां दौड़ते हुए राजाराम यथासाध्य स्वतन्त्रता की रक्षा करते रहे। मरहटे मुग़लों की बृहत सेना से सन्मुख नहीं लड़ सकते थे परन्तु इधर उधर लगे रहते थे और छोटे छोटे दलों को छिन्न भिन्न करके लूट लेते थे और सेना देखकर भाग जाते थे। इनका किसी ख़ास स्थान पर राज्य नहीं रह गया था परन्तु जहां मुग़ल नहीं होते थे वहीं यह लूट मार करते और वहीं के राजा से देख पड़ते थे। एक बार सन् १६६५ में भीमा नदी ने बढ़ कर शाह के १२००० दल को डुबो दिया। औरङ्गज़ेब ने सत्ताइस वर्ष उत्तर की भी कुल आय इसी दक्षिण के युद्ध में व्यय की परन्तु फिर भी मरहठों को वह ध्वस्त न कर सका। एक बार इसकी फ़ौज गड़बड़ दशा में थी तो मरहठों ने यकायक धावा करके उसे पूर्ण पराजय देदी। औरंगज़ेब कुछ आगे था और उसके पास बहुत ही कम मनुष्य थे परन्तु दुर्भाग्यवश उसकी यह दशा मरहठों पर विदित न थी नहीं तो वे उसे तुरन्त बन्दी कर लेते। इन आपत्तियों से मुग़ल सेना बहुत ही विकल और हताश हो गई और मरहठों के युद्ध-कौशल से मुग़लविजय की आशा जाती रही। दिनोंदिन उनका बल मन्द पड़ता जाता था और

मरहठों की विजय वैजयन्ती दैदीप्यमान होती जाती थी।

औरंगज़ेब ने देखा कि यदि अब यहां और रहूँगा तो समस्त सेना पराजित हो जायगी और मैं पकड़ लिया जाऊँगा। यह सोच कर वह अहमदनगर चला गया और इन आपत्तियों से उसका हृदय ऐसा विदीर्ण हो गया कि ८८ वर्ष की अवस्था में वह सन् १७०७ में परलोक वासी हुआ। उसने अपने पुत्रों में बखेड़ा बचाने के विचार से राज्य के तीन भाग कर दिए परन्तु शाहज़ादों ने यह न माना। दक्षिण में मँझला शाहज़ादा आज़म औरंगज़ेब के साथ था। उसने अपने बड़े भाई मुअज्ज़म से जो दिल्ली में था युद्ध करना निश्चय किया। इस कारण उसने मरहठो में झगड़ा पैदा कर देने के विचार से साहूजी को छोड़ दिया परन्तु मरहठों ने बिना किसी विशेष झगड़े के साहूजी को अपना महाराज मानलिया और राजाराम के सन्तान कोल्हापुर के महाराज हो गए। उनके वंशधर अब भी कोल्हापुर के महाराज हैं। आज़म और मुअज्ज़म का सन १७०७ ई० में जाजऊ पर घोर युद्ध हुआ जिसमें आज़म मारा गया और मुअज्ज़म बहादुरशाह की उपाधि धारण करके बादशाह हुआ। औरंगज़ेब के तीसरे पुत्र कामबख्श ने भी बहादुरशाह का सामना किया, परन्तु वह भी हार गया और फिर युद्ध के घावों से मर भी गया। मुग़लों के इस घरेलू बखेड़े के कारण उनकी शक्ति बहुत मन्द पड़ गई थी और अच्छा समय था कि मरहठे अपना बल

बढ़ाते, परन्तु साहूजी स्वयं लड़कपन से मुग़लों के यहाँ रहा था अतः वह बड़ा आलसी और आरामपसंद था। यह समझ पड़ने लगा कि महाराष्ट्र-शक्ति घरेलू झगड़ों और अकर्मण्यता के कारण नष्ट हो जायगी परन्तु इसी समय (१७१२ ई० में) भाग्य वश साहू जी ने बालाजी विश्वनाथ को अपना पेशवा बनाया। ये महाराज बड़े ही बुद्धिसम्पन्न व्यक्ति थे और हर बात में प्रवीण थे। इन्हीं के प्रयत्नों से महाराष्ट्र-शक्ति मुग़लों के अधःपतन के साथ ही साथ ऐसी बढ़ी कि मरहठों का पूरा साम्राज्य स्थापित हो गया। इन्होंने सन १७१६ ई० के लगभग दिल्ली पर आक्रमण करके बादशाह फ़र्रुख़सियर को पदच्युत किया और दूसरे बादशाह को गद्दी पर बिठाया। इनके गुणों और कर्मों से मोहित होकर साहूजी ने पेशवा का पद इनके वंश में स्थिर कर दिया। पेशवा बालाजी विश्वनाथ सन १७२० ई० में स्वर्गवासी हुए और बाजीराव पेशवा नियत हुए।

बुँदेलों का इतिहास।

सूर्य्यवंश में रामचन्द्र और तत्पुत्र कुश के वंश में काशी और कन्तित के गहिरवार राजा हुए। इस वंश का पूर्ण वर्णन सब पूर्व पुरुषों के नामों समेत लाल कवि ने अपने छत्रप्रकाश नामक ग्रन्थ में किया है। इसी वंश में महाराज पञ्चमसिंह उत्पन्न हुए। उनके चारों भाइयों ने उनका राज्य छीन लिया

और वे विन्ध्याचल पर जाकर विंध्यवासिनी देवी की उपासना करने लगे। एक दिन वे अपना ही बलिदान करने को प्रस्तुत हुए। कहा जाता है कि ज्यों हीं उन्होंने अपने एक घाव लगाया था कि देवीजी ने प्रगट होकर उनका हाथ पकड़ लिया और उन्हें राज्य मिलने का वरदान दिया। उसी समय देवी की कृपा से उनके सिर से जो घाव द्वारा रक्त-बिन्दु गिरा था उससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम बुंदेला पड़ा। अस्तु, जो कुछ हो,

बुँदेला का वंश इस प्रकार चला।

सन् १६२७में चम्पतिराय और वीरसिंह देव शाहजहाँ से लड़ने लगे। चम्पतिराय का बड़ा पुत्र सारबाहन मुग़लों द्वारा मारा गया। इस बात का चम्पतिराय को बड़ा दुःख हुआ। इसी समय चम्पतिराय की रानी को स्वप्न हुआ

रामसिंह
|
रामचन्द्र
|
मेदिनीमल
|
अर्जुनदेव
|
मलखान
|
रुद्रप्रताप
| (ओरछा बसाया)

भारतीचन्द्र | मधुकरशाह | इन्द्रजीत | उदयाजीत (महोवाजीता)

उदयाजीत (महोवाजीता)
|
प्रेमचन्द्र
|
भागवतराम
|
कुलमंडन
|
चम्पतिराय
|
छत्रशाल
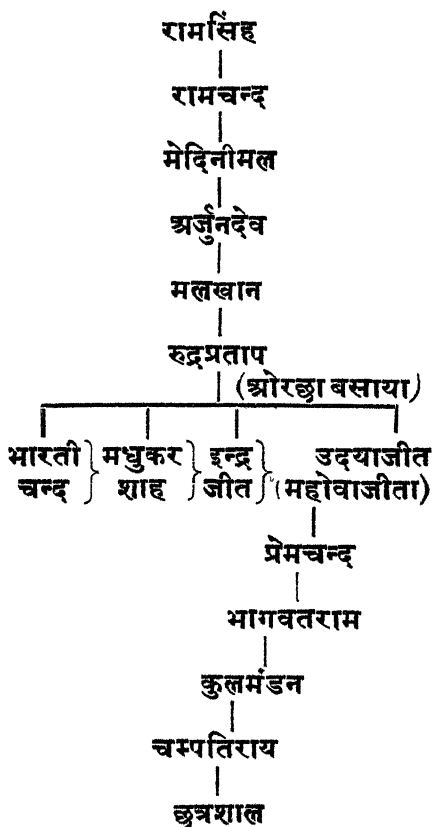
कि मानो सारवाहन कहता है कि मैं फिर तेरी सौति की कोख से पैदा होकर मुग़लों से अपना बैर लूँगा। कुछ दिनों में उनके छत्रसाल १६५०, ई० में उत्पन्न हुए।

शाहजहाँ ने चम्पतिराय पर महावतखाँ, खानजहाँ और अब्दुल्ला के आधिपत्य में तीन सेनाएँ भेजीं। उस समय चम्पति पहाड़ों में छिपा रहा, परन्तु उनके कुछ हटते ही फिर निकल कर उनकी छोटी छोटी टुकड़ियों को उसने हराया। अन्त में उन सभों को एक साथ ही बड़े विकराल युद्ध में ध्वस्त करके उसने उनकी सेना को खूब ही काटा। शाहजहाँ ने फिर एक सेना भेजी तब चम्पतिराय ने परास्त होकर बादशाह की सेवा स्वीकार कर ली और तीन लाख की मालगुज़ारी पर कोंच

का पर्गना पाया। एक बार चम्पतिराय दारा के साथ काबुल में लड़ने गए। वहाँ उन्होंने बड़ी बीरता दिखाई परन्तु दारा के चित्त में हर्ष के स्थान पर चम्पति से ईर्षा उत्पन्न हुई, यद्यपि चम्पति ही के कारण उन्हें विजय प्राप्त हुई थी। तब दारा ने ओड़छे के राजा पहाड़सिंह को नौ लाख की मालगुज़ारी पर कौंच का परगना दे दिया। इस कारण चम्पति और दारा में विद्रोह हो गया। इसके थोड़े ही दिन पीछे दारा और औरंगजेब का राज्यार्थ सन १६५८ में धौलपुर में घोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में चम्पतिराय ने औरंगजेब का साथ दिया और उसकी सेना के हरौल में रह कर वे लड़े। दारा के हरौल में बूँदी नरेश हाड़ा छत्रसाल थे। इसमें दारा की पराजय हुई और छत्रसाल हाड़ा घोर युद्ध करके मारे गए। इसी युद्ध का वर्णन भूषण ने छत्रसाल दशक के प्रथम दो छन्दों में किया है। इस युद्ध के फलस्वरूप औरंगजेब ने चम्पतिराय को बारह-हज़ारी का मनसब और ऐरछ, शहज़ादपुर, कौंच और कनार जागीर में दिया। तब चम्पति अपने घर चले आए। कुछ दिनों में औरंगजेब ने कहला भेजा कि अगर घर में बैठे रहोगे तो मंसब घट जायगा और नुक़सान उठाओगे। इस बात पर चम्पतिराय को बड़ा क्रोध चढ़ा और ये महाराज मुग़लों से लड़ने लगे। मुग़लों के आक्रमण से चम्पति को सब राजपाट छोड़कर भागना पड़ा। ये अपनी बहिन के यहाँ बीमारी की दशा में गए परन्तु जब

इन्हें ज्ञात हुआ कि इनकी बहिन के नौकर इन्हें पकड़ कर मुग़लों के यहाँ भेजा चाहते हैं तब सन १६६४ ई० में चम्पतिराय ने आत्महत्या कर ली ।

इसी समय से छत्रसाल को अपने पिता का बदला लेने और अपना खोया हुआ राज्य फिर प्राप्त करने की प्रबल इच्छा हुई । पहिले इन्होंने जैसिंह के नीचे मुग़लों की सेवा कर ली और देवगढ़ के घेरा करने में बड़ी बहादुरी से ये घायल हुए, पर अच्छा सम्मान न होने से इन्होंने सेवा छोड़ कर शिवाजी से मिलना निश्चय किया क्योंकि इनकी समझ में मुग़लों से

"ऐंड़ एक शिवराज निबाही । करै आपने चित की चाही ॥
आठ पातसाही झकझोरै । सूबन बाँधि दंड लै छोरै" ॥

(लालकृत छत्रप्रकाश)

इन्होंने शिवाजी से मिलकर अपना सब हाल कहा तो,

"सिवा किसा सुनि कै कही तुम छत्री सिरताज ।
"जीत आपनी भूमि को करौ देस को राज ॥
"करो देश को राज छतारे । हम तुमतें कबहूं नहिं न्यारे ॥
"तुरकन की परतीति न मानौ । तुम केहरि तुरकन गज जानौ ॥
"हम तुरकन पर कसी कृपानी । मारि करैंगे कीचक घानी ॥
"तुमहूँ जाय देश दल जोरौ । तुरुक मारि तरवारिन तोरौ ॥
"छत्रिन की यह वृत्ति सदाई । नित्य तेग की खायँ कमाई ॥
"गाय वेद बिप्रन प्रतिपालैं । घाव ऐंड़धारिन पर घालैं ॥

"तुम हौ महाबीर मरदाने। करि हौ भूमि भोग हम जाने॥
"जो इतही तुम को हम राखैं। तौ सब सुजस हमारो भाखैं॥
"ताते जाय मुगल दल मारो। सुनियेश्रवननिसुजसतिहारो॥
"यह कहि तेग मँगाय बँधाई। वीर बदन दूनी दुति आई"॥

(लालकृत छत्रप्रकाश)

शिवाजीके दिल्लीसे लौटने से कुछ ही दिन पीछे सन् १६६७ में छत्रशाल उनसे मिले थे। शिवाजीसे इस प्रकार प्रोत्साहित होकर छत्रशाल अपने देश में आए और सेना एकत्रित करके मुग़लों से लड़ने लगे।

सन् १६७१ ई० के लगभग इन्होंने बहुत सी लड़ाइयाँ जीत कर गढ़ाकोटा का क़िला लेलिया और क्रमशः अपना प्रभुत्व प्रायः समस्त पश्चिमी बुन्देलखंड पर जमा लिया। जब इन्हों-ने दक्षिण से जाता हुआ सौ गाड़ियों भर शाही सामान लूट लिया तब औरंगज़ेब ने बड़ा क्रोध करके तहौवरख़ां को एक बडी सेना लेकर भेजा पर सिरावा के युद्ध में छत्रशाल ने उसकी सारी सेना काट डाली। उसने दूसरी सेना लेकर आक्रमण किया और फिर (सन १६८० में) पराजित हुआ। तदनन्तर छत्रशाल ने अनवरख़ां, सदरुद्दीन और हमीदख़ां को परास्त किया और बुन्देलखंड के उन राजाओं को भी जो इन का साथ नहीं देते थे ख़ूब सताया। सन् १६९० में औरंगज़ेब ने एक बृहत सेना के साथ अब्दुस्समद को भेजा, परन्तु छत्रशाल ने बेतवै नदी के किनारे उसे भी पराजित किया।

तब बहलोलख़ां गवर्नर और जगतसिंह ने छत्रशाल पर धावा किया परन्तु जगतसिंह मारा गया और बहलोल को भागना पड़ा। बहलोल ने मारे लज्जा के आत्मघात कर डाला। तदनन्तर छत्रशाल ने मुरादख़ां को हराया और फिर दलेलख़ां को भी पराजित किया। पीछे छत्रशाल ने मटौंध को घेर कर जीत लिया। फिर सैयद अफ़ग़ान के आधिपत्य में एक बृहत सेना आई। इस सेना से एक बार छत्रशाल हार गया, परन्तु पुनः सेना एकत्रित करके बुन्देलराज ने इसे भी पराजित किया। तब शाहकुली इससे लड़ने को भेजा गया परन्तु वह भी हार गया।

अब छत्रशाल यमुना और चम्बल के दक्षिण ओर के सारे देश (बुन्देलखंड) का स्वामी बन गया *।

सन् १७०७ ई० में बहादुरशाह ने इन्हें बुला कर उस इलाके का स्वामी होना स्वीकार किया। तब इन्होंने बादशाह को लोहगढ़ जीत दिया।

सन् १७३२ ई० में फ़र्रुख़ाबाद का गवर्नर मुहम्मदख़ां बंगश छत्रशाल को पराजित करके सारा देश उजाड़ने लगा। इस कुदशा में छत्रशाल ने (जो अब बयासी वर्ष के बुड्ढे थे) पेशवा बाजीराव को एक पत्र में सब वृत्तान्त लिख कर अन्त में लिखा कि—

---

* इसकी निकासी प्रायः डेढ़ दो करोड़ मुद्रा थी।

"जो गति ग्राह गजेन्द्र की सो गति जानहु आज।
बाजी जात बुँदेल की राखो बाजी लाज"॥

इस प्रकार बुन्देलों के बाजी हारने का भय सुन कर पेशवा बाजीराव ने एक बृहत सेना भेजी और उसकी सहायता से छत्रशाल ने बंगश को परास्त किया। बंगश इस युद्ध में हारा था परन्तु मारा नही गया था।

छत्रशाल ने इस उपकार के बदले बाजीराव को अपना एक तिहाई राज्य दे दिया और शेष अपने २७ (अथवा ५२) लड़कों में बाँट दिया। इन लड़कों में केवल हिरदेशाह, जगतराज, पद्मसिंह, और भारतीचन्द उनके औरस पुत्र थे और शेष चेरियोंसे उत्पन्न हुए थे। हिरदेशाह को पन्ना का राज्य मिला और जगतराज को जैतपुर का। छत्रशाल सन् १७३४ में स्वर्गवासी हुए और अबतक छत्रपुर में उनका विशाल समाधिस्थान बना हुआ है। बुन्देलखंड में अब ३२ देसी रियासते हैं जिनमें निम्न लिखित आठ रियासतों के राजा छत्रशाल वंशोद्भव हैं:—जिगनी, पन्ना, लोगासी, सरीला, अजैगढ़, चरखारी बिजावर, और जसो।

शिवराज भूषण।

इस ग्रन्थ का नाम शिवराज भूषण बड़ा ही समीचीन है। इसमें शिवराज का यश वर्णित है अतः यह उनको भूषित

करता है। यह भूषणों (अलंकारों) का ग्रन्थ है और इसे भूषणजी ने बनाया है। ये सभी बातें "शिवराज भूषण" शब्दों से पूर्णतया विदित हो जाती हैं। सबसे पहले यह प्रश्न उठता है कि इसका ठीक निर्माण काल क्या है? इतना तो निश्चय है कि यह सन् १६७४ ईसवी में समाप्त हुआ पर इसके प्रारंभ होने के विषय में निम्नलिखित चार बातें कही जा सकती हैं—

(१) भूषणजी इस ग्रन्थ के छन्दों को स्फुट रूप से समय समय पर बिना किसी अलंकारादि के विचार से बनाते गए और अन्त में इतने छन्दों को क्रमबद्ध कर के और कुछ नये छन्द जोड़ कर उन्होंने इसे ग्रन्थ स्वरूप में कर दिया।

(२) उन्होंने इसके छन्द अलंकारों के विचार से ही समय समय पर बनाये और फिर उन्हें ग्रन्थ स्वरूप में परिणत कर दिया।

(३) अपने आने के समय से ही इस ग्रन्थ को इसी रूप में बनाना कवि ने प्रारम्भ कर दिया और सन् १६७४ ई० में उसे समाप्त किया।

(४) सन् १६७४ ई० ही में अथवा उसके कुछ ही पहले यह ग्रन्थ बनना प्रारम्भ हुआ और थोड़े ही महीनों में समाप्त हो गया।

इन प्रश्नों के उत्तर देने में निम्नलिखित चक्र से बहुत कुछ सहायता मिल सकती है:—

नम्बर छुन्द	किस सन् की घटना उसमें मुख्यशः है	नम्बर छुन्द	किस सन् की घटना उसमें मुख्यशः है	नम्बर छुन्द	किस सन की घटना उसमें मुख्यशः है
१४से२४तक	सन् १६६२ ईसवी	९९	१६५९	२०६	१६७३
३४,३५,३८	१६६६	१००	१६७०	२०७	१६७३
४२, ६३	१६५९	१४८	१६६६	२०९	१६६६
७९	१६६६	१६१	१६७३	२१२	१६६६
९६	१६७३	१८६	१६६६	२२५, २२६	१६७२
९७	१६७२	१८९	१६६३	२३९	१६५९से १६७३ तक
२५४	१६७३	१९८	१६६६	२४२	१६६६से १६७३ तक
२५८	१६६९	२००	१६६४ या १६७०	२५२	१६५९
२५९	१६७०	२०४	१६६६	३५६	१६७२,१६७३
२६१	१६७३	३०५, ३०७	१६६३	३५७	१६७३
२६५	१६६६	३०९, ३१०	१६६६	३५८	१६७३
२८५	१६७०	३२८	१६७३	३५९	१६७३
२८८	१६६२	३३१	१६७२	३६४	१६६३
२९२	१६६२	३३४	१६६४ या १६७०		
		३३७	१६५९, १६६३		
		३३८	१६७२		
		३५५	१६७२		

इस चक्र के देखने से विदित होता है कि भूषणजी ने सन १६५६ के ६ छन्द, सन १६६२ के १२ छन्द, सन १६६३ के ३ छन्द, १६६४ के २ छन्द, सन १६६६ के १० छन्द, सन १६६६ का १ छन्द, सन १६७० के ५ छन्द, १६७२ के ७ छन्द और सन १६७३ के १२ छन्द शिवराज भूषण में कहे हैं। सन १६६२ के बारह लगातार छन्दों में रायगढ़ का वर्णन किया है। उन सभों का वर्णन-बाहुल्य के जोड़ने में एक ही छन्द मानना चाहिए।

अब हम शिवराज भूषण के समय सम्बन्धी उपरोक्त चारों प्रश्नों पर विचार करते हैं।

(१) यह अनुमान यथार्थ नहीं कहा जा सकता क्योंकि भूषण के अधिकांश उदाहरणों में एक एक छन्द में वही अलंकार कई कई बार आया है और सिवाय उसके दूसरा अलंकार स्पष्ट रूप से नहीं आने पाया है। फिर प्रत्येक अलंकार अपने उदाहरण में बड़े ही स्पष्ट रूप से निकलता है और किसी के निकालने में कष्टकल्पना नहीं करनी पड़ती। अन्य अधिकांश आचार्यों के उदाहरणों में ऐसी स्पष्टता कम पाई जाती है। अतः कोई यह नहीं कह सकता है कि भूषणजी के उदाहरण अलंकारो के लिए नहीं बनाये गये थे और उनमें अलंकार आप ही आप निकल आए। वे स्वयं कहते हैं कि—

"शिव चरित्र लखि यों भयो कवि भूषण के चित्त।
"भाँति भाँति भूषनन सों भूषित करौं कवित्त" ॥

(२) यह अनुमान कुछ कुछ यथार्थ जान पड़ता है। इस के कारण पीछे लिखे जायँगे।

(३) यह ग्रन्थ इसी रूप में सक्रम नहीं बनाया गया है क्योंकि यदि सन १६६७ ई० से इसे भूषणजी लिखने लगते तो छन्द नं० ८६ व ८७ से ही सन १६७३ का वर्णन कैसे आ जाता? क्योंकि यदि यह मानिये कि सन १६६७ से सन १६७४ तक यह ग्रन्थ संक्रम बनता रहा तो यह भी मानना पड़ेगा कि सन १६७३ में केवल अन्त के प्रायः पचास छन्द बने होंगे। इसी प्रकार और सभों की भी दशा है। अतः यह ज्ञात होता है कि इस ग्रन्थ के छन्द सिलसिलेवार नहीं बनाये गये हैं—परन्तु कुछ अंश में यह विचार यथार्थ भी है, जैसा आगे लिखा जायगा।

(४) यह अनुमान भी ठीक नहीं जँचता। भूषण ने जिस समय जो ग्रन्थ या छन्द बनाया है, उसी समय की घटनाओं का वर्णन उनमें बाहुल्यता से है और यही बात प्राकृतिक भी है। भूषणजी ने शिवराजभूषण में दस छन्दों में शिवाजी के दिल्ली गमन का वर्णन किया है और इनमें से अधिकांश छन्द ग्रन्थ के प्रारम्भ में पाए जाते हैं। ग्रन्थ के अन्त में सन् १६७२ और १६७३ के वर्णन बहुतायत से हैं। यदि कहिए कि दिल्ली गमन को भूषणजी बड़ी भारी बात समझते थे और इसीलिये उसका वर्णन अधिक है, तो इसका उत्तर यह है कि शिवा बावनी में इस घटना के दो ही छन्द हैं। फिर बहलोल का

युद्ध ऐसा बड़ा न था परन्तु उसके कई छन्द भूषणजी ने लिखे हैं। सन् १६७३ की घटनायें बड़ी भारी न थीं परन्तु उनका भी बर्णन अधिक है। शाइस्ताख़ाँ का युद्ध बड़ा भारी और कीर्ति वर्द्धक था परन्तु उसके विषय में तीन ही छन्द लिखे हैं। इससे विदित होता है कि इस ग्रन्थ का आदि का भाग सन १६७० के पहिले लिखा गया है और अन्त का सन् १६७२ और १६७३ में बना एवं इसका मध्य भाग सन १६७० और १६७१ के लभभग बनाया गया है।

इन सब बिचारों से विदित होता है कि भूषणजी ने यह ग्रन्थ सन १६६७ ई० के लगभग प्रारम्भ किया था और इसी क्रम से जो हम आज देखते हैं यह ग्रन्थ बना है परन्तु कुछ कुछ अलंकारों के उदाहरण उस समय नहीं बनाये गये थे, वे पीछे लिखे गए। इसी कारण कहीं कहीं आदि में भी सन १६७० के पीछे तक की घटनाएँ आ गई हैं। कहीं कहीं प्रथम उदाहरण में उस समय की घटनाओं का वर्णन है, और फिर अन्त में द्वितीय उदाहरण पीछे की घटनाओं से भरा हुआ रख दिया गया है। कहीं कहीं सम्भव है कि द्वितीय उदाहरण भूषणजी को ऐसा अच्छा लगा हो कि उन्होंने पहिला उदाहरण ग्रन्थ से निकाल दिया हो। पाठकों को उपरोक्त चक्र देखने से विदित होगा कि अधिकतर ज्यों ज्यों ग्रन्थ बढ़ता गया है उसी प्रकार सन भी बढ़ते गए हैं। इन सब विचारों से इस कुल ग्रन्थ को एक ही डेढ़ साल में बनाना

ठीक नही जँचता। फिर यदि भूषणजी ग्रन्थ ऐसा शीघ्र बनाते होते कि डेढ़ साल में इतना बड़ा ग्रग्थ बना डालते तो शेष अपने कवित्व-काल के पचपन सालों में न जानें कितना बना डालते।

छन्द नम्बर २०७ में करनाटक की चढ़ाई के वर्णन का भ्रम हो सक्ता है परन्तु होना न चाहिये। जिस समय शिवाजी ने परनालो का दुर्ग्ग जीता था उस समय वे करनाटक को नहीं गए थे। वर्णन से ऐसा जान पड़ता है कि शिवाजी परनालो लेकर तुरन्त करनाटक गए। इससे "करनाटक लौं" से करनाटक की सरहद् तक का जाना मानना चाहिए।

मुद्रित प्रतियों में प्रायः ३½ सौ छन्द पाए जाते हैं, पर हमने शिवराज भूषणकी इस प्रति में ३८२ छन्द दिये हैं। जितने छन्द इस प्रति में बढ़े हैं उनका मुख्यांश कवि गोविन्द गिल्ला भाईजी की हस्तलिखित प्रति से लिया गया है। गिल्लाभाई जी की प्रति में कई ऐसे अलंकारों के लक्षण और उदाहरण हैं जो भूषणजी की दी हुई अलंकार नामावली (छन्द नं० ३७१-३७६) के बाहर हैं। उन अलंकारों के लक्षणों को हमने भूषणकृत नहीं समझा परन्तु उदाहरणों को "शिवाबावनी" एवं "स्फुट" में रख दिया है। जान पड़ता है कि भूषण के इन कवित्तों में अलंकार निकलते देख लोगों ने इन्हें " शिवराजभूषण " में उन अलंकारों के लक्षण अपनी ओर से जोड़ कर रख दिए। इन नए कवित्तों में से दो चार

के विषय में हमें भूषणकृत होने में सन्देह है, और सम्भव है कि उन्हें किसी ने अपनी ओर से बनाकर लिख दिया हो पर शेष छन्द अवश्य भूषणजी के प्रतीत होते हैं।

भूषणजी ने युद्ध प्रधान ग्रन्थ होने के कारण इसमें श्री भगवतीजी की एक बड़े ही प्रभावोत्पादक छन्द द्वारा स्तुति की है। इस ग्रन्थ में कवि ने अधिकांश अलंकारों के लक्षण और उदाहरण दिये हैं और उदाहरणों में विशेषता यह रक्खी है कि प्रत्येक में शिवाजी का यश वर्णित है। इनके पहले किसी कवि ने अपने नायक के ही यश वर्णन में कोई ऐसा ग्रन्थ नहीं रचा। ग्रन्थ के आरम्भ में रायगढ़ का बड़ा ही मनोहर वर्णन है और अलंकार का बंधन रखकर भी भूषणजी शिवराज के यश वर्णन और तत्कालीन मनुष्यों के वास्तविक भावों के चित्र खींचने में पूर्णतया कृतकार्य हुए हैं। अलंकारों के उदाहरण भी इनके बहुत स्पष्ट हैं और एक ही छन्द में कभी कभी दो चार बार तक उसी अलंकार के उदाहरण आ जाते हैं। भूषणजी प्रायः सभी अलंकार इस ग्रंथ में लाये हैं, केवल निम्न लिखित छूट गये हैंः—

धर्म्म लुप्ता से इतर लुप्तोपमा, तद्रूप रूपक, सम्बंधातिशयोक्ति, पदावृत्ति एव अर्थावृत्ति दीपक, असदर्थ एवं सदर्थ निदर्शना, समव्यतिरेक, न्यूनव्यतिरेक, प्रस्तुतांकुर, द्वितीय पर्य्यायोक्ति, निषेधाभास, व्यक्ताक्षेप, तृतीय विषम, द्वितीय एव तृतीय सम, प्रथम अधिक, अल्प, द्वितीय तथा तृतीय

विशेष, द्वितीय व्याघात, कारक दीपक, द्वितीय अर्थान्तर-न्यास, विकस्वर, ललित, प्रथम एवं तृतीय प्रहर्षण, मुद्रा, रत्नावली, गूढ़ोत्तर, सूक्ष्म, गूढ़ोक्ति, विवृतोक्ति, युक्ति, और प्रतिषेध।

अलंकारों की इस नामावली में बहुत से ऐसे हैं जिनमें मुख्य अलंकार का वर्णन हुआ है, परन्तु उसके किसी विभाग का नहीं हुआ। ऐसा ग्रन्थ के संक्षिप्त बनने के कारण किया गया है। कुछ अलंकार ऐसे हैं जिनके न वर्णित होने का कोई कारण नहीं है यही कहा जा सकता है कि वे ऐसे विदित अथवा आवश्यक नहीं हैं जिनके वर्णन करने पर कवि बाधित हो।

तद्रूप रूपक का भी वर्णन भूषणजी ने नहीं किया है। बिहारी ने भी सैकड़ों रूपक लिखने पर एक भी तद्रूप रूपक नहीं लिखा। वास्तवमें तद्रूप रूपक एक निषिद्ध प्रकार का रूपक है। रूपक का मुख्य प्रयोजन है उसी रूप का होना, फिर कोई वस्तु किसी द्वितीय की पूर्ण प्रकारेण अनुरूप तभी हो सकती है जब उन दोनों वस्तुओं में कुछ भी भेद न हो। अतः मुख्यशः अभेद रूपक ही शुद्ध रूपक है। जब दो पदार्थों में विभिन्नता प्रस्तुक है जैसा कि तद्रूप रूपक में होता है तब रूपक श्रेष्ठ कैसे हो सकता है?

इन महाशय ने दो अलंकारों के उदाहरण अन्य सभी आचार्यों से उत्तमतर दिये हैं:—

(क) परिणाम। सर्वस्वकार का मत है कि जहां अप्रकृत प्रकृत का रंजन मात्र करै वहां रूपक और जहां अप्रकृत प्रकृत का उपयोगी होवे वहां परिणाम अलङ्कार है, यथा :—

मुख शशि देत अनन्द ... रूपक
मुख शशि हरत अंधार ... परिणाम

दूलह आदि ने इसके उदाहरण में यही कह मारा है कि "कपि बांध्यो सिन्धु राम पद पंकज प्रसाद ते", परन्तु वास्तव में यह रूपक है, क्योंकि पंकज यहां पद का रंजन मात्र करता है। किन्तु भूषण कवि ने इसका अत्यन्त शुद्ध उदाहरण दिया है "भूखन तीखन तेज तरन्नि सों बैरिन को कियो पानिप हीनो"। यहां तरणि तेज का रंजन मात्र नहीं करता वरन उसका उपयोगी भी है।

(ख) दीपक। इसमें भाषा के आचार्य्य उपमेय उपमान का सम्बन्ध जोड़ते हैं। यह उन आचार्य्यों की भूल प्रतीत होती है। काव्यप्रकाश में यह लक्षण दिया है:—"सकृद्वृत्तिस्तु धर्मस्य प्रकृताप्रकृतात्मनाम्" अर्थात् प्रकृत और अप्रकृतों के धर्म के एक बार वर्त्तने में दीपक अलंकार है।

अहि फन मनि सिंह सुसटा कुल कलत्र कुच जान।
कृपन जनन को धन कहौ को परसे छुत प्रान॥

मुरारिदान।

*४ भूषण ने भी उदाहरण में उपमेय उपमान का सम्बन्ध नहीं रक्खा है, उद्यपि न जाने लक्षण में वह कैसे वर्तमान है।

यथा "कामिनि कन्त सों, जामिनि चन्द सों, दामिनि पावस मेघ घटा सों ......जाहिर चारिहु ओर जहान लसै हिन्दुवान खुमान सिवा सों ॥ (शि० भू० छं० १२०)

दीपक में उपमेय उपमान का सम्बन्ध लगाने के कारण अन्य कवियों ने आवृत्ति दीपक तथा माला दीपक के उदाहरण देने में अपने लक्षणानुसार भूल की है, परन्तु भूषण के इन अलंकारों के उदाहरण भी शुद्ध हैं।

भूषण महाराज के विकल्प एवं सामान्य के उदाहरण अशुद्ध हो गए हैं।

(क) विकल्प में सन्देह ही सन्देह रहना चाहिये निश्चय न होना चाहिये। (शि० भू० छं० २४६)

मोरँग जाहु कि जाहु कुमाऊँ सिरीनगरै कि कवित्त बनाये।

....

भूषन गाय फिरौ महि मैं बनि है चित चाह शिवाहि रिझाये॥

इस छन्द में भूषण ने अन्त में निश्चय कर दिया सो अलंकार बन बना कर बिगड़ गया, परन्तु यहां इनका दूषण क्षन्तव्य है, क्योंकि इनका अलंकार बन चुका था, तथापि इन्होंने स्वयं उसे नायक के कारण बिगाड़ दिया।

(ख) सामान्य = सादृश्य के कारण जहां भिन्न वस्तुओं में भेद न जान पड़े। शि० भू० छन्द नं० ३०५ देखिये। इसमें तलवारों की चमक का चपला की भांति चमकने से भेद खुल गया और अलंकार बिगड़ गया।

भूषणजी ने छन्द नं० २६४ व २६७ में अर्थान्तरन्यास और प्रौढ़ोक्ति के लक्षण और कवियों के विरुद्ध लिखे हैं। उन्होंने छन्द नं० ३७९ में लिखा है कि उन्होंने अपने लक्षण अलंकार ग्रन्थ देख कर और "निज मतो" से बनाये हैं, सो यहां उनका मत समझना चाहिये। शिव० भूषण नं० ६०, १४६ और २५५ में भी ऐसे ही लक्षण हैं।

इस महाकवि ने लुप्तोपमा, उत्प्रेक्षा, चंचलातिशयोक्ति, असंगति, विरोधाभास, विरोध और पूर्वरूप आदि के बड़े ही उत्तम उदाहरण दिये हैं।

शिवराज भूषण में कवि ने अलंकारों ही पर पूर्ण ध्यान दिया है अतः युद्ध प्रधान ग्रन्थ होने पर भी पूर्ण बीर रस के बहुत अच्छे उदाहरण इस ग्रन्थ में नहीं मिलते, हां भयानक तथा रौद्र रसों के उत्तम उदाहरण भी यत्र तत्र देख पड़ते हैं, मुख्यशः भयानक रस के, जिस (रस) के वर्णन में भूषण महाराज बड़े पटु हैं। इन्होंने शिवाजी के दल का वर्णन इतना नहीं किया है जितना कि शत्रुओं पर उसकी धाक का। इसी हेतु इनके ग्रन्थ में भयानक रस का बहुत अधिक समावेश है। रसों के उदाहरण शिवाबावनी में अधिक उत्तम देख पड़ते हैं। भूषणजी अमृतध्वनि खूब उत्तम बना सकते थे। अन्य कवियों की अमृतध्वनियों में निरर्थक शब्द बहुत आजाते हैं, परन्तु भूषण जी के छन्दों में ऐसा नहीं है।

महाराजा रणजीत सिंह। इन सब में हम लोगों से दूरतम वासी शिवाजी ही थे तथापि एतद्देशीय साधारण हिंदू समाज में सबसे अधिक प्रसिद्ध येही महाराज हैं। इस साधारण प्रख्याति के कारण यही भूषण जी के ग्रन्थ हैं। यद्यपि महाराजा रणजीत सिंह के सब से पीछे होने के कारण उनका नाम लोग यहाँ जानते हैं, तथापि उनकी भी विजय यात्राओं का हाल यहां बहुत कम मनुष्यों पर विदित है परन्तु शिवाजी की लड़ाइयों का समाचार ग्राम ग्राम तथा घर घर पूछ लीजिये।

एक यह भी प्रश्न है कि "शिवराज भूषण" कब समाप्त हुवा। छंद सं० ३८० में भूषण जी ने सम्वत १७३० बुध सुदि १३ को इसका समाप्त होना लिखा है। हमारी प्रार्थना पर महामहोपाध्याय श्री पण्डित सुधाकर जी ने १७३० का पूर्ण पंचाग बना कर हमारे पास भेज दिया जिसके लिये हम उनके अत्यन्त कृतज्ञ हैं। इससे विदित होता है कि श्रावण और कार्तिक मास में शुक्ल त्रयोदशी बुधवार को उक्त सम्वत में पड़ी थी और कार्तिक में केवल १४ दंड ५५ पल वह तिथि बुध के दिन थी, पर श्रावण में ३६ दण्ड ४० पल। जान पड़ता है कि श्रावण मास में ग्रन्थ समाप्त हुआ था।

श्रीशिवाबावनी।

जैसा कि हम उपर लिख चुके हैं यह कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं, किन्तु भूषण के बावन छंदों का संग्रह मात्र है। मुद्रित प्रतियों में शिवराजभूषण के छंद नं० २ और ५६ एवं स्फुट काव्य के छंद नं० २,४,७, और ८ भी इसी ग्रंथ में सम्मिलित हैं, परंतु हमने प्रथम दो को अन्य ग्रंथ के छंद होने के कारण और शेष चार को अन्य पुरुषों की प्रशंसा के छंद होने के कारण शिवाबावनी से निकाल डाले। इसमें तो शिवाजी ही की प्रशंसा के छंद होने चाहिये, परन्तु इन चारों में सुलंकी, अवधूतसिंह, साहू जी, और शम्भाजी का यश वर्णित है। इस ग्रन्थ का संग्रह होने के कारण हमने ऐसा करने में कोई दूषण भी नहीं समझा। इन छः छन्दों के स्थान पर हमने वर्तमान ग्रन्थ के छन्द नं० १,२८,३१,४०,४१ और ५० स्फुट कविता से निकाल कर इस ग्रन्थ में रख दिए हैं। इनमें से छन्द न० ४० को छोड़ कर शेष कवि गोविंद गिल्ला भाई की प्रति से मिले हैं।

शिवाबावनी की मुद्रित प्रतियों में कोई क्रम नहीं था, अतः हमने ऐतिहासिक घटनाओं के विचार से पूर्वापर के अनुसार इसे क्रमबद्ध कर दिया है। इसमें बहुत सा वर्णन शिवराज के अभिषेकान्तर का है। यह समय ऐसा था कि जब शिवाजी बीजापुर तथा गोलकुण्डा को भली भाँति पद

दलित कर चुके थे और ये दोनों राज्य उनके प्रभुत्व को स्वीकार करके ५ लाख तथा ३ लाख रुपये वार्षिक कर उन्हें देने लगे थे। इसी कारण इस ग्रन्थ में इन दोनों पाद-शाहियों का स्वल्प रूप से वर्णन हुआ है और मुख्यांश में शिवाजी के दिल्ली से झगड़े का वर्णन है।

इस ग्रन्थ के छन्दों का स्वतन्त्रता पूर्वक निर्मित होने के कारण इसमें प्राबल्य और गौरव विशेष आये हैं, और रसों के पूर्ण उदाहरण भी बहुत पाए जाते हैं, परन्तु यहां भी भयानक रस का प्राधान्य हैं। रौद्र रस के छन्द भी यत्र तत्र दृष्टिगोचर होते हैं, तथापि इसमें शुद्ध बीर रस के दो ही चार छन्द हैं। इसमें भूषण ने शत्रुओं की दुर्गति का बड़ा सुन्दर चित्र खींचा है और शिवराज के प्रताप और आतंक के वर्णन भी बड़े ही बिशद हैं।

यह छोटा सा ग्रंथ बड़ा ही मनोहर है और इसके छन्द शिवराज भूषण के छंदों से भी अधिक प्रभावोत्पादक हैं। इसकी जहां तक प्रशंसा की जाय थोड़ी है।

बावनी में कही हुई घटनाओं का चक्र इतिहा-
सानुसार नीचे लिखा जाता है :—

छन्द संख्या	किस सनकी घटना मुख्यशः वर्णित है	छन्द संख्या	किस सनकी घटना मुख्यशः वर्णित है	छन्द संख्या	किस सनकी घटना मुख्यशः वर्णित है
१४, १५	१६५८	२५, २६	१६७२	४३	१६७६
१६, १७	१६६६	२७	१६५९,१६७०,१६७२	४५	१६७८
२०,२१,२२	१६६९	३०	१६५५,१६५९,१६७३	५१	१६८०
२४	१६७०	३४	१६७४ (अभिषेक)		
		४२	१६७६		

श्री शिवाबावनी के विषय में बहुत लोगों का यह भी मत है कि जब भूषण पहिले पहिल शिवाजी के पास गए और उन्हें "इन्द्रजिमि जम्भ" वाला छन्द सुनाया तब परम प्रसन्न होकर उन्होंने कहा " फिर कहो" , (शि० भू० छं० नं० ५६)। इस पर भूषण ने एक अन्य छन्द पढ़ा। पुनः "फिर कहो" की आज्ञा पाकर एक और छन्द सुनाया, इसी प्रकार एक एक करके ५२ बार ५२ छन्द पढ़ के वे थक गए। वही ये ५२ छन्द शिवाबावनी के नाम से विदित हुए। यह मत किसी अंश में शुद्ध नहीं है, कारण यह कि इस ग्रन्थ में करनाटक की चढ़ाई

का भी वर्णन है जो सन् १६७८ ई० के लगभग हुई थी। अतः इस मतानुसार यह सिद्ध होता है कि भूषण पहिले पहिल शिवाजी के यहां सन् १६७८ के पश्चात् गए थे, परन्तु ये स्वयं लिखते हैं कि उन्होंने सम्बत १७३० (अर्थात् सन् १६७३ ७४ ईसवी) में शिवराज भूषण ग्रन्थ समाप्त किया। फिर इस बावनी में एक छुन्द सुलंकी (' हृदयराम सुत रुद्र") और एक अवधूतसिंह की प्रशंसा सूचक लिखा था जिससे प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि वह शिवाजी को ग्रन्थ रूप में कदापि नहीं सुनाई गई। इसके स्वतंन्त्र ग्रन्थ होने के विरुद्ध यह भी प्रमाण है कि इसकी बन्दनावाला छुन्द ही शिवराज भूषण से लिया गया था, एवं दो एक और भी छुन्द ऐसे ही थे। इसमें आद्योपान्त कोई प्रवन्ध भी नहीं है, और न किसी ने इसे स्वतंत्र ग्रन्थ कहा ही है। यह अति उत्तम ग्रन्थ है और हिन्दी में इस के जोड़ के बहुत ग्रन्थ न मिलैंगे।

छत्रशाल दशक।

जान पड़ता है कि भूषण महाराज ने छत्रशाल के बहुत से छुन्द बनाये थे क्योंकि उन्होंने सन् १६८० से सन् १७०५ तक सिवाय छत्रशाल के और किसी का यश वर्णन नहीं किया। उन्हीं छुन्दों में से आठ घनाक्षरी और दो दोहे इस ग्रन्थ में रक्खे गए हैं, और दो घनाक्षरी बूँदी नरेश महाराज छत्रशाल हाड़ा बिषयक इसमें हैं। इसकी मुद्रित प्रतियों

में राव राजा बुद्धसिंह विषयक एक छन्द भी था जो अब हमने स्फुट काव्य के तीसरे नम्बर पर रख दिया है। उसके स्थान पर छन्द नम्बर ६ इसमें स्फुट कविता से ला कर हमने रक्खा है।

इस ग्रन्थ का भी क्रम हमने इतिहास के विचार से पूर्वापर क्रमानुसार कर दिया है। बूँदी नरेश के दोनों छन्द प्रथम रख देने का कारण भी स्पष्ट है। यद्यपि वे सन् १७१० के लगभग बनाए गए थे, तथापि उनमें घटना सन् १६५८ की वर्णित है। तृतीय छन्द हमारे अनुमान में सन् १६७५ में बनाया गया था और उसी सन में चतुर्थ और पंचम छन्द बने (बुंदेलों के इतिहास सम्बन्धी भूमिकांश देखिए)। छन्द नं० ६ सन् १६६० और नम्बर सात १७०० की घटनाओं से सम्बन्ध रखता है। छन्द नम्बर आठ और नौ सम्भवतः सन् १७०८ में बने और नम्बर दस सन् १७११ के लगभग बना।

इस ग्रन्थ के छन्द भूषण की कविता में सर्वोत्कृष्ट हैं, और एक भी छन्द सिवाय उत्तमोत्तम के मध्यम श्रेणीतक का इसमें नहीं है। भूषण ने शिवराज और छत्रसाल सरीखे भारतमुखोज्वलकारी युगुल मित्रों का वर्णन करके देशवासियों और हिन्दीरसिकों का बड़ा उपकार किया है। यह बात प्रसिद्ध है कि भूषणजी जब महाराज शिवराज के यहां सम्मानित हो छत्रसाल के यहां पधारे तो इन्होंने कविजी की बहुत सुश्रूषा की और चलते समय यह कह कर कि "अब हम

आप को क्या बिदाई देसकते हैं?" उनकी पालकी का डंडा स्वयम् अपने कंधे पर रख लिया! तब भूषणजी अत्यन्त प्रसन्न हो चट पालकी से कूद पड़े और "बस महाराज! बस" कहते हुए उनकी प्रशंसा सूचक कविता तत्काल बना चले, वेही कवित्त छत्रशाल दशक के नाम से प्रसिद्ध हुए। परन्तु जान पड़ता है कि भूषण ने इस समय कोई और ही छन्द बनाए होंगे। इस ग्रन्थ के छन्द किसी ग्रन्थ रूप में नहीं बने क्योंकि न तो इनमें बन्दना है, न सन् सम्बत का ब्योरा और न कोई क्रम विशेष, बरन यह स्फुट कबित्त मात्र हैं और बाद को लोगों ने इन छन्दों में भूषणकृत छत्रशाल विषयक दो एक और छन्द मिला कर "छत्रशालदशक" नामक १०-१२ छन्दों का "ग्रन्थ" पूरा कर दिया, क्योंकि इसमें छत्रशालजो बूँदी नरेश के भी दो छन्द हैं, जिनको छत्रशाल बुन्देला के ग्रन्थ में न होना चाहिये था। यह छोटा सा ग्रन्थ प्राबल्य में एक-दम अद्वितीय है।

स्फुट काव्य।

इसमें भूषण के ११ छन्द (जो हमें मिले) लिखे गए हैं। इसमें कोई ऐतिहासिक क्रम नहीं रक्खा गया है, क्योंकि प्रथम और अन्तिम नम्बर पर शिवाजी की प्रशंसा के छन्द रखना हमें भला मालूम पड़ा। इसके छन्दों का ऐतिहासिक क्रम निम्नानुसार है:—

छन्द संख्या	किस सन का वर्णन अथवा किस सन में बना।	छन्द संख्या	किस सन का वर्णन अथवा किस सन में बना।
१	१६७६	६	१६७५
२	१६६५	७	१७१५
३	१७१०	८	१६७८
४	१६६४	९	१६८०
५	अज्ञात		

इन छन्दों के विषय में विशेष हमें कुछ वक्तव्य नहीं है। जैसे प्रभाव पूरित भूषणजी के और छन्द हुआ करते हैं वैसे ही ये भी हैं। स्फुटकाव्य के सम्बन्ध में हमें केवल निम्न लिखित छन्द पर बिचार करना शेष हैः–

मालती सवैया।

"बालपने में तहौवरखान को सैन समेत अँचैगयो भाई। ज्वानी में रुंडी औ खुंडी हने त्यों समुद्र अँचै कछु बार न लाई॥ बैस बुढ़ापे की भूँख बढ़ी गयो बंगस बंस समेत चबाई। खाये मलिच्छन के छोकरा पै तबौ डोकरा को डकार न आई।"

यह छन्द मुद्रित प्रतियों में भूषण के स्फुट छन्दों में लिखा हुआ है। इसमें छत्रसाल का वर्णन है क्योंकि तहौवरख़ां, समुद्र (अब्दुसम्मद) और बंगश से वही तीस वर्ष, चालीस वर्ष और बयासी वर्ष की अवस्थाओं में क्रमशः लड़े थे। बंगस का युद्ध सन् १७३२ में हुआ था, सो यदि यह छन्द भूषणकृत मानैं तो उनकी पूरी अवस्था सत्तानवे साल से कम नहीं मान सकते। यदि बंगवासी वाली प्रति के मतानुसार भूषण का जन्मकाल सन् १६१४ माना जाय तो इस समय उनकी अवस्था ११८ साल की माननी पड़ेगी। अतः हमें दृढ़ सन्देह है कि यह छन्द भूषणकृत नहीं है। भूषणजी छत्रशाल से पन्द्रह साल बड़े थे सो वे बुंदेला महाराज को " डोकरा " कभी न कहते। यह छन्द किसी छोटी अवस्था के कवि ने बनाया है।

भूषण की कविता का परिचय।

हम भूषण महाशय के चारो ग्रन्थों के विषय में अलग अलग अपने विचार प्रकट कर चुके, अब चारो ग्रन्थ मिला कर इन समस्त रचना पर जो कुछ विशेष कथनीय है वह नीचे लिखा जाता है।

भाषा—इन की भाषा विशेषतया ब्रज भाषा है, जैसे कि उस समय के प्रायः सभी कवियों की थी। जान पड़ता है कि उस समय के महाराष्ट्र बासी भी हिन्दी भाषा को भलीभाँति

समझते थे नहीं तो भूषण की कविता का ऐसा आदर शिवा जी की सभा में कैसे होता? युद्धकाव्य लिखने के कारण भूषण जी को ब्रजभाषा के साथ प्राकृत मिश्रित भाषा भी लिखनी पड़ी है, तथापि इन्होंने उस समय के अन्य युद्ध काव्य रचयिताओं से बहुत कम इस भाषा का प्रयोग किया है। यह बात भूषण के कवित्व शक्ति सम्पन्न होने का ही एक प्रमाण है। वीर कविता में अन्य कवियों को प्राकृत भाषा का अधिक प्रयोग करना पड़ा है। फिर अन्य कवियों की युद्ध कविता में माधुर्य्य और प्रसाद गुणों की बड़ी न्यूनता रहती है परन्तु भूषण महाशय इन गुणों को भी अपनी कविता में बहुतायत से ला सके हैं।

प्राकृत मिश्रित भाषा और ब्रजभाषा के अतिरिक्त भूषण ने कहीं कहीं बुन्देलखण्डी बोलीका भी प्रयोग किया है।

प्राकृत भाषा के उदाहरणार्थ शि० भू० छन्द नं० १४७ और खड़ी बोली के उदाहरणार्थ नं० १६१ तथा २०९ देखिये।

भूषण जी ने अपनी कविता में यत्र तत्र फ़ारसी के असाधारण शब्द रक्खे हैं, यथाः—जाबता करन हारे व तुजुक (शि० भू० नं० ३८) दरियाव (शि० भू० नं० १०८), गाज़ी जशन, तुज़ुक व इलाम (शि० भू० नं० १९८), मुहीम (शि० भू० नं० १८०), बेइलाज (शि० भू० नं० २७९), गुस्लखाना, सिलहखाना, हरमखाना, शितुरखाना, करंजखाना, व ख़िलवत खाना (शि० भू० नं ३६१) इत्यादि। इससे विदित होता है

कि भूषण जी फ़ारसी भी जानते थे परन्तु अच्छी तरह वे फ़ारसी नहीं जानते थे क्यों कि उपरोक्त उदाहरणों में भूषण जी ने जापता करन हारे, इलाम, तथा बेइलाज का प्रयोग बेमहावरे किया है। उपरोक्त उदाहरणों के अतिरिक्त निम्न-लिखित छन्दों में फ़ारसी के असाधारण शब्द आये हैं। इनमें कई स्थानों पर शब्दों का अशुद्ध प्रयोग है:-शिवराज भूषण छन्द नम्बर ३४, १०३, ११४, १५६, २०६, २४२, २५८ २८३, २६६, ३१५, ३६०, शिवाबावनी छन्द नम्बर २, ६, १०, १४, १७, २०, २१, २२, २३, २६, ३०, ३३. ३४, ४०, ४१. छत्रशाल-दशक, छन्द नम्बर १०, स्फुट काव्य छन्द नम्बर, ४, ५, ६. ७, और ६।

भूषणजी ने कहीं कहीं असाधारण एवं बिकृत रूपधारी शब्द भी लिखे हैं, यथा—छिया (१०) कुरुख (३४) कहाब (५१) जोब (५२, १४२१, १६८) बिगिर, (६३) घरबी (१५५ बुन्देलखण्डी भाषा) बैयर (१७३) किरिरि (३४०) अंझा (३५१) छन्द नम्बर ३५४, ३५५, ३५६, ३५७, का बृहदंश, खोम (३६०) जम्पत (१५) चकत्ता, खुमान. अमाल (७३) गारौ (१८६) बिगूचे (२०६) पेल (शिवा बा० नं० २) बप (शि० बा० नं० १५) इत्यादि—

उपरोक्त उदाहरणों में जहाँ केवल अङ्क लिखे हैं और ग्रन्थ का नाम नहीं लिखा है वहाँ शिवराजभूषण के छन्दों के नम्बर समझना चाहिये।

परन्तु इतने ग्रन्थों और विशेष करके युद्ध वर्णन में यदि

उन्होंने इतने अथवा कुछ और शब्दों का अव्यवहृत एवं विकृत रूप में समावेश किया तो कुछ आश्चर्य्य की बात नहीं है वरन आश्चर्य तो यह है कि भूषण ने इतने कम शब्द मरोड़ कर अपना काम कैसे चला लिया।

यदि इस कवि के कुल शब्द गिने जायँ तो अन्य अनेक ग्रन्थ रचने वालों की अपेक्षा इसका शब्द समूह बड़ा ठहरेगा। अँगरेज़ी के सुप्रसिद्ध कवि शेक्सपियर ने इङ्गलैण्ड के हर एक कवि से अधिक शब्दों का प्रयोग किया है और यह उसकी कविता का एक बड़ा गुण समझा जाता है। यही गुण भूषण में भी विद्यमान है। भूषण महाशय की कविता में अनु-प्रास बहुतायत से आये हैं तथापि बीरताप्रधान ग्रन्थों के रचयिता होने के कारण इन पर कोई दोषारोपण नहीं कर सकता। फिर इन्होंने पद्माकर जी की भाँति अनुप्रास एवं यमक का स्वांग भी नहीं बनाया है।

उदाहरण ये हैं—शिवराजभूषण में छन्द नम्बर १, ३८, ४२, ४८, ५६; ६८. ७३, ७७; ८३, १०१, ११०, १३०, १३३. १३४, १६१, १६२, १६६, १८९, २१५, २२६, २४७, २५४, २६६, ३३६, ३४०, ३५१, ३५४, से ३५९ तक ३६०, ३६१, ३६४; शिवाबावनी में छन्द नम्बर २, ३, ६, ८, २६, ३७, ३८, ४०, ४२, ४३ ४५, ४८; छत्रशालदशक के छन्द नम्बर १, ३, ४, ५, ८; स्फुट काव्य के छन्द नम्बर २, ५, ६, ७। भूषण जी ने कुल मिलाकर दश प्रकार के छन्द लिखे हैं जिनके नाम नीचे लिखे जाते हैं।

शिवराज भूषण के जिस नम्बर के छन्द के नोट में छन्द विशेष का लक्षण दिया है उसका ब्योरा ब्रैकेट में यहाँ लिख दिया गया है।

छन्दों के नाम ये हैं।

मनहरण (१), छप्पय (२), दोहा (३), मालती सवैया (१५) हरिगीतिका (१६), लीलावती (१३६), किरीटी सवैया (३२०), अमृत ध्वनि (३५४), माधवी सवैया (३६८), और गीतिका (३७१)। भूषण ने अपने ग्रन्थों का मुख्यांश मालती सवैया और मनहरण में लिखा है। अलङ्कारों के लक्षण ये दोहे में लिखते थे। छप्पय भी कुछ अधिकता से पाए जाते हैं, शेष छन्दों का प्रयोग बहुत कम हुआ है। उस समय के कवियों में इसी प्रकार के छन्द लिखने का कुछ नियम सा पड़ गया था जो प्राचीन प्रणाली के कवियों में आज तक चला आता है।

भूषण जी पदान्त में विश्राम चिन्ह रहित छन्द बहुत कम लिखते थे परन्तु शि० भू० के छन्द नम्बर २४६, ३६३ में ऐसा हुआ है। इसीको अङ्गरेज़ीमें Run-on-lines कहते हैं।

भूषण की कविता में विश्राम चिन्हों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। कोई कोई छन्द ऐसे हैं कि जिनमें विश्रामों पर ध्यान न देने से अर्थ में गड़बड़ पड़ सकती है।

उदाहरण शिवराजभूषण छंद नम्बर १, ३, ४०, ४८, ८१, १०७, २४७, ३०६, ३६६, ३८१ इत्यादि।

कुल बातों पर ध्यान देने से विदित होता है कि भूषण की भाषा और शब्द योजना की रीति बहुत ही प्रशंसनीय है।

भूषण महाराज ने विषय और विशेषतया नायक चुनने में बड़ी बुद्धिमत्ता से काम लिया है। शिवा जी और छत्र शालसे महानुभावों के पवित्र चरित्रों के वर्णन करने वाले की जहाँ तक प्रशंसा की जाय थोड़ी है। शिवाजी ने एक जिमींदार और बीजापुराधीश के नौकर के पुत्र हो कर चक्रवर्ती राज्य स्थापित करने की इच्छा को पूर्ण सा कर दिखाया और छत्रशाल बुन्देला ने जिस समय मुग़लों का सामना करने का साहस किया था उस समय उनके पास केवल पाँच सवार और पच्चीस पैदल थे। इसी "सेना" से इस महानुभाव ने दिल्ली का सामना करने की हिम्मत की और मरते समय अपने उत्तराधिकारियों को दो करोड़ मुनाफ़े का स्वतन्त्र राज्य छोड़ा।

भूषण महाराज अन्य कवियों की भाँति ऐसे छन्द कम बनाते थे जो केवल नायक के नाम बदल देने से किसी की प्रशंसा के हो सकते हों। इनकी कविता में सहस्रों घटनाओं का समावेश है, हर स्थान पर इन्होंने सैकड़ों ऐतिहासिक व्यक्तियों और ऐतिहासिक स्थानों का वर्णन छन्दों में किया है। इतने लोगों के नाम काव्य में ये महाशय लाये हैं कि कितने ही ऐतिहासिक ग्रन्थ ढूँढ़ने पर भी किसी तरह का पता लगाये नहीं लगता। मनुष्यों के नाम लिखने में प्रायः

उनके पिता का नाम और उनकी जाति और वासस्थान का भी पता भूषण जी लिख दिया करते थे। भूषण ने प्रबन्धध्वनि (Allusions) भी बहुत रक्खी हैं।

ऐतिहासिक घटनायें लिखने के साथ ही साथ भूषण जी की सत्यप्रियता भी विशेष सराहनीय है। यद्यपि शिवाजी ने इन्हें लाखों रुपये दिये तथापि इन्होंने उनके हारने तक का वर्णन किसी न किसी प्रकार कर ही दिया और जो बातें उनकी सत्यता एवं महत्व के प्रतिकूल थीं उन्हें भी कह दिया है। (शि० भू० छन्द नं० ६३, ६६, २१२, २१३, २५६ देखिए) इसी प्रकार ये महाशय छत्रशाल के यहाँ बैठे थे तब भी इन्हों ने कहा कि " साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रशाल को "। इनके चित्त में साहू का ख्याल अधिक था और छत्रशाल का उनके बाद। इस विचार को इन्होंने स्वयं छत्रशाल तक पर प्रकट करने में संकोच नहीं किया। कमाऊँ महाराज के यहाँ भी अपनी अप्रसन्नता प्रकट करने में इन्होंने संकोच नहीं किया। इसको स्वतन्त्रता भी कह सकते हैं। परन्तु सत्य-प्रियता का भी इन बातों में बहुत कुछ अंश है। इन्हों ने शिवा-जी के शत्रुओं को उनसे मेल करने की बहुत सलाह दी है। शि० भू० नम्बर १५०, २६१, २७६, २७६, ३१२ तथा शि० बा० नं० ३१ देखिये।

भूषण महाराज ने घटनाओं के साथ कभी कभी ख़याली अथवा भड़कीला वर्णन भी कर दिया है, पर ऐसी बातों को

उन्होंने सत्य बातों की भाँति नहीं कहा है और न उन्हें असत्य प्रमाणित करके उनकी सत्यप्रियता के प्रतिकूल कुछ कहना चाहिए। वे केवल कविता का चमत्कार दिखाने और शत्रुओं का उपहास करने के निमित्त कही गई हैं।

उदाहरण—शिवराज भूषण के छन्द नम्बर ८६, ६०, ६३, ६४, ६६. १०५, २०६, २२८, २६३, २७०, २७६ ३२३, ३२४, व शिवाबावनी के छन्द नम्बर १३ २६, ४१।

भूषण जी ने शिवाबावनी के छन्द नम्बर १२ में अमीर औरतों के विषयमें कहा है कि "किसमिस जिनको अहार" एवं "नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं"। नाशपाती अथवा किशमिश का अहार कोई बड़ी बात नहीं है। या तो भूषण ने ये बातें मज़ाक़ में कही हैं या उस समय नाशपाती और किशमिश बड़ी बहुमूल्य और अमीरपसन्द वस्तुएं होंगी।

भूषण जी ने कई जगह "गुसलख़ाना" का वर्णन किया है (शि० भू० नं० ३४, ७६, २०४, २०६ २६५, व शि० बा० नं० १६ देखिये) परन्तु साफ़ साफ़ कहीं नहीं कहा कि गुसलख़ाने में क्या हुआ। यह भी कई जगह कहा गया है कि दरबार में जाकर शिवाजी ने औरंगजेब को सलाम नहीं किया (शि० भू० नं० १८६, १६८, ३०६ शि० बा० छन्द नम्बर १६)। एक उपन्यास में हमने यह देखा है कि औरंगजेब ने जब सुना कि शिवाजी का इरादा उसे सलाम करने का नहीं है तो उसने फाटक में आराइश के कई सामान लगा कर उसे ऐसा छोटा

कर दिया कि विना सर झुकाये कोई मनुष्य उसके भीतर घुस न सके। इस पर शिवा जी ने तन कर अपना छाता इतना बाहर निकाल दिया कि सर देह के बहुत पीछे हो गया, तब उसने पहिले अपना पैर अन्दर रख के कुल देह अन्दर निकाल कर तब सर फाटक के भीतर किया जिससे कि उसे सर झुकाना नहीं पड़ा। टाड राजस्थान में लिखा है कि सिरोही के महाराज ने लग भग सन १६८० ई० के औरंगज़ेब के ही राजत्वकाल में बिलकुल ऐसा ही किया। इससे विदित होता है कि उस समय भी दरबार में जा कर अकड़ के कारण सलाम न करना सम्भव था। इसी प्रकार मारवाड़ के प्रसिद्ध अमरसिंह ने शाहजहाँ के सामने उसके मुसाहब सलावतख़ाँ को दरबार में मारडाला था तब शाहजहाँ मारे डर के ज़नाने में भाग गया था। अतः शिवाजी ने सलाम न किया हो और औरंगजेब इससे डर कर गुसलखाने में भाग गया हो तो कोई आश्चर्य्य नहीं। शिवाबावनी के छ० नं० १६ के अनुसार शायद औरंगजेब के गुसुलखाने के पास जाते हुए शिवाजी को ज्ञात हुआ हो कि बादशाह उसी में है और वह उस ओर झपटा हो (शि० भू० छं० नं० ३४ से भी इसी का समर्थन होता है)। भूषण जी जब अपने नायक की ख्याति बढ़ाने की कोई असम्भव अथवा असत्य बात कहते थे तो उसे एकाध बार दबी ज़बान कह कर छोड़ देते थे (शि० भू० नं० ६२) परन्तु उसे बार बार बड़ा जोर दे कर

मुसल्मानों में कभी कभी कुछ गड़बड़ हो जाने पर भी ऐसा मेल है कि इस प्रकार की बातें कोई भी नहीं लिख सकता। भूषणजी की कविता में जहाँ देखिये शिवाजी की विजयों से हिन्दुओं का प्रभुत्व बढ़ता देख पड़ता है। जिन दो एक हिन्दुओं से शिवाजी से युद्ध भी हुआ उनके विषय में इन्होंने यही कहा कि "हिन्दु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोउ टूटै"। शिवाजी ने राजा जयसिंह से युद्ध न करके अपनी हार मान ली और उन्हें अपने कुछ गढ़ दिये, परन्तु युद्ध करके हिन्दू ख़ून नहीं बहाया। इस पर यद्यपि शिवाजी की पराजय हुई तथापि भूषण की राय में उसका यश वर्द्धित हुआ।

"तैं जयसिंहहिं गढ़ दिये शिव सरजा जस हेत"।

फिर यद्यपि शाहजी मुसल्मानों के नौकर थे तथापि इन्होंने उनके राजपद की प्रशंसा न करके उन्हें—

"साहस अपार हिन्दुवान को अधार धीर सकल सिसौदिया सपूत कुल को दिया" (शि० भू० नं० १०) कहा है। नौकरी के विषय में केवल इतना इशारा है कि "साहि निज़ाम सखा भयो"।

इनके नायक छत्रसाल थे तथापि इन्होंने उनके पिता चम्पतिराय का एक भी छन्द न बनाया क्योंकि वे धौलपूर में औरंगज़ेब की ओर से लड़े थे जो हिन्दुओं का घोर शत्रु था। उसी युद्ध में छत्रसाल हाड़ा चम्पति के प्रतिकूल लड़े

थे तब भी इन्होंने चम्पति की प्रशंसा न करके छत्रसाल हाड़ा की प्रशंसा की, क्योंकि वे महाराज हिन्दुओं के शत्रु (औरंगज़ेब) के प्रतिकूल लड़े थे। वास्तव में भूषण की कविता के नायक हिन्दू हैं। जो मनुष्य हिन्दुओं के पक्ष में लड़ता था उसीका भूषण ने वर्णन किया है चाहे वह शिवराज हो या छत्रसाल या रावबुद्ध या अवधूत सिंह या शम्भाजी या साहूजी। इनको जातीयता का ऐसा ध्यान था कि इन्होंने शिवाजी के हिन्दू शत्रु उदयभानु आदि तक का प्रभाव पूरित वर्णन किया है।

परिणाम।

इन महाशय की कविता में कोई कहने योग्य दोष नहीं हैं। भाषा कवियों में इनका स्थान बहुत ऊँचा है और इनकी भाँति सम्मान किसी का नहीं हुआ। वास्तव में युद्धकाव्य करने में इन्होंने बड़ी ही कृतकार्य्यता पाई है। ऐसा उत्तम युद्ध का वर्णन किसी कवि ने नहीं किया।

भूषण के विषय में शिवसिंह सेंगर का मत यह है:—रौद्र, वीर, भयानक ये तीनों रस जैसे इनके काव्य में हैं ऐसे और कवि लोगों की कविता में नहीं पाये जाते"—(इन्होंने) "ऐसे ऐसे शिवराज के कवित्त बनाये हैं जिनके बराबर किसी कवि ने बीर यश नहीं बना पाया।" इनकी युद्ध कविता के विषय में इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इन्होंने

सर वाल्टर स्काट की भाँति किसी युद्ध का पूरा वर्णन नहीं किया। स्यात इनका ध्यान इस ओर कभी आकृष्ट नहीं हुआ, नहीं तो जब ये महाराज शिवराज के साथ रहा करते थे और कितने ही युद्ध इन्होंने अपने नेत्रों देखे, तो उनका वर्णन करना इन जैसे बड़े कवि के लिये कितनी बात थी ? यह हिन्दी साहित्य का दुर्भाग्य था कि इन महाशय ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। आज कल कतिपय महाराष्ट्र महानुभाव हिन्दी की अच्छी सेवा कर रहे हैं। सो मानो उनके उत्साह वर्द्धनार्थ भूषण ने पहिले ही से हिन्दी में महाराष्ट्र कुल चूड़ामणि महाराजा शिवाजी का यश वर्णन कर रक्खा है। जैसे कि अपने नायकों की प्रशंसा में भूषण ने केवल कोरी बड़ाई न कर के सत्य घटनाओं का वर्णन किया है वैसे ही यदि अन्य कविगण भी करते तो हिन्दुओं की ओर से भी भारतवर्ष का यथार्थ इतिहास लिखने में कोई कठिनाई न पड़ती। इस कवि की नरकाव्य करने में कुछ ऐसी हथौटी सी बँध गई थी कि जिसका यह कवि यश वर्णन करता था उसका रोम रोम प्रफुल्लित हो जाता था। इसी कारण इनका हर जगह असाधारण सत्कार होता था।

सब मिला कर निष्कर्ष यह निकलता है कि भूषण महा राज की कविता वास्तव में हिन्दी साहित्य की भूषण है। स्थिर लक्षणानुसार चाहे इनकी कविता को कोई महा-काव्य

न कह सके, परन्तु तो भी इन्हें हम बिना महाकवि कहे नहीं रह सकते।

हमारा ग्रन्थ सम्पादन।

भूषण जी की इस ग्रन्थावली के सम्पादन करने में हमने निम्नलिखित पुस्तकों से विशेष सहायता ली है:—

(१) भूषण ग्रन्थावली बंगबासी प्रेस, कलकत्ता।
(२) शिवराजभूषण नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ।
(३) " " पूनावाली प्रति।
(४) " " निर्णय सागर प्रेस, बम्बई।
(५) श्री शिवाबावनी व छत्रसालदशक (व स्फुट कविता) श्री कल्पतरु प्रेस, बम्बई।
(६) शिवराज भूषण बाराबंकी में मुद्रित।
(७) " " हस्त लिखित पं० युगुलकिशोर जी मिश्र के पुस्तकालय गन्धौली (सीतापुर) की प्रति
(८) " " हस्त लिखित कवि गोविन्द गिल्ला भाई जी काठियावाड़ के पुस्तकालय की।
(९) ग्रैंटडफ़ कृत महाराष्ट्र जाति का इतिहास।
(१०) रानड़े महोदय कृत महाराष्ट्रशक्ति का अभ्युदय।
(११) टाड कृत राजस्थान।
(१२) शिवसिंह सरोज।
(१३) बुन्देल खंड गज़ेटियर।

(१४) एलियट कृत मुसल्मानों के समय का इतिहास।
(१५) लाल कवि कृत छत्रसाल-प्रकाश।
(१६) हंटर कृत भारतीय इतिहास।
(१७) बर्नियर के ग्रन्थ में औरंगजेब का हाल।

सप्तम और अष्टम ग्रन्थों से और विशेषतया अष्टम ग्रन्थ से हमें विशेष सहायता मिली है। छन्द सब से अधिक गिल्ला भाई जी वाली प्रति में मिले, परन्तु सब से शुद्ध प्रति पं० युगुल किशोर जी वाली पाई गई। तो भी कहना ही पड़ता है कि बहुत शुद्ध कोई भी प्रति न थी और कतिपय तो महा नष्ट भ्रष्ट थीं। अतः हमें अनेक छन्द अपनी ओर से सब प्रतियों को मिला कर एवं अपने कंठस्थ छन्दों द्वारा संशोधित करने पड़े। कतिपय छन्द किसी भी प्रति में शुद्ध नहीं मिले ऐसी दशा में विवश होकर हमें वे छन्द अपनी ओर से शुद्ध करने पड़े हैं।

कविवर गोविन्द गिल्ला भाई जी की हम कहाँ तक कृतज्ञता प्रकाश करें जिन महाशय ने हम लोगों से भेंट न होने पर भी अपनी अमूल्य हस्त लिखित प्रति कृपा कर के हमारे पास भेज दी और कई महीने तक उसे हमारे पास रहने दिया। पण्डित युगुल किशोर जी हमारे निकटस्थ भतीजे ही हैं, अतः उनके धन्यवाद के विषय हमें मौनावलम्बन ही उचित है।

सहृदय पाठकों को ग्रन्थावलोकन से विदित होगया होगा कि इसमें शब्दों के लिखने में उनको शुद्ध संस्कृत के स्वरूप में

न लिख कर बिगड़े हुए (हिन्दी) स्वरूप में लिखा गया है। यथा स्रम(श्रम) सकति (शक्ति) भूषन। (भूषण) दुग्ग (दुर्ग)छिति (क्षिति) इत्यादि।

इस के विषय हमै केवल यही वक्तव्य है कि भाषा में जो रूप उत्तम समझा जाता है और जो रूप भूषण जी एवं अन्य कविगण पसन्द करते हैं वही लिखा गया है।

भाषा के कविगण केवल कटु बचाने एवं श्रुति माधुर्य्य लाने के लिये ऐसा किया करते हैं और इसमें कोई दूषण भी नही। इस प्रकार कविगण प्रायः निम्नलिखित वर्ण अपने काव्य में न आने देने का प्रयत्न करते हैं। ट वर्ग, व, श, ड़, ऋ, क्ष, युक्त वर्ण आधी रेफ, इत्यादि।

हमारे विचार में तो भाषा में इन संस्कृत व्याकरण सम्बन्धी झगड़ों के हटा देने से कोई दोष नहीं। फ़ारसी में ث ص س, ت ط, ز ذ ض ظ, الف ع, आदि के व्यवहार में जो कठिनाइयाँ पड़ती हैं वह सब पर विदित हैं। भाषा में ऐसी बातों के स्थिर रखने की कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती। हमें "कार्य्य, मर्म्म, लङ्क, मञ्च, कण्ठ, अन्त, कवि." इत्यादि को हिन्दी (देवनागरी) में कार्य या कारज, मर्म या मरम, लंक, मंच, कंठ, अंत, कबि," लिखने में कोई विशेष हानि नहीं प्रतीत होती। भाषा की लिखावट तो सुगम होनी चाहिए। यदि कोई मनुष्य बिना भाष्य पर्यंत पढ़े देवनागरी भी न लिख सके तो हिन्दी सर्वव्यापिनी कैसे हो सकती है ?

हमने इस संस्करण में अपनी टिप्पणियाँ दे दी हैं। कदाचित वह हमसे भी कम हिन्दी-परिचित महाशयों के काम आवैं और हमारा साल डेढ़ साल का श्रम सुफल हो जावे।

४-४ १९०७

श्यामबिहारी मिश्र
शुकदेवबिहारी मिश्र

भूषणग्रन्थावली।

शिवराज-भूषण।
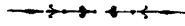
मङ्गलाचरण।

कवित्त शुद्ध घनाक्षरी[1] अथवा मनहरण

बिकट[2] अपार भव पंथ के चले को स्रम हरन करन बिजना से ब्रह्म ध्याइए। यहि लोक पर लोक सुफल करन कोकनद से चरन हिए आनि कै जुड़ाइए॥ अलि कुल कलित कपोल, ध्यान ललित, अनन्द रूप सरित मैं 'भूषन' अन्हाइए। पाप तरु भंजन बिघन गढ़ गंजन जगत मनरंजन द्विरदमुख गाइए॥ १॥

---

(१) यह उस दण्डक का नाम है जिसमे इकतीस वर्ण होते हैं, लघु गुरु का कोई क्रम नहीं होता, केवल अंतिम वर्ण अवश्य गुरु होता है, जिसमें सोलहवें वर्ण पर प्रथम यति होती है और अन्त के वर्ण पर द्वितीय। देवजी के मतानुसार १४वें अथवा १५वे वर्ण पर भी यति हो सकती है पर वे मध्यम एवं अधम यतिया है।

(२) यह छन्द मुद्रित प्रतियों मे नहीं छप है।

छप्पय अथवा षटपद[1] ।

जै जयन्ति जै आदि सकति जै कालि कपर्दिनि ।
जै मधुकैटभ छलनि देवि जै महिष विमर्दिनि ॥
जै चमुंड* जै चंड मुंड भंडासुर खंडिनि ।
जै सुरक्त जै रक्तबीज विड्डाल विहंडिनि ॥
जै जै निसुम्भ सुम्भद्दलनि भनि 'भूषन' जै जै भननि ।
सरजा समत्थ सिवराज कहँ देहि बिजै जै जग-जननि ॥२॥

(दोहा[2])

तरँनि[3], जगत जलनिधि तरँनि[4], जै जै आनँद ओक ।
कोक कोकनद सोकहर, लोक लोक आलोक[5] ॥ ३ ॥

---

(१) इस छन्द मे ६ पद होते है जिनमे प्रथम चर काव्य छन्द और अंतिम दो उल्लाला छन्द होते है । काव्य छन्द मे प्रत्येक पद २४ कला (मात्रा) का होता है और उसकी ११वीं कल पर प्रथम यति होती है । पद चार होते है । उल्लाला छन्द २८ कला का होता है जिसमें प्रथम यति १५वीं कला पर होती है ।

* चामुंडा; देवी जी ।

(२) "प्रथम कला तेरह धरौ पुनि गेरह गनि लेहु । पुनि तेरह गेरह गनौ दोहा लच्छन राहु" । लघु अक्षर की एक कला (मात्रा) होती है और गुरु की दो ।

(३) सूर्य ।

(४) नौक ।

(५) रोशनी अथवा दर्शन ।

अथ राजवंश वर्णन ।

राजत है दिनराज को बंस अवनि अवतंस ।
जामैं पुनि पुनि अवतरे कंसमथन प्रभु अंस ॥ ४ ॥
महाबीर ता बंस मैं भयो एक अवनीस ।
लियो बिरद " सीसौदिया " दियो ईस को सीस ॥ ५ ॥
ता कुल मैं नृपवृन्द सब उपजे बखत बलन्द ।
भूमिपाल तिन मैं भयो बड़ो " माल मकरन्द " ॥ ६ ॥
सदा दान किरवान मैं जाके आनन अम्भु ।
साहि निजामैं सखा भयो दुग्ग देवगिरि खम्भु ॥ ७ ॥
ताते सरजा बिरद भो सोभित सिंह प्रमान ।

---

(१) "सिसोदिया" क्षत्रिय सभी क्षत्रियो के सिरमौर है, इसी बंश के क्षत्रिय उदयपुर एवं नैपाल मे राज्य करते है, इनका हाल "टाड" कृत "राजस्थान" में देखने योग्य है। इनके पूर्व्व पुरुष "सिसौदा" निवासी थे ।

(२) किसी किसी प्रति मे इनका नाम "भालमकरन्द" लिखा है पर शुद्ध यही मालमकरन्द है, क्योकि इतिहास मे इनका नाम "मालो जी" दिया है ।

(३) पानी । दान और कृपाण (बहादुरी) मे जिसके मुंह पर सदा पानी (आब) रहता है ।

(४) निज़ामशाही बादशाह ।

(५) मालोजी का "सर जाह" खिताब था, इसीसे "सरजा" निकला । इसका अर्थ सिंह भी है ।

रन-भू-सिला सु भौंसिला[1] आयुषमान खुमान[2] ॥ ८ ॥
भूषन भनि ताके भयो भुव-भूषन नृप साहि[3] ।
रातौ दिन संकित रहैं साहि सबै जग माहि ॥ ९ ॥

कवित्त—मनहरण ।

एते हाथी दीन्हे माल, मकरन्द जू के नन्द जेते गनि

---

(१) शिवा जी के घराने की "भौंसिला" उपाधि थी !

(२) भूषण जी शिवराज को "सरजा, भौंसिला, खुमान" इत्यादि नामों से पुकारते हैं सो इन उपाधियों की यहां पर उन्होने व्युत्पत्ति सी की है ।

(३) शाह जी, महाराज शिवराज के पिता । भूषण जी महाराज शिवा जी को उदयपुर के सुप्रसिद्ध "सिसौदिया" कुलोद्भव बतलाते हैं और यह ठीक भी जान पड़ता है । यद्यपि सुनते हैं कि आज कल कुछ अदूरदर्शी लोग भ्रमवश शिवा जी के वंशज महाराज कोल्हापुर को क्षत्रिय तक मानने में आनाकानी करते हैं जिसका पूरा बखेड़ा ही उठ खड़ा हुआ है पर टाड कृत "राजस्थान" में इनके वंश का "सिसौदिया" घराने से यो सम्बन्ध लिखा है—

अजयसी (महाराजा उदयपुर सन् १३०१ ईसवी), सुजन सी, दलीप जी, सिवजी, भोरा जी, देवराज, उग्रसेन माहोल जी, खेलो जी, जनको जी, सत्तो जी, सम्भा जी, शिवा जी । (इण्डियन पबलीकेशन सोसायटी, कलकत्ता द्वारा सन् १८९९ ई० मे बंगाल प्रेस मे मुद्रित प्रति की जिल्द १ पृष्ठ २८२ देखिये) इसमे शिवा जी के पिता का नाम शम्भा जी और मालो जी का माहोल जी लिखा है; कदाचित उन महानुभावों के ये उपनाम हों ।

सकति बिरंचि हू की न तिया[1]। 'भूषन' भनत जाकी साहिबी सभा के देखे लागैं सब और छितिपाल छिति में छिया[2]॥ साहस अपार हिन्दुवान को अधार धीर, सकल सिसौदिया सपूत कुल को दिया। जाहिर जहान भयो साहिजू खुमान बीर साहिन को सरन सिपाहिन को तकिया॥१०॥

दोहा।

दसरथ जू के राम भे बसुदेव के गोपाल।
सोई प्रगटे साहि के श्री सिवराज भुवाल॥ ११॥
उदित होत सिवराज के मुदित भए द्विजदेव।
कलियुग हरयो मिट्यो सकल म्लेच्छन को अहमेव॥ १२॥

कबित्त—मनहरण।

जा दिन जनम लीन्हो भू पर भुसिल[3] भूप ताही दिन जीत्यो अरि उर के उछाह को। छठी छत्रपतिन को जीत्यो भाग अनायास जीत्यो नामकरन में करन प्रवाह को॥ 'भूषन' भनत बाल लीला गढ़कोट जीत्यो साहि के सिवाजी करि चहूँ चक्क चाहको। बीजापुर गोलकुंडा जीत्यो लरिकाइ ही मैं ज्वानी आए जीत्यो दिलीपति पातसाह को॥ १३॥

---

(१) बिरंचि हू की तिया न=सरस्वती भी नहीं।
(२) अत्यन्त मैले, तिरस्करणीय।
(३) अर्थात् भौंसिला।

(दोहा ।)

दच्छिन के सब दुग्ग जिति दुग्ग सहार बिलास ।
सिव सेवक सिव गढ़ पती कियो रायगढ़ बास[1] ॥ १४ ॥

अथ रायगढ़ वर्णन ।

(मालती सवैया[2] ।)

जापर साहि तनै सिवराज सुरेस की ऐसी सभा सुभ साजै । यों कवि 'भूषन' जम्पत[3] है लखि सम्पति को अलका-पति लाजै ॥ जा मधि तीनहु लोक की दीपति ऐसो बड़ो गढ़राज विराजै । वारि पताल सी माची मही अमरावति की छबि ऊपर छाजै ॥ १५ ॥

---

(१) राजगढ़ को शिवा जी ने म्होरबुध पहाड़ी पर १६४७ ई० मे बसाया था और १६६५ मे उन्हे वह जयसिंह को दे देना पड़ा । शिवाजी के पश्चात मरहठो ने इसे १६९२ ई० मे फिर से जीत लिया । सन १६६२ ई० में शिवा जी ने राजगढ़ छोड़ कर रायगढ़ को अपना वासस्थान बनाया । यह कदाचित रायगढ़ का ही वर्णन है—भूमिका देखिये ।

(२) इसमे सात भगण और दो अंतिम अक्षर गुरु होते है । इसका रूप यह है (''मुनिभा'' ०SIISIISIISIISIISIISIISS०) । भगण में एक गुरु और दो लघु अक्षर होते है । कड़ाई से देखने पर बहुत कम सवैया शुद्ध निकलेगी परन्तु छन्द बिगड़ने मे गुरु अक्षर को भी लघु करके पढ़ लिया जाता है ।

(३) जपता है; बार बार कहता है ।

हरिगीतिका छन्द[1] ।

मनिमय महल सिवराज के इमि रायगढ़[2] मैं राजहीं ।
लखि जच्छ किन्नर सुर असुर गन्धर्व्व हौंसनि साजहीं ॥
उत्तंग मरकत[3] मन्दिरन मधि बहु मृदंग जु बाजहीं ।
घन-समै[4] मानहु घुमरि करि घन घनपटल[5] गलगाजहीं[6] ॥१६॥
मुकतान की झालरिन मिलि मनि-माल छज्जा छाजहीं ।
सन्ध्या समै मानहुँ नखत गन लाल अम्बर राजहीं ॥
जहँ तहां ऊरध उठे हीरा किरन घन समुदाय हैं ।
मानो गगन तम्बू तन्यो ताके सपेत तनाय हैं ॥ १७ ॥

---

(१) इसका लक्षण यों है "जहँ पाच चौकल बहुरि षट कल अन्त यक गुरु आनिए । बर विरति नव मुनि भानु पर रचि कला सो रवि ठानिए ।" इसमे २८ कला होती है और अन्त का अक्षर गुरु होता है । सोलहवी कला पर पहिली यति और जैसा कि सभी छन्दो मे होता है, अन्त मे दूसरी यति पडती है ।

(२) छ० न० १४ देखिये ।

(३) नीलम ।

(४) समय पर अर्थात् ठीक समय अथवा वर्षा काल में ।

(५) तह, पर्त ।

(६) गल=गले से अर्थात् जोर से । ग्राम्य भाषा मे "गलगंजौं का अर्थ प्रसन्नता पूर्वक बोलने का लिया जाता है सो भी यहां पर ठीक उतरता है ।

भूषन भनत जहँ परसि कै मनि पुहुपरागेन[1] की प्रभा ।
प्रभु पीत पट की प्रगट पावत सिंधु मेघन की सभा ॥
मुख नागरिन के राजहीं कहुँ फटिक महलन संग मैं ।
बिकसंत कामल कमल मानहु अमल गंग तरंग मैं ॥ १८ ॥
आनन्द सों सुन्दरिन के कहुँ बदन इन्दु उदोत हैं ।
नभ सरित के प्रफुलित कुमुद मुकुलित कमल कुल होत हैं ॥
कहुँ बावरी सर कूप राजत बद्ध मनि सोपान हैं ।
जहँ हंस सारस चक्रबाक बिहार करत सनान हैं ॥ १९ ॥
कितहूँ बिसाल प्रबाल जालन जटित अंगनि भूमि है ।
जहँ ललित बागनि द्रुमलतानि मिलिरहै झिलमिलि[2] झूमि है ॥
चम्पा चमेली चारु चन्दन चारिहू दिसि देखिए ।
लवली[3] लवंग यलानि[4] केरे लाखहों लगि लेखिए ॥ २० ॥
कहुँ केतकी कदली करौंदा कुंद अरु करबीर[5] हैं ।
कहुँ दाख[6] दाड़िम[7] सेब कटहल तूत अरु जम्भीर है ॥

---

(१) पुखराग अथवा पुखराज ।
(२) झिलमिला प्रकाश ।
(३) कोमल बल्कला; नोयाड़ि; एक फल बृक्ष ।
(४) एला; इलाएची ।
(५) कनेर ।
(६) मुनक्का ।
(७) अनार ।

कितहूँ कदम्ब कदम्ब[1] कहुँ हिंताल[2] ताल तमाल[3] हैं।
पीयूष ते मीठे फले कितहूँ रसाल[4] रसाल[5] हैं॥ २१॥
पुन्नाग[6] कहुँ कहुँ नागकेसरि कतहुँ बकुल असोक हैं।
कहुँ ललित अगर गुलाब पाटल[7] पटल[8] बेला थोक हैं॥
कितहूँ नेवारी माधवी[9] सिंगारहार[10] कहूँ लसैं।
जहँ भाँति भाँतिन रंग रंग बिहंग आनँद सों रसैं॥ २२॥

(षट्पद)

लसत बिहंगम बहु लवनित बहु भांति बाग महँ।
कोकिल कीर कपोत केलि कल कल करंत तहँ॥
मंजुल महरि मयूर चटुल[11] चातक चकोर गन।

---

(१) समूह।
(२) पूगरोट वृक्ष।
(३) आबनूस।
(४) आम का पेड़।
(५) रसीला।
(६) देवबल्लभ; एक बड़ा पुष्पवृक्ष।
(७) गोला बिरंग; एक लाल और सफेद फूल।
(८) तह।
(९) चन्द्रवल्ली; एक बौंढ़ी।
(१०) हरसिंगार; एक पुष्प वृक्ष।
(११) चंचल।

पियत मधुर मकरन्द[1] करत झंकार भृंग घन ॥
'भूषन' सुबास फल फूल युत छहुँ ऋतु बसंत बसंत जहँ ।
इमि राजदुग्ग राजत रुचिर सुखदायक सिवराज कहँ ॥२३॥

दोहा ।

तहँ नृप रजधानी करी जीति सकल तुरकान ।
सिव सरजा रुचि दान में कीन्हो सुजस जहान ॥ २४ ॥

अथ कविबंश वर्णन ।

देसन देसन ते गुनी आवत जाचन ताहि ।
तिनमें आयो एक कवि भूषन कहियतु जाहि ॥ २५ ॥
दुज[2] कनौज कुल कस्यपी रतनाकर सुत धीर ।
बसत तिविक्रमपुर सदा तरनि तनूजा तीर ॥ २६ ॥
बीर बीरबर[3] से जहाँ उपजे कवि अरु भूप ।
देव विहारीश्वर जहाँ विश्वेश्वर तद्रूप ॥ २७ ॥

---

(१) पुष्परस ।

(२) इन दोहों से सपष्ट है कि भूषण जी कान्यकुब्ज ब्राह्मण कश्यपगोत्री (त्रिपाठी) श्री रत्नाकरजी के पुत्र त्रिविक्रमपुर मे यमुना जी के किनारे रहते थे जहां बीरबलजी हो गए थे और विहारीश्वर ग्रामदेव थे । इसकी बिशेष व्याख्या भूमिका मे देखिए ।

(३) राजा बीरबल मौजा अकबरपुर बीरबल जिला कानपुर में उत्पन्न हुए थे । यह अकबरपुर तहसील अकबरपुर नहीं बरन एक और गांव यमुनाजी के किनारे है । भूमिका देखिए ।

कुल सुलंक चितकूटपति साहस सील समुद्र।
कवि भूषन पदवी दई हृदयराम सुत रुद्र[1] ॥ २८ ॥
सिव चरित्र लखि यों भयो कवि भूषन के चित्त।
भाँति भाँति भूषननि[2] सों भूषित करौं कवित्त ॥ २९ ॥
सुकविन हूं की कछु कृपा समुझि कविन को पंथ।
भूषन भूषनमय[2] करत "शिवभूषन" सुभ ग्रंथ ॥ ३० ॥
भूषन सब भूषननि मैं उपमहि उत्तम चाहि।
याते उपमहि आदि दे बरनत सकल निबाहि ॥ ३१ ॥

अथ ग्रन्थ प्रारम्भः ॥

उपमा।

लक्षण-दोहा।

जहाँ दुहुन की देखिए सोभा बनत समान।
उपमा भूषन ताहिको 'भूषन' कहत सुजान ॥ ३२ ॥
जा को बरनन कीजिए सो उपमेय प्रमान।

---

(१) "हृदयराम" सुत "रुद्रसाह" का नाम बुँदेलखण्ड गजेटियर में या अन्यत्र हमें न मिला और न स्वयं चित्रकूट ही में उनका कुछ पता चला। कदाचित ये बघेलो के बबुवाने मे हों। स्फु० का० छं० न० २ का नोट देखिए।

(२) अलंकारों।

जाकी सरवरि कीजिए ताहि कहत उपमान ॥ २३ ॥

उदाहरण—मनहरण दण्डक।

मिलतहि कुरुख[2] चकत्ता[3] को निरखि कीन्हों सरजा सुरेस ज्यों दुचित ब्रजराज को। 'भूषन' कुमिस[4] गैरमिसिल[5] खरे किए को किएँ म्लेच्छ मुरछित करि कै गराज को॥ अरे ते गुसुल खाने बीच ऐसे उमराय लै चले मनाय महराज सिवराज को। दाबदार निरखि रिसानो दीह दलराय जैसे गड़दार[6] अड़दार[7] गजराज को॥ ३४ ॥

---

(१) यदि कहैं "मुखचन्द्र सो मनोहर है" तो "मुख" उपमेय होगा और "चन्द्र" उपमान। उपमा मे वाचक और धर्म (गुण) भी होते हैं सो यहां "सा" वाचक है और "मनोहर" धर्म है।

(२) कुरुख कीन्हो=मुंह बिगाड़ दिया; क्रोधांध कर दिया।

(३) चग़ताई के वंशज अर्थात औरंगजेब को।

(४) बुरे बहाने से।

(५) अनुचित साथियो मे (पंज हज़ारियो की पंक्ति मे।)

(६) वे सोटे मार लोग जो मस्त हाथी को चुचकार कर आगे बढ़ाते हैं।

(७) ऐंडदार; मस्त। इन दो पदों का आशय यह है कि शिवा जी को गुसलखाने के पास अड़ते (अर्थात ठिठकते) देख(औरंगज़ेब पर जोखों आजाने के भय से) दरबार के अमीर उमरा लोग उसे (अर्थात शिवाजी को) यों मना ले चले जैसे किसी दाबदार मस्त हाथी को मस्ताया हुआ देख सोंटेमार लोग चुचकार कर आगे ले चलते

अन्यच्च–मालतीसवैया।

सासतां खां दुरजोधन सो औ दुसासन सो जसवन्त

हैं। गुसलखाने के विषय पर भूमिका देखिए। यह घटना सन् १६६६ ईसवी की है।

(१) शाइस्ताखाँ दिल्ली का एक सरदार था। चाकन को जीतता हुआ वह पूना को विजय करके वहीं ठहरा। एक रात को शिवाजी केवल २५ योद्धाओं के साथ उसके महल्ल में तरकीब से घुस गया और गड़बड़ म सैकड़ों यवनो तथा शाइस्ताखाँ के लड़के को मार डाला। शाइस्ताखां जान बचाने को खिड़की से बाहर कूदने लगा कि शिवाजी ने दौड़ कर उसे एक तलवार मारी जिससे उसका सिर तो बच गया पर एक हाथ की कुछ अँगुलिया कट गई, पर वह भाग गया। लौटते हुए हज़ारों दुश्मनों के बीच से शिवाजी केवल उन्हीं २५ आदमियों के साथ मशाल जलाए सिंहगढ़ चला गया। सन् १६६३ ईसवी का हाल है।

(२) जसवन्तसिंह माड़वार के महाराज थे। ये शाइस्ताखां के साथ सन् १६६३ ई: मे दक्षिण गए थे। कहते हैं कि ये शिवाजी से मिल गए थे और इन्हीं की सलाह से शाइस्ता की दुर्गत हुई। पहिले तो औरंगज़ेब ने शाइस्ता व जसवन्त दोनों को वापस बुला लिया था परन्तु पीछे से शाइस्ता को बंगाल का गवर्नर कर के भेजदिया और जसवन्त को शाहज़ादा मुअज्ज़म की मातहती में फिर दक्खिन भेजा। जसवन्त सिंह ने सिंहगढ़ घेरने का नाममात्र प्रयत्न किया परन्तु फिर उसे छोड़ दिया (देखो शिवा बावनी छं० १३ "जाहिर है जग में जसवन्त लियो गढ़ सिंह में गीदर बानो"।) इन्हें सन्

निहार्‌यो । द्रोन सों भाऊ[1] करन्न[2] करन्न सो और सबै दल सो दल मार्‌यो ॥ ताहि बिगोय सिवा सरजा भनि 'भूषन' औनि छता यों पछार्‌यो । पारथ कै पुरुषारथ भारथ जैसे जगाय जयद्रथ[3] मार्‌यो ॥ ३५ ॥

लुप्तोपमा ।

लक्षण-दोहा ।

उपमा बाचक-पद धरम, उपमेयो, उपमान ।
जामैं सो पूर्णोपमा लुप्त घटत लौं मान ॥ ३६ ॥

उदाहरण-(धर्मलुप्ता)-मालती सवैया ।

पावक तुल्य अमीतन को भयो, मीतन को भयो धाम

१६६५ में औरंगज़ेब ने वापस बुला लिया ।

(३) बूंदी के छत्रसाल (बुंदेलखण्ड के नामी छत्रसाल नहीं) के पुत्र भाऊ सिंह । इतिहास में इनका शिवाजी से लड़ना नहीं पाया जाता तो भी दक्षिण में ये औरंगज़ेब की ओर से अवश्य गए थे और शिवाजी से यह ज़रूर लड़े होंगे । ये बूंदी की गद्दी पर सन् १६५८ में बैठे थे ।

(१) बीकानेर के महाराज रायसिंह के पुत्र महाराज करन सन् १६३२ ई: में गद्दी पर बैठे और लगभग १६७४ तक राज्य किया । इन्हें दो हज़ारी का मनसब था ।

(२) जयद्रथ दुर्योधन का बहनोई था । उसे अर्जुन ने शकट व्यूह के अन्दर घुस कर मारा था ।

सुधा को। आनन्द भो गहिरो समुदै कुमुदावलि तारन को बहुधा को॥ भूतल माहिं बली सिवराज भो 'भूषन' भाखत शत्रु सुधा[1] को। बन्दन[3] तेज त्यों चन्दन[4] कीरति सोंधे सिंगार बधू बसुधा को॥ ३७॥

अन्यच्च मनहरण।

आए दरबार बिललाने छरीदार देखि जापता करनहारे नेक हू न मनके[5]। 'भूषन' भनत भौंसिला के आय आगे ठाढ़े बाजे भए उमराय तुजुक[6] करन के॥ साहि रह्यो जकि सिव साहि रह्यो तकि और चाहि रह्यो चकि बने ब्योंत अनबन के। ग्रीषम के भानु सो खुमान को प्रताप देखि तारे सम तारे गए मूंदि तुरकन के॥ ३८॥

अनन्वय।

लक्षण-दोहा।

जहाँ करत उपमेय को उपमेयै उपमान।
तहाँ अनन्वै कहत हैं भूषन सकस सुजान॥ ३९॥

---

(१) चन्द्र पर उक्ति।

(२) फुजूलियात; वाहियात बातें।

(३) ईंगुर।

(४) चांदनी अथवा शीतल।

(५) चाप न की; हिले तक नहीं। (६) अदब।

उदाहरण—मालती सवैया।

साहि तनै सरजा तव द्वार प्रतिच्छन दान की दुन्दुभि बाजै। 'भूषन' भिच्छुक भीरन को अति भोजहु ते बढ़ि मौजनि साजै॥ राजन को गन, राजन! को गनै? साहिन मैं न इती छबि छाजै। आजु गरीबनेवाज मही पर तो सो तुही सिवराज बिराजै॥ ४०॥

प्रथम प्रतीप।

लक्षण—दोहा।

जहँ प्रसिद्ध उपमान को करि बरनत उपमेय।
तहँ प्रतीप उपमा कहत भूषन कविता प्रेय॥ ४१॥

उदाहरण—मालती सवैया।

छाय रही जितही तितही अतिही छबि छीरधि रंग करारी। 'भूषन' सुद्ध सुधान के सौधनि[1] सोधति सी धरि ओप उज्यारी॥ यों तम तोमहि चाबिकै चन्द चहूं दिसि चाँदनि चारु पसारी। ज्यों अफजल्लहि[2] मारि मही पर कीरति श्री सिवराज बगारी॥ ४२॥

---

(१) महलों को।

(२) यह बीजापुरी सरदार था। विशेष हाल छन्द न० ६३ के नोट में देखिए। इस अवसर पर केवल तन्ना जी शिवा जी के साथ था, यह हाल सन् १६५८ ई० का है।

द्वितीय प्रतीप ।

लक्षण–दोहा ।

करत अनादर बर्न्य[1] को पाय और उपमेय ।
ताहू कहत प्रतीप जे भूषन कविता प्रेय ॥ ४३ ॥

उदाहरण–दोहा ।

शिव ! प्रताप तव तरनि सम, अरि पानिप हर मूल ।
गरब करत केहि हेत, है बड़बानल तो तूल[2] ॥ ४४ ॥

तृतीय प्रतीप ।

लक्षण–दोहा ।

आदर घटत अबर्न्य[3] को जहां बर्न्य के जोर ।
तृतिय प्रतीप बखानही तहँ कबिकुलसिरमौर ॥ ४५ ॥

उदाहरण–दोहा ।

गरब करत कत चांदनी हीरक छीर समान ।
फैली इती समाज गत कीरति सिवा खुमान ॥ ४६ ॥

चतुर्थ प्रतीप ।

लक्षण–दोहा ।

पाय बरन उपमान को जहाँ न आदर और ।
कहत चतुर्थ प्रतीप हैं भूषन कबि सिरमौर ॥ ४७ ॥

---

(१) उपमेय ।
(२) तुल्य ।
(३) उपमान ।

उदाहरण-कवित्तमनहरण ।

चन्दन मैं नाग, मद भरयो इन्द्र नाग, विषभरो सेसनाग कहै उपमा अबस को ? । भोर ठहरात, न कपूर बहरात, मेघ सरद उड़ात बात लागे दिसि दस को । शम्भु नील ग्रीव, भौंर पुंडरीक ही बसत, सरजा सिवा जी सन 'भूषन सरस को ? । छीरधि मैं पंक, कलानिधि में कलंक, याते रूप एक टंक ए लहै न तव जस को ॥ ४८ ॥

पंचम प्रतीप ।

लक्षण-दोहा ।

हीन होय उपमेय सों नष्ट होत उपमान ।
पंचम कहत प्रतीप तेहि भूषन सुकवि सुजान ॥ ४९ ॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण ।

तो सम हो सेस सो तो बसत पताल लोक ऐरावत गज सो तो इन्द्र लोक सुनिये । दुरे हंस मानसर ताहि मैं कैलास धर सुधा सुरबर सोऊ छाड़ि गयो दुनियै । सूर दानी सिरताज महाराज सिवराज रावरे सुजस सम आजु काहि गुनिये? । 'भूषन' जहाँ लौं गनौं तहाँ लौं भटकि हारयो लखिये कछू न केती बातैं चित चुनिये ॥ ५० ॥

अपरंच-मालती सवैया ।

कुन्द कहा पय वृन्द कहा अरु चन्द कहा सरजा जस

आगे ? । 'भूषन' भानु कृसानु कहाब[1] खुमान प्रताप महीतल पागे ? । राम कहा द्विजराम कहा बलराम कहा रन मैं अनुरागे ? । बाज कहा मृगराज कहा अति साहस मैं सिवराज के आगे ? ॥ ५१ ॥

यों सिवराज को राज अडोल कियो सिव जोब[2] कहा धुवै[3] धूं[4] है ? । कामना दानि खुमान लखे न कछू सुर-रूख न देव-गऊ है । 'भूषन' भूषन मैं कुल भूषन भौंसिला भूप धरे सब भू है । मेरु कछू न कछू दिगदन्ति न कुंण्डलि[5] कोल कछू न कछू है ॥ ५२ ॥

उपमेयोपमा ।

लक्षण-दोहा ।

जहाँ परस्पर होत है उपमेयो उपमान ।
भूषन उपमेयोपमा ताहि बखानत जान ॥ ५३ ॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण ।

तेरो तेज, सरजा समत्थ ! दिनकर सो है, दिनकर सो है तेरे तेज के निकर सो । भौंसिला भुवाल ! तेरो जस हिमकर

(१) कहा अब ?
(२) जो अब ।
(३) निश्चय करके ।
(४) ध्रुव नक्षत्र ।
(५) सर्प, यहा शेष जी ।

सोहै हिमकर सोहै तेरे जस के अकर[1] सो । 'भूषन' भनत तेरो हियो रतनाकर सो रतनाकरो है तेरे हिए सुखकर सो । साहि के सपूत सिव साहि दानि ! तेरो कर सुरतरु सोहै, सुरतरु तेरे कर सो ॥ ५४ ॥

मालोपमा ।

लक्षण-दोहा ।

जहाँ एक उपमेय के होत बहुत उपमान ।
ताहि कहत मालोपमा भूषन सुकबि सुजान ॥ ५५ ॥

उदाहरण—कबित्त मनहरण ।

इन्द्र जिमि जम्भ पर बाड़व सुअम्भ पर रावन सदम्भ पर रघुकुल राज है । पौन बारिबाह[2] पर सम्भु रतिनाह पर ज्यों सहसबाह पर राम द्विजराज है । दावा द्रुम दण्ड पर चीता मृगझुण्ड पर 'भूषन' बितुण्ड पर जैसे मृगराज है । तेज तम अंस पर कान्ह जिमि कंस पर त्यों मलिच्छ बंस पर सेर सिवराज है ॥ ५६ ॥

ललितोपमा ।

लक्षण-दोहा ।

जहँ समता को दुहुन की लीलादिक पद होत ।

---

(१) आकर; कान (खानि) ।
(२) बादल ।

ताहिं कहत ललितोपमा सकल कबिन के गोत ॥ ५७ ॥
बिहसत, निदरत, हँसत जहँ, छबि अनुसरत बखानि ।
सत्रु मित्र इमि औरऊ लीलादिक पद जानि ॥ ५८ ॥

उदाहरण-कवित्त मनहरन ।

साहि तनै सरजा सिवा की सभा जामधि है मेरु वारी सुर की सभा को निदरति है । 'भूषन' भनत जाके एक एक सिखर ते केते धौं नदी नद की रेलै[1] उतरति है । जोन्ह को हँसत जोति हीरा मनि मन्दिरन कन्दरन मैं छबि कुहू[2] की उछरति है । ऐसो ऊँचो दुरग महाबली[3] को जामैं नखतावली सों बहस दिपावली धरति है ॥ ५९ ॥

रूपक ।

लक्षण—दोहा ।

जहाँ दुहुन कौ भेद नहिं बरनत सुकबि सुजान ।
रूपक भूषन ताहि को भूषन करत बखानै[4] ॥ ६० ॥

---

(१) रेला; बड़ा बहाव,

(२) अमावस्या की (अर्थात् कन्दरों से अमावस्या को छबि उछल जाती है या भाग निकलती है अर्थात् उनका अँधेरा दूर हो जाता है)

(३) बड़ा बीर अर्थात् शिवराज ।

(४) भूषण जी ने रूपक का वही लक्षण दिया है जो अन्य कवियों ने "अभेद रूपक" का दिया है । रूपक का लक्षण रघुनाथ कवि का बहुत उत्तम है "विषई जहां अभेद है विषय जहां तद्रूप"

उदाहरण—छुप्पय ।

कलियुग जलधि अपार उद्ध अधरम्म ऊर्म्मि[1] मय । लच्छनि लच्छ मलिच्छ कच्छ अरु मच्छ मगर चय । नृपति नदीनद वृन्द होत जाको मिलि नीरस । भनि 'भूषन' सब भुम्मि घेरि किन्निय सुअप्प बस । हिंदुवान पुन्य गाहक बनिक तासु निवाहक साहि सुव[2] । बर बादवान किरवान धरि जस जहाज सिवराज तुव ॥ ६१ ॥

साहिन मन समरत्थ जासु नवरंग[3] साहि सिरु । हृदय जासु अब्बास[4] साहि बहुबल बिलास थिरु । एदिल[5] साहि कुतुब्ब[6] जासु जुग भुज 'भूषन' भनि । पाय म्लेच्छ उमराय

---

(१) ऊर्म्मि, लहर ।

(२) सुत ।

(३) औरंगजेब दिल्ली का सुप्रसिद्ध बादशाह ।

(४) यह उस समय फारस का बादशाह था इसी से उसको "हृदय" कहा गया है इसका शाहजहां और औरंगजेब से मेल और लिखा पढ़ी थी ।

(५) आदिल शाह बीजापुर का "बादशाह" । इसके यहा शिवाजी के पिता साहजी भौंसिला नौकर थे पर शिवाजी ने युद्ध ठान दिया और इसे खूबही छकाया ।

(६) कुतुब शाह गोलकुंडा का "बादशाह" । दक्षिण में पाच खुदमुख्तार "बादशाहियां" थीं अर्थात् बेदर, अहमदनगर, इलच पुर, बीजापुर और गोलकुंडा । प्रथम तीन को औरंगजेब ने सिंहासन पर

काय तुरकानि आन गनि। यह रूप अवनि अवतार धरि जेहि जालिम जग दंडियव। सरजा सिव साहस खग्ग गहि कलियुग सोइ खल खंडियव ॥ ६२ ॥

अपरंच—कवित्त मनहरण।

¹सिंह थरि जाने बिन जावली जँगल भठी हठी गज एदिल पठाय करि भटक्यो। 'भूषन' भनत देखि भभरि भगाने सब हिम्मति हिये मैं धारि काहुवै न हटक्यौ। साहि के सिवाजी गाजी सरजा समत्थ महा मदगल अफजलै पंजा

बैठने के पहिले ही जीत लिया था और अंतिम दो को १६८८ई० मे छीन लिया। इनको शिवाजी ने खूबही सताया था।

(१) जावली देश के जंगल को सिंह के रहने वाली भट्ठी न जान कर हठी आदिलशाह हाथी रूपी अफ़जल खां को भेज कर चूक गया। थरि=सिंह की भट्ठी।

(२) अफ़जल खां एक बीजापुरी सरदार था और आदिल शाह की ओर से शिवाजी से लडने गया था। युद्ध के पहिले ही अफ़जल खा ने शिवा जी के पिता को अपना मित्र बतला कर उससे कहला भेजा कि "तुम हमारे मित्र—पुत्र अर्थात् भतीजे हो इससे हम से अकेले आ कर मिलो फिर चाहे लड़ना चाहे साथ करना"। शिवा जी यह विचार कर कि कदाचित् अफ़ज़ल कोई छल करे सादे कपड़ों के नीचे ज़िरहबखतर पहिन कर और व्याघनख छिपा कर उस से मिलने गया। अफ़ज़ल ने बाते करते करते शिवा जी पर कटार चलाही तो दी, पर शिवा जी बच गया और उसने व्याघ्रनख से अफज़ल का मुह

बल पटक्यो। तो बिगिरि ह्वै करि[1] निकाम निज धाम कहँ आकुतं[2] महाउत सुआंकुस लै सटक्यौ ॥ ६३ ॥

रूपक के दो अन्य भेद (न्यूनाधिक)

लक्षण। दोहा।

घटि बढ़ि जहँ बरनन करै करिकै दुहुन अभेद।
भूषन कवि औरौ कहत द्वै रूपक के भेद ॥ ६४ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण।

साहि तनै सिवराज 'भूषन' सुजस तव बिगिर कलंक चन्द उर आनियतु है। पंचानन एक ही बदन गनि तोहि गजानन गज बदन बिना बखानियतु है। एक सीस ही सहससीस कला करिबे को दुहूँ दृग सों सहसदृग मानियतु है। दुहूँ कर सों सहसकर मानियतु तोहि दुहूँ बाहु सों सहसबाहु जानियतु है ॥ ६५ ॥

जेते हैं पहार भुव माहिं पारावार तिन सुनि के अपार

नोच लिया (छन्द न० २५२ देखिए) और उसी दम तलवार से उसका काम तमाम किया। उसने पहिले ही से अपनी सेना लगा रक्खी थी, सो एक दम वह अफ़ज़ल की फ़ौज पर टूट पड़ी और उसे तितर बितर कर दिया। यह घटना सन् १६५९ ईस्वी की है।

(२] बगैर, बिना।

[३] याकूत खां का पता इतिहास में नहीं है। एक याकूत खा शाहजहां का सरदार था।

कृपा गहे सुख फैल है । 'भूषन' भनत साहि तनै सरजा के पास आइबे को चढ़ी उर हौंसनि की ऐल[1] है । किरवान बज्र सों बिपच्छ करिबे के डर आनिकै कितेक आए सरन की गैल है । मघवा[2] मही मैं तेजवान सिवराज बीर कोट करि सकल सपच्छ किए सैल है ॥ ६६ ॥

परिणाम ।

लक्षण—दोहा ।

जहँ अभेद करि दुहुन सों करत और स्वे[3] काम ।
भनि भूषन सब कहत हैं तासु नाम परिनाम ॥ ६७ ॥

उदाहरण—मालती सवैया ।

भौंसिला भूप बली भुव को भुज भारी भुजंगम सों भरु लीनो । 'भूषन' तीखन तेज तरन्नि सों बैरिन को कियो पानिप हीनो ॥ दारिद दौ[4] करि बारिद सों दलि त्यों धरनी-तल सीतल कीनो । साहि तनै कुल चन्द सिवा जस-चन्द सों चन्द कियो छबि छीनो ॥ ६८ ॥

[१] ऐल=बूड़ा [ग्राम्य भाषा "आहिलो] ।"

[२] इन्द्रने पहाड़ोंके पंख वज्र से काट डाले थे उसी पर उक्ति है ।

[३] अपना ।

[४] दौरहा; सूखे जंगल में चारों तरफ से लगने वाली आग । [दरिद्र रूपा दौरहा को गज [दान] रूपी मेघ से नाश करके] ।

अन्यञ्च—कवित्त मनहरण ।

बीर बिजैपुर के उजीर निसिचर गोलकुण्डा वारे घूघू ते उड़ाए हैं जहान सों । मन्द करी मुखरुचि चन्द चकता की, कियो 'भूषन' भुषित द्विज चक्र खानपान सों ॥ तुरकान मलिन कुमुदिनी करी है हिन्दुवान नलिनी खिलायो विविधि विधान सों । चारु सिव नाम को प्रतापी सिव साहि सुव तापी सब भूमि यों कृपान भासमान सों ॥ ६९ ॥

उल्लेख ।

लक्षण—दोहा ।

कै बहुतै कै एक जहँ एक वस्तु को देखि ।
बहु बिधि करि उल्लेख हैं सो उल्लेख उलेखि ॥ ७० ॥

उदाहरण—मालती सवैया ।

एक कहैं कलपद्रुम है इमि पूरत है सब की चित चाहै ।
एक कहैं अवतार मनोज को यों तन मैं अति सुन्दरता है ॥
'भूषन' एक कहैं महि इन्दु यों राज विराजत बाढ़्यो महा है ।
एक कहैं नरसिंह है संगर एक कहैं नरसिंह सिवा है ॥७१॥

पुनरपि यथा—मनहरण दंडक ।

कबि कहै करन,[१] करनजीत[२] कमनैत, अरिन के उर

(१) कर्ण (बड़ा दानी था) ।
(२) अर्जुन जिसने कर्ण जैसे महावीर को जीत लिया ।

माहिं कीन्ह्यो इमि छेव है । कहत धरेस सब धराधर सेस ऐसो और धराधरन को मेट्यो अहमेव है ॥ 'भूषन' भनत महाराज सिवराज तेरो राज काज देखि कोऊ पावत न भेव है । कहरी यदिल, मौज लहरी कुतुब कहै, बहरी निजाम के जितैया कहैं देव है ॥ ७२ ॥

पैज प्रतिपाल भूमिभार को हमाले[1] चहुँचक्क को अमाल[2] भयो दंडक जहान को । साहिन को साल भयो ज्वाल को जवाल भयो हर को कृपाल भयो हार के बिधान को ॥ बीर रस ख्याल सिवराज भुवपाल तुव हाथ को बिसाल भयो 'भूषन' बखान को ? । तेरो करबाल भयो दच्छिन को ढाल भयो हिन्दु को दिवाल भयो काल तुरकान को ॥ ७३ ॥

स्मृति ।

लक्षण—दोहा ।

सम सोभा लखि आन की सुधि आवात जेहि ठौर ।
स्मृति भूषन तेहि कहत हैं भूषन कवि सिरमौर ॥ ७४ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक ।

तुम सिवराज ब्रजराज अवतार आजु तुमही जगत काज पोषत भरत हौ । तुम्है छोड़ि याते काहि बिनती सुनाऊं मैं तुम्हारे गुन गाऊं तुम ढीले क्यों परत हौ ? ॥ 'भूषन' भनत

---

(१) बोझ उठाने वाला; हामिल ।

(२ आमिल; हाकिम ।

वहि कुल[1] मैं नयो गुनाह नाहक समुझि यह चित मैं धरत हौ । और बाँभनन देखि करत सुदामा सुधि मोहिं देखि काहे सुधि भृगु की करत हौ ? ॥ ७५ ॥

भ्रम ।

लक्षण—दोहा ।

आन बात को आन मैं होत जहां भ्रम आय ।
तासों भ्रम सब कहत हैं भूषन सुकवि बनाय ॥ ७६ ॥

उदाहरण—मालती सवैया ।

पीय पहारन पास न जाहु यों तीय बहादुर सों कहैं सोषै । कौन बचैहै नवाब तुम्हैं भनि 'भूषन' भौंसिला भूप के रोषै ? ॥ बन्दि सइस्त खँहू को कियो जसवन्त से भाऊ करन्न से दोषै । सिंह सिवा के सुबीरन सों गो अमीर न बाचि गुनीजन घोषै[2] ॥ ७७ ॥

सन्देह ।

लक्षण—दोहा ।

कै यह कै वह यों जहां होत आनि सन्देह ।
भूषन सो सन्देह है या मैं नहिं सन्देह ॥ ७८ ॥

---

(१) उस (ब्राह्मण अर्थात् भृगु जी के) कुल में । भूषण कहते हैं कि मुझे ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होने का नया गुनाह आप लगाते है और विष्णु के अवतार होने के कारण मुझ पर आप नाराज होते है क्योंकि भृगु जी ने विष्णु जी को लात मारी थी ।

(२) घोषणा करता है ।

उदाहरण—कवित्त मनहरण ।

आवत गुसुलखान ऐसे कछु त्योर ठाने जाने अवरंग जू के प्रानन को लेवा है । रस खोट[1] भए ते अगोट आगरे मैं सातौ चौकी डांकि आनि घर कीन्हीं हद रेवा है ॥ भूषन भनत वह चहूँ चक्क चाहि कियो पातसाहि चकता की छाती माहिं छेवा है । जान्यो न परत ऐसे काम है करत कोऊ गंधरब देवा है कि सिद्ध है कि सेवा है ॥ ७९ ॥

शुद्ध अपन्हुति—शुद्धापन्हुति ।

लक्षण—दोहा ।

आन बात आरोपिए साँची बात दुराय ।
शुद्धापन्हुति कहत है भूषन सुकवि बनाय ॥ ८० ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक ।

चमकतीं चपलान, फेरत फिरंगैं[2] भट, इन्द्र को न चाप

---

(१) रस खोटा होना (औरंगजेब ने जिन वादो से शिवा जी को दिल्ली बुलाया था उनका पालन न होने से रस जाता रहा और आगरे मे लप्पाझप्पी कर शिवा जी ने औरंगजेब की सातो चौकियां नांघ कर रेवा (नर्मदा नदी) पार आ उसी को अपने राज्य की सीमा बनाया ।

(२) शायद भाला या विलायती तलवार ।

रूप बैरष[1] समाज को । धाए धुरवा न, छाए धूरि के पटल, मेघ गाजिबो न बाजिबौ है दुन्दुभि दराज को ॥ भौंसिला के डरन डरानी रिपु रानी कहैं, पिय भजौ, देखि उदौ पावस के साज को । घन की घटा न, गज घटनि सनाह साज 'भूषन' भनत आयो सेन सिवराज को ॥ ८१ ॥

हेतु अपन्हुति—हेत्वपन्हुति ।

लक्षण—दोहा ।

जहां जुगुति सों आन को कहिए आन छपाय ।
हेतु अपन्हुति कहत हैं ताकहँ कवि समुदाय ॥ ८२ ॥

उदाहरण—दोहा ।

सिव सरजा के कर लसै सो न होय किरवान ।
भुज भुजगेस भुंजगिनी भखति पौनं अरि प्रान ॥ ८३ ॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण ।

भाखत सकल सिव जी को करबाल पर 'भूषन' कहत यह करि कै विचार को । लीन्हो अवतार करतार के कहे तें कलि म्लेच्छन हरन उद्धरन भुव भार को ॥ चंडी है घुमंडि अरि चंड मुंड चाबि करि पीवत रुधिर कछु लावत न बार को । निज भरतार भूत भूतन की भूख मेटि भूषित करत भूतनाथ भरतार को ॥ ८४ ॥

---

(१) झंडा ।

पर्य्यस्त अपन्हुति—पर्य्यस्तापन्हुति ।

लक्षण—दोहा ।

वस्तु गोय ताको धरम आन वस्तु मैं रोपि ।
पर्यस्तापन्हुति कहत कवि भूषन मति वोपि ॥ ८५ ॥

उदाहरण—दोहा ।

काल करत कलिकाल मैं नहिं तुरकन को काल ।
काल करत तुरकान को सिव सरजा करबाल ॥८६॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण ।

तेरे ही भुजन पर भूतल को भार कहिबे को सेसनाग दिगनाग हिमाचल है । तेरो अवतार जग पोसन भरन हार कछु करतार को न तामधि अमल है ॥ साहिन मैं सरजा समत्थ सिवराज कवि 'भूषन' कहत जीबो तेरोई सफल है । तेरो करबाल करै म्लेच्छन को काल बिन काज होत काल बदनाम धरातल है ॥ ८७ ॥

भ्रान्त अपन्हुति—भ्रान्तापन्हुति ।

लक्षण—दोहा ।

संक आन को होत ही जहँ भ्रम कीजै दूरि ।
भ्रान्तापन्हुति कहत हैं तहँ भूषन कवि भूरि ॥ ८८ ॥

(१ इस अलंकार में सिवाय लक्षण मे दी हुई बातो के यह भी आवश्यक है कि एक पद दोहरा कर आवै । कवि के उदारण में यह बात प्रस्तुत है पर लक्षण में छूट रही है ।

उदाहरण—कवित्त मनहरण ।

साहि तनै सरजा के भय सों भगाने भूप मेरु मैं लुकाने ते लहत जाय वोत[1] हैं । 'भूषन' तहाऊँ मरहटपति के प्रताप पावत न कल अति कौतुक उदोत हैं ॥ "सिव आयो सिव आयो" संकर के आगमन सुनि के परान ज्यों लगत अरि गोत हैं । [2]"सिव सरजा न यह सिव है महेस" करि योंही उपदेस जच्छ रच्छक से होत हैं ॥ ८९ ॥

पुनः—मालती सवैया ।

एक[2] समै सजि कै सब सैन सिकार को आलमगीर सिधाए । "आवत है सरजा सम्हरौ" यक ओर ते लोगन बोल जनाए ॥ 'भूषन' भो भ्रम औरँग के सिव भौंसिला भूप की धाक धुकाए । धायकै "सिंह" कह्यो समुझाय करौलनि[3] आय अचेत उठाए ॥ ९० ॥

छेक अपन्हुति—छेकापन्हुति ।

लक्षण—दोहा ।

जहां और को संक करि सांच छिपावत बात ।
छेकापन्हुति कहत हैं भूषन कवि अवदात ॥ ९१ ॥

---

(१) ओक; घर ।
(२) भयानक रस ।
(३) शिकार खेलानेवाले ।

उदाहरण-दोहा।

तिमिर बंस हर अरुन कर आयो, सजनी भोर ?।
सिव सरजा, चुप रहि सखी, सूरज कुल सिरमौर ॥९२॥
दुरगहि बल पंजन प्रबल सरजा जिति रन मोहिं।
औरँग कहै देवान सों सपन सुनावत तोहिं ॥ ९३ ॥
सुनि सु उजीरन यों कह्यो "सरजा, सिव महराज ?"।
भूषन कहि चकता सकुचि "नहिं, सिकार मृगराज"॥९४॥

कैतव अपन्हुति—कैतवापन्हुति।

लक्षण—दोहा।

जहँ कैतव, छल, ब्याज मिसि, इन सों होत दुराव।
कैतवपन्हुति ताहि सों भूषन कहि सतिभाव ॥ ९५ ॥

उदाहरण—कवित्त दंडक (मनहरण)

साँहिन के सिच्छक सिपाहिन के पातसाह संगर मैं सिंह कैसे जिनके सुभाव हैं। 'भूषन' भनत सिव सरजा की धाक

---

(१) धोखा।

(२) भयानक रस पूर्ण। कवि गोविन्द गिल्ला भाई जी की हस्तालिखित प्रति में यह छन्द पर्यायोक्ति के उदाहरण में दिया है, पर अन्य सभी प्रतियों मे वह कैतवापन्हुति ही के उदाहरण मे पाया जाता है। पर्यायोक्ति मे मिसि गौण रूप से होता है, प्रकट नहीं जैसा कि इस छन्द मे है, पर कैतवापन्हुति में वह प्रगट ही होता है।

ते वै काँपत रहत चित गहत न चाव हैं ॥ अफजल की अगति सासता की अपगति बहलोल बिपति सों डरे उमराव

---

(१) बहलोल खां सन् १६३० ई० में निजामशाही बादशाह के यहा था और शाहजहा बादशाह की सेना इसे न दबा सकी । सन् १६६१ मे इसने बीजापुर सरकार की सेवा ग्रहण कर ली और शिवा जी से युद्ध करने को भेजा गया । इतने बीच में शीदी जौहर नामक सेनापति बीजापुर सरकार से बिगड खड़ा हुआ और बहलोल ने (जिस का पूरा नाम अब्दुल करीम बहलोल खा था) उसे परास्त किया । सन् १६७३ में इसे खवास खां वज़ीर ने शिवा जी से लड़ने को भेजा, पर मरहटो ने इसे घेर कर खूब ही तंग किया और बड़ी कठिनाई से इसका पिण्ड छोड़ा (उन्होंने इसे वास्तवं मे बन्दी नही बना पाया जैसा कि छन्द नं० ३५६ में लिखा है) । सन् १६७५ मे बहलोल के इशारे से खवास खां मार डाला गया और उसके ठौर बहलोल बीजापुर के नाबालिग बादशाह का मुतवल्ली (Regent) बनाया गया । इसने खानजहां बहादुर को परास्त कर मुगलों से मेल किया । सन् १६७७ मे शिवाजी ने कुतुबशाह से मेल किया जिसमे एक शर्त यह भी थी कि बहलोल बीजापुर के राज्याधिकार से हटा दिया जाय । इस पर बहलोल मुगल सरदार खानजहां बहादुर को साथ ले कुतुब शाह पर दौड़ धाया, पर उसे शिवा जी के साथी मधुना पंत ने, जो कुतुबशाह का वजीर हो गया था, घोर युद्ध करके परास्त किया । इस युद्ध मे बहलोल मुगलों के साथ लड़ा, इसीसे भूषन जी ने भ्रमवश इसे दिल्ली का सेवक समझ लिया । छन्द नं० १६१ और २१९ देखिए) । सन् १६७८ ई० मे यह मरा ।

हैं । पक्का मतो करि कै मलिच्छ मनसब छोड़ि मक्का ही के मिसि[1] उतरत दरियाव हैं ॥ ९६ ॥

साहि तनै सरजा खुमान सलहेरि[2] पास कीन्हों कुरुखेत खीझि मीर अचलन सों ।'भूषन' भनत बलि करी है अरीन धर धरनी पै डारि नभ प्रान दै बलन सों ॥ अमर[3] के नाम के बहाने

---

(१) शिवा जी मक्का जाने वाले सैयदों को प्रायः नहीं सताता था । ३२

(२) सलहेरि के किले को शिवा जी के प्रधान मन्त्री मोरो पंत ने १६७१ ई० जीत लिया था । तभी से इस पर शिवा जी का अधिकार हुआ । दूसरे ही साल १६७२ ई० में दिल्ली के सेनापति दिलेरखां (जिसे लोग दलेल खा भी कहते हैं) ने घेरा और शिवा जी ने मोरो पंत और प्रताप राव गूजर के आधिपत्य मे एक बृहद् सेना उससे लड़ने को भेजी । दिलेरखा स्वयं तो न लड़ा पर इखलास खां को एक बहुत बडी सेना सहित लड़ने को भेजा । इस बड़े ही बिकराल संग्राम में मुगलो को बड़ी हानि पहुंची और उनके मुख्य सेनानायकों में से २२ मारे गए और अनेक बन्दी हुए एव समस्त सेना एकदम तितर बितर हो गई । तभी तो भूषण जी ने इसका ऐसा भयंकर वर्णन भी किया है (छन्द नं० १०३ २२६, २९२, ३३१, ३५५, एवं शिवाबावनी के नं० २५ व २६) ।

(३) कोई अमर सिंह चन्दावत भी इसी युद्ध में मारा गया था । इतिहास में इसका पता नहीं लगता पर जान पड़ता है कि यह कोई भारी सरदार था क्योंकि भूषण जी ने बारबार इसके विषय

गो अमरपुर चन्दावत लरि सिवराज के दलन सों । कालिका प्रसाद के बहाने ते खवायो महि बाबू उमराव राव पसु के छलन सों ॥ ९७ ॥

उत्प्रेक्षा ।

लक्षण—दोहा ।

आन बात को आन मैं जहँ सम्भावन होय ।
वस्तु, हेतु, फल युत कहत उत्प्रेक्षा है सोय ॥ ९८ ॥

उदाहरण । वस्तूत्प्रेक्षा—मालती सवैया ।

दानव आयो दगा करि जावली दीह भयारो महामद भाऱ्यो । 'भूषन' बाहुबली सरजा तेहि भेटिबे को निरसंक पधाऱ्यो ॥ बीछू के घाय गिरे अफजल्लहि ऊपर ही सिवराज निहाऱ्यो । दाबि यों बैठो नरिंन्द अरिन्दहि मानो मयन्द गयन्द पछाऱ्यो ॥ ९९ ॥

साहि तनै सिव साहि निसा मैं निसाँक लियो गढ़सिंह

में सनमान पूर्वक लिखा है और शिवा जी की प्रशंसा करते हुए यहां तक कहा है कि "हिन्दु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोई टूटै" (छ० नं० १५५, २०५, २३९ ३७५, देखिये) । मेवाड़ (उदयपुर) के प्रसिद्ध चन्दा जी के वंशधर लोग "चन्दावत" कहाते हैं।

(१) इसका नाम पहिले कोंडाने था पर जब यह किला १६४७ में शिवा जी के अधिकार मे आया तब उसने इसका नाम सिंहगढ़ रख दिया । १६६५ में शिवा जी ने इसे जयसिंह को दे दिया।

सोहानौ। राठिवरो को संहार भयो लरिकै सरदार गिऱ्यो उदै भानो[1]॥'भूषन'यों घमसान भो भूतल घेरत लोथिन मानो

यह सह्याद्रि पर्व्वतमाला के पूरबी किनारे पर था जहा से पुरंधर पहाड़ी दक्षिण (Deccan) की ओर मुड़ जाती है। यह बड़ा ही अभेद्य दुर्ग था पर शिवा जी को दबकर उसे जयसिंह को देना ही पड़ा। सन् १६७० ई० की माघबदा ९ की रात को उसे फिर जीत लेने के लिये शिवाजी के बहादुर सरदार बीरवर तन्नाजी ने तैयारी की। इस अवसर पर शिवा जी ने, जो कि किलेदार (१) उदयभानु राठौर की बहादुरी को भली भाति जानता था, अपने दरबार मे पान का बीड़ा रखकर अपने सरदारों से कहा था कि "कौन ऐसा बीर है जो यह बीड़ा उठावै और उदय भानु से लड़कर सिंहगढ़ छीनले ?" किसी की हिम्मत न पड़ी पर तन्ना जी ने बीड़ा उठाया। यह बात सुनकर उसके भाई शैलर (उपनाम सुरजाजी) ने उसे समझाया कि उदयभानु बड़ा बीर है पर जब तन्ना जी ने एक न मानी तब शैलर भी उसके साथ हो लिया और दोनों भाई सेना सहित किले पर जा टूटे। तीन सौ मरहटे किले के ऊपर पहुँच गए और तब उदयभानु को इसका पता लगा ! बस, फिर क्या था, घोर युद्ध प्रारम्भ हुआ जिसमे उदयभानु के साथी भाग निकले। तब उदयभानु ने तन्ना जी को द्वन्द युद्ध के लिये प्रचारा और बहादुरी के जोश मे तन्ना जी अपने साथियो को पीछे छोड़ अकेला ही उससे जा भिड़ा पर दुर्भाग्य वश उसके हाथ से मारा गया। तब तो बड़े बेग से शैलर उसपर जा टूटा और उसका काम ही तमाम कर दिया और किला मरहटो के हाथ लगा। जब शिवाजी ने यह समाचार सुना तो

मसानौ । ऊँचे सुछज्ज छटा उचटी प्रगटी परभा परभात की मानौ ॥ १०० ॥

पुनरपि—कवित्त मनहरण ।

दुरजन दार भजि भजि बेसम्हार चढ़ीं उत्तर पहार डरि सिवजी नरिन्द ते । 'भूषन' भनत बिन भूषन बसन, साधे भूखन पियासन हैं नाहन को निन्दते ॥ बालक अयाने बाट बीचही बिलाने कुम्हिलाने मुख कोमल अमल अरबिन्द ते । दृगजल कज्जल कलित बढ़्यो कढ़्यो मानो दूजा सोत तरनि तनूजा कौ कलिन्द ते ॥ १०१ ॥

अपरंच—दोहा ।

महाराज सिवराज तब सुघर धवल ध्रुव कित्ति ।

उसने बड़े शोक मे आकर कहा कि "भट्ठी तो मिली पर हाय ! सिंह (तन्नाजी एवं उदयभानु) जाते रहे !" यह किला तब से सदा शिवाजी के पास रहा ।

(१) इस युद्ध मे तन्नाजी मौलिश्री किले के छज्जो से आंगन मे ससैन कूदा था ।

(२) हिमाचल । (३) भयानक रस पूर्ण । उस समय की कठोरता को देखिए कि कोमल चित्त ब्राह्मण होकर भी भूषण जी को बेचारे बालकों पर भी दया न आई और उनकी महा दुर्गति को आप कैसे आनन्द पूर्व्वक वर्णन कर रहे है ।

(४) वह पाहाड़ जिससे यमुनाजी निकली हैं । इसीसे उनका नाम कालिन्दी है ।

छवि छटान सों छुवत सी छिति अंगन दिग भित्ति ॥१०२॥

हेतूत्प्रेक्षा। कवित्त मनहरण।

लूट्यो खानदौरां[1] जोरावर[2] सफजंग[3] अरु लट्यो मार तलॅ-बखां[4] मानहुँ अमाल है। 'भूषन' भनत लूट्यो पूना मैं सइस्त[5] खान गढ़न मैं लूट्यो त्यों गढ़ोइन[6] को जाल है॥ हेरि हेरि कूटि सलहेरि बीच सरदार घेरि घेरि लूट्यो सब कटक कराल है।

---

(१) खान दौरां को साहजहा ने दक्षिण का सूबेदार १६३४ ई० में नियत किया था। बादशाह की ओर से उसने बीजापुर वालो से युद्धकर लाभदायक सन्धि की। बाद को औरंगजेब ने इसे इलाहा-बाद का किला जीतने भेजा था। इसका नाम नौशेरी खॉ था (छन्द न० ३०७ देखिए) पर मुग़लों के लिये अनेक किले जीतने पर इसे खानदौरां की पदवी मिली।

(२) यह नाम इतिहास में नहीं मिलता। यातो यह शब्द विशेषण मात्र है अथवा इस नाम का कोई साधारण सरदार होगा अथवा शीदी जौहर (छन्द नं० १०७ नोट १ देखिए) को भूषण जी यों कहते हों।

(३ और ४) यह भी कोई साधरण लोग होंगे। इतिहास में इनका नाम नहीं मिलता। नं० ३ का नाम छत्र प्रकाश मे छत्रसाल जी से लड़नेवालों में लिखा है। वह दिल्ली का सरदार था और उस का ठीक नाम सफ़दरजंग था।

(५) शाइस्ता खॉं (छन्द नं० ३५ नोट देखिए)।

(६) गढ़पति अथवा क़िलेदार।

मानो हय हाथी उमराव करि साथी अवरंग डरि सिवाजी पै भेजत रिसाले[1] है ॥ १०३ ॥

फलोत्प्रेक्षा । मनहरण दंडक ।

जाहि पास जात सो तौ राखि ना सकत याते तेरे पास अचल सुप्रीति नाधियतु है ।'भूषन'भनत सिवराज तव कित्ति सम और की न कित्ति कहिबे को काँधियतु है ॥ इन्द्र कौ अनुज तैं उपेन्द्र अवतार याते तेरो बाहुबल लै सलाह साधियतु है । पायतर आय नित निडर बसायबे को कोट बाँधियतु मानो पाग बाँधियतु है ॥ १०४ ॥

दोहा ।

दुवन सदन सब के बदन सिव सिव आठोयाम ।
निज बचिबे को जपत जनु तुरकौ हर को नाम ॥१०५॥

गम=गुप्तोत्प्रेक्षा (गम्योत्प्रेक्षा)

लक्षण—दोहा ।

मानो इत्यादिक बचन आवत नहिं जेहि ठौर ।
उत्प्रेक्षा गम गुप्त सो भूषन कहत अमौर ॥ १०६ ॥

उदाहरण—मनहरण ।

देखत ऊँचाई उदरत[2] पाग, सूधी राह द्योस हू मैं चढ़ै ते जे साहस निकेत हैं । सिवजी हुकुम तेरो पाय पैदलन

---

(१) इरसाल, खिराज ।
(२) गिरती है ।

सलेहरि परनालो ते वै जीते जनु खेत हैं ॥ सावन भादौं की भारी कुहू की अँध्यारी चढ़ि दुग्ग पर जात मावलीदल सचेत है। 'भूषन' भनत ताकी बात मैं बिचारी तेरे परताप रवि की उज्यारी गढ़ लेत हैं ॥ १०७ ॥

पुनः। दोहा।

और गढ़ोई नदीनद सिव गढ़पाल दरयाव।
दौरि दौरि चहुँ ओर ते मिलत आनि यहि भाव ॥ १०८ ॥

रूपकातिशयोक्ति।

लक्षण-दोहा।

ज्ञान करत उपमेय को जहँ केवल उपमान।
रूपकातिशय-उक्ति सो भूषन कहत सुजान ॥ १०९ ॥

---

(१) यह किला १६५९ के अन्त में शिवाजी के अधिकार में आया। बीजापुर की ओर से शीदी जौहर ने इसे मई १६६० मे फिर छीन लेने के विचार से घेरा, पर वह सफल मनोरथ न हुआ, तब स्वयं बीजापुराधीश ने १६६१ में इसे घेर कर जीत लिया, परन्तु शिवाजी ने इसे १६७३ ई० मे फिर से छीनकर अपने अधिकार में कर लिया।

(२) जैसे साफ मैदान हैं अर्थात इतने ऊँचे किलों पर पैदल गण यों चढ़ गए जैसे कोई समथल भूमि पर दौड़े।

(३) एक पहाड़ी देशके रहनेवाले शिवाजी के पैदल सिपाही।

(४) इस छन्द में गम्योत्प्रेक्षा अलंकार ठीक नहीं जँचता।

(५) दरिया अर्थात् (फारसी मे) समुद्र।

उदाहरण—मनहरण दंडक ।

बासव से बिसरत बिक्रम की कहा चली, बिक्रम लखत बीर बखत-बिलन्द के । जागे तेज बृन्द सिवा जी नरिन्द मसनन्द माल मकरन्द कुलचन्द साहिनन्द के ॥ 'भूषन' भनत देस देस बैरि नारिन मैं होत अचरज घर घर दुख दंद के । कनकलतानि इन्दु, इन्दु माहिं अरबिंद, झरैं अरविन्दन ते बुन्द मकरन्द के ॥ ११० ॥

भेदकातिशयोक्ति ।

लक्षण—दोहा ।

जेहि थर आनहि भाँति की बरनत बात कछूक ।
भेदकातिसय-उक्ति सो भूषन कहत अचूक ॥ १११ ॥

उदाहरण—कवित्त मनहरण ।

श्रीनगर नयपाल जुमिला के छितिपाल भेजत रिसाल चौर

---

(१) सोने की बौडी (सी देह) में चन्द्रमा (सा मुख) और चन्द्रमा (से मुख) मे कमल (से नेत्र) और कमल (जैसे नेत्रो) से पुष्परस (के समान आंसू) बून्द झर रहे हैं ।

(२) कश्मीर ।

(३) इस नाम के किसी स्थान का पता नहीं लगता । एक स्थान जसना था जो औरंगाबाद के पूरब की ओर जयदेव राय मनसबदार दिल्ली के देश में बसा था । अथवा यह फ़ारसी शब्द जुमला (अर्थात् सब कहीं के) हो सकता है ।

(४) इरसाल; खिराज ।

गढ़ कुही बाज की। मेवार[1] ढुँढ़ार[2] मारवाड़[3] औ बुँदेलखंड[4] झारखंड[5] बाँधौ-धनी[6] चाकरी इलाज की॥'भूषन' जे पूरब पछाँह नरनाह ते वै ताकत पनाह दिलीपति सिरताज की। जगत को जैतवार जीत्यो अवरंगजेब न्यारी रीति भूतल निहारी सिवराज की॥ ११२॥

---

(१) उदयपुर की रियासत।

(२) रियासत अम्बर अर्थात जयपुर।

(३) रियामत जोधपुर।

(४) इसमे अब चार सरकारी जिले (झाँसी, बाँदा, हमीरपुर (जो अब महोवे के नाम से कहावेगा) और जालौन) एवं जिला इलाहाबाद की तीन तहसील और २०-२१ देशी रियासतै हैं। छत्रसाल के पिता चम्पतिराय ने कुछ दिनो मुगलो की सेवा स्वीकार की थी और बुँदेलखंड के अन्य सरदारें भी औरगजेब के वशीभूत होगये थे। इसका विस्तृत हाल भूमिका में देखिए।

(५) उड़ीसा मे गोड़वान के पूरब मे है। इसे उड़ीसा की काशी कहते है क्योंकि यहा पहिले संस्कृत की बड़ी चरचा थी।

(६) बाधव का राजा। भूषण जी का तात्पर्य यह है कि इतने इतने नामी देशो के राजे महाराजे औरंगजेब को कर देते, उस की सेवा तक स्वीकार करते एवं उसकी शरण में रहते थे, पर शिवाजी का ढंग कुछ न्यारा ही था। वह बादशाह की बिलकुल परवा न करता और उनसे सदा लड़ाई झगड़ा करता था।

अक्रमातिशयोक्ति ।

लक्षण--दोहा ।

जहां हेतु अरु काज मिलि होत एकही साथ ।
अक्रमातिसय-उक्ति सो कहि भूषन कबिनाथ ॥ ११३ ॥

उदाहरण । कवित्त मनहरण ।

उद्धत अपार तव दुंदुभी धुकार साथ लंघै पारावार बाल बृन्द रिपु गन के । तेरे चतुरंग के तुरंगन के रँगेरज[1] साथही उड़ात रजपुंज[2] हैं परनै[3] के ॥ दच्छिन के नाथ सिवराज ! तेरे हाथ चढ़ैं धनुष के नाथ गढ़ कोट दुरजन के । 'भूषन' असीसैं, तोहिं करत कसीसैं[4] पुनि बानन के साथ छूटैं प्रान तुरकन के ॥ ११४ ॥

चंचलातिशयोक्ति ।

लक्षण-दोहा ।

जहाँ हेतु चरचाहि मैं काज होत ततकाल ।
चंचलातिसय-उक्ति सो भूषन कहत रसाल ॥ ११५ ॥

---

(१) घोड़ों का धूल से रंग जाने से अर्थात धावा के लिए चलने ही से ।

(२ राजा श्री का ढेर ।

(३) शत्रुओं के । इस पद से पूर्ण भयानक रस है ।

(४) कशिश करते ही अर्थात् बाण खींचते ही ।

उदाहरण-दोहा।

आयो आयो सुनत ही सिव सरजा तुव नावँ।
बैरि नारि दृग जलन सों बूड़ि जात अरि गावँ॥ ११६॥

अन्यच्च-कवित्त मनहरण।

गढ़नेर[1] गढ़[2] चाँदा[3] भागनेर[4] बीजापुर नृपन की नारी रोय हाथन मलति हैं। करनाट[5] हबस[6] फिरंगहू[7] बिलायत[8] बलख[9] रूम[10] अरि तिय छतियाँ दलति हैं॥ 'भूषन' भनत साहि तनै

---

(१) व (२) का गढ़नेर अर्थात् नगरगढ़ नामक एक देश कड़ा मानिक पुर के समीप था जिसमे पहाड़ियां और जंगल बहुत थे। इसे मुगलो ने १५६० में जीत लिया।

(३) इसे मरहटो ने अपने अधिकार मे कर लिया था और अंत को कर्नल ऐडम्स ने उनसे मई सन १८१८ मे जीत लिया।

(४) भागनेर अर्थात भागनगर को गोलकुंडा वाले मुहम्मद कुतुबुल्मुल्क ने अपनी प्रिय पत्नी भागमती के नाम पर चार मील पर बसाया था।

(५) करनाटक पर शिवाजी ने १६७६-७८ई:में धावा किया था

(६) हबशियों का स्थान अबिसिनिया।

(७) योरप अथवा बाबर का देश फिरंगाना।

(८) मुसलमानों की बिलायत (अफ़गानिस्तान, तुर्किस्तान, फ़ारस इत्यादि)।

(९) अफगानिस्तान का एक प्रसिद्ध शहर।

(१०) टरकी।

सिवराज एते मान तव धाक आगे दिसा उबलति हैं। तेरी चमू चलिबे की चरचा चले ते चक्रवर्तिन की चतुरंग चमू बिचलित हैं॥ ११७॥

अत्यन्तातिशयोक्ति।

लक्षण-दोहा।

जहाँ हेतु ते प्रथमही प्रगट होत है काज।
अत्यन्तातिसयोक्ति सो कहि भूषन कबिराज॥ ११८॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण।

मंगन मनोरथ के प्रथमहि दाता तोहिं कामधेनु कामतरु सो गनाइयतु है। याते तेरे गुन सब गाय को सकत कवि-बुद्धि अनुसार कछु तऊ गाइयतु है॥ 'भूषन' भनत साहि तनै सिवराज निज बखत बढ़ाय करि तोहि ध्याइयतु है। दीनता को डारि औ अधीनता बिडारि दीह दारिद को मारि तेरे द्वार आइयतु है॥ ११९॥

पुनः। दोहा।

कबि तरुवर सिव सुजसरस सींचे अचरज मूल।
सुफल होत है प्रथम ही पीछे प्रगटत फूल[1]॥ १२०॥

सामान्य विशेष।

लक्षण-दोहा।

कहिबे जहँ सामान्य है कहै जु तहाँ विशेष।

---

(१) फूलना; प्रसन्नता।

सो सामान्य बिशेष है बरनत सुकवि अशेष ॥ १२१ ॥

उदाहरण-दोहा।

और नृपति भूषन कहैं करैं न सुगमौ काज।
साहि तनै सिव सुजस तो करै कठिनऊ आज ॥ १२२ ॥

पुनः। मालती सवैया।

जीत लई बसुधा सिगरी घमसान घमंड कै बीरन हू की।
'भूषन' भौंसिला छीनि लई जगती उमराव अमीरन हू की॥
साहि तनै सिवराज की धाकनि छूटि गई धृति धीरन हू की।
मीरन के उर पीर बढ़ी यों जु भूलि गई सुधि पीरन हू की॥ १२३ ॥

तुल्य योगिता।

लक्षण-दोहा।

तुल्यजोगिता तहँ धरम जहँ बरन्यन[1] को एक।
कहूँ अबरन्यँन[2] को कहत भूषन बरनि बिबेक॥ १२४ ॥

उदाहरण-मनहरण दंडक।

चढ़त तुरंग चतुरंग साजि सिवराज चढ़त प्रताप दिन दिन अति अंग मैं। 'भूषन' चढ़त मरहट्टन के चित्त चाव खग्ग खुलि चढ़त है अरिन के अंग मैं॥ भौंसिला के हाथ गढ़

---

(१) उपमेयों का।
(२) उपमानों का।

कोट हैं चढ़त अरि जोट है[1] चढ़त एक मेरु गिरि सृंग मैं। तुरकान गन ब्योमयान हैं चढ़त बिनु मान है चढ़त बदरंग[2] अवरंग मैं॥ १२५॥

अन्यच्च—दोहा।

सिव सरजा भारी भुजन भुव भरु धरयो सभाग।
भूषन अब निहचिंत हैं सेसनाग दिगनाग॥ १२६॥

द्वितीय-लक्षण दोहा।

हित अनाहित को एक सो जहँ बरनत व्यवहार।
तुल्यजोगिता और सो भूषन ग्रन्थ बिचार॥ १२७॥

उदाहरण—कबित्त मनहरण।

गुनन[3] सो इनहूं को बांधि लाइयतु पुनि गुनन[4] से उनहूं को बाँधि लाइयतु हैं। पाय[5] गहि इनहूँ को रोज ध्याइयतु अरु पाय[6] गहि उनहूं को रोज ध्याइयतु है॥ 'भूषन' भनत महराज सिवराज रस रोस तो हिये मैं एक भांति पाइयतु

(१) अरिन के जोड़े एक होकर अर्थात बहुत से अरि साथ साथ।

(२) बिनमान औरंग मे बदरंग चढ़त है।

(३) गुण अर्थात् अपने अच्छे गुणों के कारण।

(४) रस्सियों से।

(५) पैर छूकर।

(६) पाकर पकड़ कर।

है। दोहाई[5] कहे ते कवि लोग ज्याइयतु अरु दोहाई[6] कहे ते अरि लोग ज्याइयतु है॥ १२८॥

दीपक।

लक्षण-दोहा।

बर्न्य अबर्न्यन को धरम जहँ बरनत हैं एक।
दीपक ताको कहत हैं भूषन सुकवि विवेक॥ १२९॥

उदाहरण-मालती सवैया।

कामिनि कंत सों जामिनि चन्द सों दामिनि पावस मेघ घटा सों। कीरति दान सों सूरति ज्ञान सों प्रीति बड़ी सनमान महा सों॥ 'भूषन' भूषन सों तरुनी नलिनी नव पूषन[3] देव प्रभा सों। जाहिर चारिहु ओर जहान लसै हिंदुवान खुमान सिवा सों॥ १३०॥

दीपकावृत्ति।

लक्षण-दोहा।

दीपक पद के अरथ जहँ फिर फिर करत बखान।
आवृति दीपक तहँ कहत भूषन सुकवि सुजान॥ १३१॥

---

(५) दोहा [छन्द] कहने से।

(६) दोहाई करने से शरण आने से।

(३) सूर्य्य देवता। "सरस्वती औ भूषण ग्रन्थावली तुझे मन भाती थी। पूषण नाम सूर्य्य का कह कर खूब हँसी आ जाती थी।" हमारा "हा! काशी प्रकाश" देखिए।

धरि डरि कै । अटल सिवाजी रह्यो दिल्ली को निदरि धीर धरि ऐंड़ धरि तेग धरि गढ़ धरि कै ॥ १३४ ॥

प्रतिवस्तूपमा ।

लक्षण-दोहा ।

बाक्यन को जुग होत जहँ एकै अरथ समान ।
जुदो जुदो करि भाषिए प्रति वस्तूपम जान ॥ १३५ ॥

उदाहरण-लीलावती छन्द[1] ।

मद जल धरन द्विरद बल राजत, बहु जल धरन जलद छबि साजै । पुहुमि धरन फनि नाथ लसत अति, तेज धरन ग्रीषम रबि छाजै ॥ खरग धरन सोभा तहँ राजत, रुचि 'भूषन' गुन धरन समाजे । दिल्लि दलन दक्खिन दिसि थम्भन, ऐंड़[2] धरन सिवराज विराजै ॥ १३६ ॥

दृष्टान्त ।

लक्षण-दोहा ।

जुग बाक्यन को अरथ जहँ प्रतिबिम्बित सो होत ।
तहाँ कहत दृष्टांत हैं भूषन सुमति उदोत ॥ १३७ ॥

---

(१) इसका लक्षण यह है "लघुगुरु का जहँ नेम नहि बत्तिस कल सब जान । तरल तुरगम चाल सो लीलावती बखान ॥"

(२) "ऐंड़ एक सिवराज निबाही । करै आपनै चित की चाही । आठ पातसाही झकझोरै । सूबन पकरि दंड लै छोरै ॥" [छत्रप्रकाश] ।

उदाहरण–दोहा ।

शिव ! औरंगहि जिति सकै और न राजा राव ।
हत्थिमत्थ पर सिंह बिनु आन न घालै घाव ॥ १३८ ॥

चाहत निरगुन सगुन को ज्ञानवन्त गुनधीर ।
यही भाँति निरगुन गुनिहि सिवा नेवाजत बीर ॥ १३९ ॥

पुनः । मालती सवैया ।

देत तुरी गन गीत सुने बिनु देत करी गन गीत सुनाए ।
'भूषन' भावत भूप न आन जहान खुमान की कीरति गाए ॥
मंगन को भुवपाल घने पै निहाल करै सिवराज रिझाए ।
आन ऋतैं बरसे सरसै उमड़ै नदिया ऋतु पावस पाए[1]॥ १४० ॥

निदर्शना[2] ।

लक्षण–दोहा ।

सदृश वाक्य जुग अरथ को करिए एक अरोप ।
भूषन ताहि निदर्शना कहत बुद्धि दै ओप ॥ १४१ ॥

उदाहरण–मालती सवैया ।

मच्छहु कच्छ मैं कोल नृसिंह मैं बावन मैं भनि 'भूषन' जो है ।

---

(१) इस छन्द से विदित होता है कि भूषण जी ने शिवराज से बहुत कुछ दान पाया था ।

(२) दृष्टांत और निदर्शना में भेद यह है कि पहले मे वाचक नहीं होता पर दूसरे मे होता है । प्रतिवस्तुपमा और इन दोनों में यह अन्तर है कि उसमें दोनो समवाक्य स्वतंत्र होते है, पर इन दोनो में नहीं ।

जो द्विजराम मैं जो रघुराज मैं जोब कह्यो बलरामहु को है। बौद्ध में जो अरु जो कलकी महँ बिक्रम हूबे को आगे सुनो है। साहस भूमि अधार सोई अब श्री सरजा सिवराज मैं सो है।। १४२ ।।

अपरञ्च। कवित्त मनहरण।

कीरति सहित जो प्रताप सरजा मैं बर मारतंड मध्य-तेज चाँदनी सो जानी मैं। सोहत उदारता औ सीलता खुमान मैं सो कंचन मैं मृदुता सुगंधता बखानी मैं। 'भूषन' कहत सब हिन्दुन को भाग फिरै चढ़े ते कुमति चकता हू की निसानी मैं। सोहत सुबेस दान कीरति सिवा मैं सोई निरखी अनूप रुचि मोतिन के पानी में ।। १४३ ।।

अन्यच्च—दोहा।

औरन को जो जनम है, सो वाको यक रोज।
औरन को जो राज सो, सिव सरजा की मौज ।। १४४ ।।
साहिन सों रन माँडिबो कीवो सुकवि निहाल।
सिव सरजा को ख्याल है औरन को जंजाल ।। १४५ ।।

व्यतिरेक[1]।

लक्षण—दोहा।

सम छबिवान दुहून मैं, जहँ बरणत बढ़ि एक।

[१] इसमें अन्य कवि प्रायः उपमेय—उपमान का भी सम्बन्ध जोड़ते हैं।

भूषण कवि कोविद सबै, ताहि कहत व्यतिरेक ॥ १४६ ॥

उदाहरण—छप्पय ।

त्रिभुवन मैं परसिद्ध एक अरि बल वह खंडिय ।
यह अनेक अरि बल बिहंडि रन मंडल मंडिय ॥
'भूषन' वह ऋतु एक पुहुमि पानिपहि बढ़ावत ।
यह छहु ऋतु निसि दिन अपार पानिप सरसावत ॥
सिवराज साहि सुव सत्थ नित हय गज लक्खन संचरइ ।
यक्कइ गयन्द यक्कइ तुरँग किमि सुरपति सरवरि करइ ॥१४७

पुनरपि—कबित्त मनहरण ।

दारुन दुगुन दुरजोधन ते अवरंग 'भूषन' भनत जग राख्यो छल मढ़ि कै । धरम धरम, बल भीम, पैज अरजुन, नकुल अकिल, सहदेव तेज, चढ़ि कै ॥ साहि के सिवाजी गाजी, करयो दिली माँहि चंड पांडवनहू ते पुरुषारथ सु बढ़ि कै । सूने लाखभौन ते कढ़े वै पाँच राति मैं, जु द्योस लाख चौकी ते अकेलो आयो कढ़ि कै ॥ १४८ ॥

---

[१] दुर्योधन ने छल से पाण्डवों को लक्षाग्रह मे जलाने का प्रबन्ध किया था सो धर्मराज के धर्म्म, भीमसेन के बल, अर्जुन की पैज, नकुल की बुद्धि और सहदेव के तेज से पाण्डवों का उद्धार हुआ इसी पर उक्ति करके कवि शिवाजी के दिल्ली से कढ आने पर उसकी तुलना पांचो भाइयों से करता है ।

सहोक्ति ।

लक्षण—दोहा ।

वस्तुन को भासत जहाँ, जन रंजन सह भाव ।
ताहि सहोक्ति बखानहीं, जे भूषन कबिराव ॥ १४९ ॥

उदाहरण—मनहरण दण्डक ।

छूट्यो है हुलास आम खास एक संग छूट्यो हरम सरम एक संग बिनु ढंग ही । नैनन ते नीर धीर छूट्यो एक संग छूट्यो सुख रुचि मुख रुचि त्योंही बिन रंग ही । 'भूषन' बखानै सिवराज मरदाने तेरी धाक बिललाने न गहत बल अग ही । दक्खिन के सूबा पाय दिली के अमीर तजैं उत्तर की आस जीव आस एक संग ही ॥ १५० ॥

विनोक्ति ।

लक्षण—दोहा ।

बिना कछू जहँ बरनिए के हीनो कै नीक ।
ताको कहत बिनोक्ति है कवि भूषन मति ठीक ॥ १५१ ॥

उदाहरण—दोहा ।

सोभमान जग पर किए सरजा सिवा खुमान ।
साहिन सो बिनु डर अगड़ बिन गुमान को दान ॥१५२॥

---

[१] भयानक रस पूर्ण ।

[२] अकड़ ।

पुनः । मालती सवैया ।

को कबिराज बिभूषन होते बिना कबि साहि तनै को कहाए ? । को कबिराज सभाजित होत सभा सरजा के बिना गुन गाए ? । को कबिराज भुवालन भावत भौंसिला[1] के मन मैं बिनु भाए ? । को कबि राज चढ़ै गज बाजि सिवाजी की मौज मही बिनु पाए ? ॥ १५३ ॥

अन्यच्च । कबित्त मनहरण ।

बिना लोभ को बिबेक बिना भय युद्ध टेक साहिन सों सदा साहि तनै सिरताज के । बिना ही कपट प्रीति बिना ही कलेस जीति बिना ही अनीत रीति लाज के जहाज के ॥ सुकवि समाज बिन अपजस काज भनि 'भूषन' भुसिल भूप गरिबनेवाज के । बिना ही बुराई ओज बिना काज घनी फौज बिना अभिमान मौज राज सिवराज के ॥१५४॥

कीरति को ताजी करी बाजि चढ़ि लूटि कीन्ही भई सब सेन बिनु बाजी बिजै[2] पुर की । 'भूषन' भनत भौंसिला भुवाल धाक ही सों धीर धरबी[3] न फौज कुतुब के धुर की ॥ सिंह उदैभान बिन अमर सुजान बिन मान बिन कीन्ही

---

[१] भौसिला ।

[२] बीजापुर ।

[३] धरैगी [बुन्देलखंडी बोली] ।

साहिबी त्यों दिलीसुर की। साहि सुव महाबाहु सिवाजी सलाह बिन कौन पातसाह की न पातसाही मुरकी ॥१५५॥

समासोक्ति।

लक्षण-दोहा।

बरनन[1] कीजै आन को ज्ञान आन को होय।
समासोक्ति भूषन कहत कवि कोविद सब कोय ॥१५६॥

उदाहरण-दोहा।

बड़ो डील लखि पील[2] को सबन तज्यो बन थान।
धनि सरजा तू जगत मैं ताको हर्यो गुमान ॥ १५७ ॥
तुही साँच द्विजराज है तेरी कला प्रमान।
ता पर सिव किरपा करी जानत सकल जहान ॥ १५८ ॥

अपरंच। कवित्त मनहरण।

उत्तर पहार बिधनोल[3] खँडहर[4] झारखंडहु प्रचार चारु

---

[१] यह लक्षण असमर्थ है। प्रस्तुत के वर्णन में जहाँ अप्रस्तुत की सचाई ज्ञात हो वहाँ समासोक्ति अलंकार होता है।

[२] हाथी, यहाँ औरंगजेब।

[३] इसका नाम बिदरूर या बिदनूर भी था। यह मंगलोर [मैसूर] के पास इसी नाम के प्रान्त की राजधानी थी।

[४] चम्बल और नर्मदा के बीच सुल्तानपुर के समीप एक क़स्बा।

[५] छन्द नं० ११२ का नोट देखिए।

केली है बिरद की। गोर[1] गुजरात अरु पूरब पछाँह ठौर जंतु जंगलीन की बसति मारि रद की॥ 'भूषन' जो करत न जाने बिनु घोर सोर भूलि गयो आपनी उँचाई लखे कद की। खोइयो प्रबल मदगल गजराज, एक सरजा सों बैर कै बड़ाई निज मद की॥ १५९॥

परिकर——परिकरांकुर।

लक्षण-दोहा।

साभिप्राय विशेषननि भूषन परिकर मान।
साभिप्राय विशेष्य ते परिकर अंकुर जान॥ १६०॥

उदाहरण। परिकर। कबित्त मनहरण।

बचैगा न समुहाने बहलोल[2] खाँ अयाने 'भूषन' बखाने दिल आनि मेरा बरजा। तुझ ते सवाई तेरा भाई सलहेरि पास कैद किया साथ का न कोई बीर गरजा॥ साहिन के साहि उसी औरँग के लीन्हे गढ़ जिसका तू चाकर औ जिस की है परजा। साहि का ललन दिली दल का दलन अफजल का मलन सिवराज आया सरजा॥ १६१॥

---

(१) गोर नामक शहर अफ़ग़ानिस्तान में था जहाँ से अला-उद्दीन ग़ोरी आया था।

(२) छन्द ९६ का नोट देखिए। बहलोल औरंगज़ेब का चाकर था प्रजा न था। एक बहलोल नामक छोटा सरदार दिल्ली का भी था।

जाहिर जहान जाके धनद समान पेखियतु पासवान यों खुमान चित चाय है। 'भूषन' भनत देखे भूष न रहत सब आपही सों जात दुख दारिद बिलाय है॥ खीझे ते खलक माहिं खलभल डारत है रीझे ते पलक माहिं कीन्हे रंक राय है। जंग जुरि अरिन के अंग को अनंग कीबो दीबो सिव साहब को सहज सुभाय है॥ १६२॥

अन्यच्च-दोहा।

सूर सिरोमनि सूर कुल सिव सरजा मकरंद।
भूषन क्यों औरँग जितै कुल मलिच्छ कुल चन्द॥ १६३॥

परिकरांकुर-दोहा।

भूषन भनि सबही तबहि जीत्यो हो जुरि जंग।
क्यों जीतै सिवराज सों अब अंधक[1] अवरंग?॥ १६४॥

श्लेष।

लक्षण-दोहा।

एक बचन मैं होत जहँ बहु अर्थन को ज्ञान।
स्लेस कहत हैं ताहि को भूषन सुकवि सुजान॥ १६५॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण

[2]सीता संग सोभित सुलच्छन[3] सहाय जाके भू पर भरत[4]

(१) अन्धक दैत्य को शिव (शंकर जी) ने मारा था।
(२) सीता जी संग हैं अथवा श्री अर्थात् लक्ष्मी ता संग है।
(३) लक्ष्मण जी अथवा लक्षण अर्थात् गुण।
(४) भरतजी अथवा भरता है नाम अर्थात् नाम पैदा करता है।

नाम भाई[1] नीति चारु है। 'भूषन' भनत कुल सूर कुल भूषन हैं दासरथी[2] सब जाके भुज भुव भारु है॥ अरि लंक[3] तोर जोर जाके संग बानर[4] रहैं सिंधुर[5] हैं बांधे जाके दल को न पारु है। तेगहि[6] कै भेंटै जौन[7] राकस मरद जानै सरजा सिवाजी राम ही को अवतारु है॥ १६६॥

पुन

देखत सरूप को सिहात न मिलन काज जग जीतिबे की जामें रीति छल बल की। जाके पास आवै ताहि निधन करति बेगि 'भूषन' भनत जाकी संगति न फल की॥ कीरति कामिनी राच्यो सरजा सिवा की एक बस कै सकै न बस करनी सकल की। चंचल सरस एक काहू पै न

---

(१) भाई अर्थात् भ्राता अथवा रुची अर्थात् रुचती है।

(२) दशरथ जी के पुत्र अथवा सब रथी जाके दास (हैं)।

(३) लंका अथवा कमर।

(४) बानर अर्थात् बन्दर है अथवा बाण रहैं।

(५) सिंधु अर्थात् समुद्र बाधा रहै (सेतु बंधन) अथवा सिंधुर अर्थात् हाथी रहै बांधे।

(६) ते गहि अर्थात् उन्हे पकड़ कर अथवा तलवार ही से।

(७) जौन राकस मरद जानै अर्थात् जो राक्षसो को मर्दना जानता है अथवा जो नर (मनुष्य) अकस (शत्रु) जन जानता है उसे तेगही से भेटता है अर्थात् मार डालता है। इस कबिता के अर्थ चाहे राम पक्ष मे लगाइए चाहे शिवा जी पर।

रहै दारी गनिका समान सुबेदारी दिली दल की ॥१६७॥

अप्रस्तुति प्रशंसा।

लक्षण—दोहा।

प्रस्तुति लीन्हे होत जहं, अप्रस्तुति परसंस।
अप्रस्तुति परसंस सो, कहत सुकवि अवतस ॥ १६८ ॥

उदाहरण—दोहा।

हिन्दुनि सों तुराकिनि कहै तुम्है सदा सन्तोष।
नाहिन तुम्हरे पतिन पर सिव सरजा कर रोष ॥ १६९ ॥
अरि तिय भिल्लिनि सों कहैं घन बन जाय इकन्त।
सिव सरजा सों बैर नहिं सुखी तिहारे कन्त ॥ १७० ॥

पुनः मालती सवैया।

काहू पै जात न 'भूषन' जे गढ़पाल की मौज निहाल रहे हैं। आवत हैं जु गुनी जन दच्छिन भौंसिला के गुन गीत लहे हैं॥ राजन राव सबै उमराव खुमान की धाक धुके यों कहे हैं। संक नहीं, सरजा सिवराज सों आजु दुनी में गुनी निरभे हैं ॥१७१॥

पर्य्यायोक्ति।

लक्षण-दोहा।

बचनन की रचना जहां बर्णनीय पर जानि।

---

(१) छिनाल स्त्री। इस छन्द को गणिका एवं दक्षिण की सूबेदारी दोनो ही पक्षों मे ले सकते है।

परजायोकति कहत हैं भूषन ताहि बखानि ॥ १७२ ॥

उदाहरण—मनहरण दण्डक।

महाराज सिवराज तेरे बैर देखियतु घन बन ह्वै रहे हरम हबसीन के। 'भूषन' भनत तेरे बैर[1] रामनगर जवारि* पर बहबहे रुधिर नदीन के। सरजा समत्थ बीर तेरे बैर बीजापुर बैरी बैयरनि[2] कर चीन्ह न चुरीन के। तेरे रोस देखियत आगरे दिली में बिन सिन्दुर के बुन्द मुख इन्दु जमनीन के ॥ १७३ ॥

व्याजस्तुति।

लक्षण—दोहा।

सुस्तुति में निन्दा कढ़ै निन्दा में स्तुति होय।
व्याजस्तुति ताको कहत कबि भूषन सब कोय ॥ १७४ ॥

---

(१) इस नाम के कई नगर है। यह रामनगर कदाचित राम गिर एवं रामगढ़ के निकट वाला है। इसीको राम नैर भी कहा है।

* छं० न० २०६ देखिए।

(२) स्त्रिया (पश्चिमी बोली)

(३) इस छन्द मे मुसल्मानो की स्त्रियो के मस्तक पर सिन्दूर का अभाव दिखलाकर उनकी वैधव्यावस्था व्यञ्जित की गई है। अब कुछ मुसल्मानों के यहाँ ब्याह के दिन सिन्दूर के पुड़े से सोहाग लिया जाता है पर तत्पश्चात उसका व्यवहार नहीं होता पर उन दिनों सम्भव है कि सधवा स्त्रियां मुसल्मानो में भी सदा सिन्दूर लगाती हो।

उदाहरण। कवित्त मनहरण।

पीरी पीरी हुन्नै तुम देत हौ मँगाय हमैं सुबरन[1] हम सों परखि करि लेत हौ। एक पलही मैं लाख[2] रूखन सों लेत लोग तुम राजा है कै लाख दीबै को सचेत हौ॥'भूषन' भनत महराज सिवराज बड़े दानी दुनी ऊपर कहाए केहि हेत हौ?। रीझि हँसि हाथी[3] हमैं सब कोऊ देत कहा रीझि हँसि हाथी एक तुमहियै देत हौ?॥ १७५॥

तू तो रातो दिन जग जागत रहत वेऊ जागत रहत रातौ दिन बनरत हैं।'भूषन' भनत तू विराजै रज भरो वेऊ रज भरे देहिन दरी[4] मैं बिचरत हैं॥ तूतौ सूर गन को बिदारि बिहरत सूर-मंडलै[5] बिदारि वेऊ सुरलोक रत हैं। काहे ते सिवाजी गाजी तेरोई सुजस होत तोसों अरिबर सरिबर सी करत हैं॥ १७६॥

---

[१] सोना अथवा सुन्दर वर्ण [अक्षर] अर्थात छन्द।

[२] लाख।

[३] हाथ मिलाना।

[४] पहाड़ी गुफा।

[५] युद्ध मे मरे हुए लोगं कहा जाता है कि सूर्य्य मण्डल भेद कर स्वर्ग सिधारते हैं।

आक्षेप ।

लक्षण—दोहा ।

पहिले कहिये बात कछु, पुनि ताको प्रतिषेध ।
ताहि कहत आच्छेप हैं भूषन सुकबि सुमेध ॥ १७७ ॥

उदाहरण । मालती सवैया ।

जाय भिरौ न भिरे बचिहौ भनि 'भूषन' भौंसिला भूप सिवा सों । जाय दरीन दुरौ दरिऔ तजिकै दरियाव लँघौ लघुता सों ॥ सींछन काज वजीरन को कढ़ै बोल यों एदिल साहि सभा सों । छूटि गयो तौ गयो परनालो सलाह की राह गहौ सरजा सों ॥ १७८ ॥

द्वितीय लक्षण—दोहा ।

जेहि निषेध अभ्यास ही भनि भूषन सो और ।
कहत सकल आच्छेप हैं जे कबिकुल सिरमौर ॥ १७९ ॥

उदाहरण—कबित्त मनहरण ।

पूरब के उत्तर के प्रबल पछाह हू के सब बादसाहन के गढ़ कोट हरते । 'भूषन' कहैं यों अवरंग सों वजीर जीति लीबे को पुरतगाल सागर उतरते ॥ सरजा सिवा पर पठावत मुहीम काज हजरत हम मरिब को नाहिं डरते । चाकर हैं उजुर कियो न जाय नेक पै कछू दिन उबरते तौ घने काज करते ॥ १८० ॥

---

[१] अच्छी मेधा अर्थात बुद्धि वाले ।

विरोध (द्वितीय विषम)

लक्षण—दोहा ।

द्रब्य क्रिया गुन में जहाँ उपजत काज बिरोध ।
ताको कहत विरोध हैं भूषन सुकवि सुबोध ॥ १८१ ॥

उदाहरण—मालती सवैया ।

श्री सरजा सिव तो जस सेत सों होत हैं बैरिन के मुंह कारे । 'भूषन' तेरे अरुन्न प्रताप सपेद लखे कुनबा नृप सारे । साहि तनै तव कोप कृसानु ते बैरि गरे सब पानिप वारे । एक अचम्भव होत बड़ो तिन ओंठ गहे अरि जात न जारे॥१८२॥

विरोधाभास ।

लक्षण—दोहा ।

जहं विरोध सो जानिए, साच विरोध न होय ।
तहा विरोधाभास कहि, बरनत हैं सबकोय ॥ १८३ ॥

उदाहरण—मालती सवैया ।

दच्छिन नायक[1] एक तुही, भुव भामिनि को अनुकूल[2] है भावे । दीनदयाल न तो सो दुनी पर म्लेच्छ के दीनहिं मारि मिटावै ॥ श्री सिवराज भनै कबि 'भूषन' तेरे सरूप को

---

(१) वह पति जिसके कई स्त्रिया हो और वह सबसे बराबर प्रेम रखता हो । अथवा दक्षिण देश का राजा ।

(२) वह पति जो एकस्त्रीव्रत हो अथवा मुआफिक़ ।

कोउ न पावै । सूर सुबंस मैं सूर शिरोमनि है करि तू कुल-चन्द कहावै ॥ १८४ ॥

विभावना ।

लक्षण—दोहा ।

भयो काज बिन हेतुही, बरनत हैं जेहि ठौर ।
तहं विभावना होत है, कवि भूषन सिर मौर ॥ १८५ ॥

उदाहरण—मालती सवैया ।

बीर बड़े बड़े मीर पठान खरो रजपूतन को गन भारो ।
'भूषण' आय तहां सिवराज लयो हरि औरँगजेब को गारो[1] ॥
दीन्हों कुज्वाब दिलीपति को अरु कीन्हो वजीरन को मुंह कारो । नायो न माथहि दक्खिननाथ न साथ मैं फौजन हाथ हथ्यारो ॥ १८६ ॥

पुनः—दोहा ।

साहितनै सिवराज की सहज टेव यह ऐन ।
अनरीझे दारिद हरै, अनखीझे अरि सैन ॥ १८७ ॥

और दो विभावना ।

लक्षण—दोहा ।

जहाँ हेतु पूरन नहीं, उपजत है पर काज ।
कै अहेतु ते और यों द्वै विभावना साज ॥ १८८ ॥

---

(१) गर्व, अभिमान ।

उदाहरण ।

कारण अपूरे काज की उत्पत्ति । कवित्त मनहरण ।

दच्छिन को दाबि करि बैठो है सइस्त खान पूना माहि दूना करि जोर करबार[1] को । हिन्दुवान खम्भ गढ़पति दलथम्भ भनि 'भूषन' भरैया कियो सुजस अपार को ॥ मनसबदार चौकीदारन गँजाय महलन में मचाय महाभारत के भार को । तो सो को सिवाजी जेहि दो सौ आदमी सों जीत्यो जंग सरदार सौ हजार असवार को ॥ १८९ ॥

अहेतु ते कारज की उत्पत्ति । कबित्त मनहरण ।

ता दिन अखिल खलभलैं खल खलक मैं जा दिन सिवा जी गाजी नेक करखत हैं । सुनत नगारन अगार तजि अरिन की दारगन भाजत न बार परखत हैं ॥ छूटे बार बार छूटे बारन ते लाल देखि 'भूषन' सुकवि बरनत हरखत हैं । क्यों न उतपात होहि बैरिन के झुडन में कारे घन उमड़ि अँगारे बरखत हैं ॥ १९० ॥

और विभावना ।

लक्षण—दोहा ।

जहाँ प्रगट भूषन भनत हेतु काज ते होय ।
सो विभावना औरऊ कहत सयाने लोय ॥ १९१ ॥

---

(१) करबाल, तलवार ।

उदाहरण—दोहा ।

अचरज भूषन मन बढ़्यो, श्री सिवराज खुमान ।
तव कृपान ध्रुव धूम ते, भयो प्रताप कृसान ॥ १९२ ॥

पुनः । कवित्त मनहरण ।

साहि तनै सिव ! तेरो सुनत पुनीत नाम धाम धाम सब ही को पातक कटत है । तेरो जस काज आज सरजा निहारि कवि मन भोज विक्रम कथा ते उचटत है ॥ 'भूषन' भनत तेरो दान संकलप जल अचरज सकल मही मैं लपटत है । और नदी नदन ते कोकनद होत तेरो कर कोकनद नदी नद प्रगटत है ॥ १९३ ॥

विशेषोक्ति ।

लक्षण-दोहा ।

जहां हेतु समरथ भयहु प्रगट होत नहिं काज ।
तहां बिसेसोकति कहत भूषन कवि सिरताज ॥ १९४ ॥

उदाहरण-मालती सवैया ।

दै दस पांच रुपैयन को जग कोऊ नरेस उदार कहायो । कोटिन दान सिवा सरजा के सिपाहिन साहिन को बिचलायो ॥ 'भूषन' कोऊ गरीबन सों भिरि भीमहुँ ते बलवन्त गनायौ । दौलति इन्द्र समान बढ़ी पै खुमान के नेक गुमान न आयो ॥ १९५ ॥

असम्भव।

लक्षण—दोहा।

अनहूबे की बात कछु प्रगट भई सी जानि।
तहाँ असम्भव बरनिए सोई नाम बखानि॥ १९६॥

उदाहरण-दोहा।

औरँग यों पछितात मैं करतो जतन अनेक।
सिबा लेइगो दुरग सब को जानै निसि एक॥ १९७॥

अन्यच्च। कवित्त मनहरण।

जसन के रोज यों जलूस गहि बैठो जोब इन्द्र आवै सोऊ लागै औरँग की परजा। 'भूषन' भनत तहाँ सरजा सिवाजी गाजी[1] तिनको तुजुक[2] देखि नेकहू न लरजा॥ ठान्यो न सलाम भान्यो साहि को इलाम[3] धूम धाम कै न मान्यों राम सिंहहू[4] को बरजा। जासों बैर करि भूप बचै न

---

(१) मुसलमानो में गाजी वह कहलाता था जो एक काफिर को मार डालै और यह बड़ी सम्मान की पदवी थी। इसी सम्मान के कारण भूषण जी कदाचित शिवाजी के नाम के साथ अनेक ठौर गाजी लगा दिया करते थे नहीं तो सच पूछिए तो इसे अशुद्ध ही समझना चाहिए अथवा गर्जने वाला।

(२) शान; महत्व।

(३) एलान, इश्तिहार, (यहा पर) हुक्म।

(४) ये जयपुराधीश महाराज मिर्जा जयसिंह के पुत्र थे। जयसिंह के साथ जब शिवाजी दिल्ली को गया तब येही दिल्लीश्वर

दिगन्त ताके दन्त तोरि तखत तरे ते आयो सरजा ॥१९८॥

असंगति (प्रथम)

लक्षण—दोहा।

हेतु अनत ही होय जहँ काज अनत ही होय।
ताहि असंगति कहत हैं भूषन सुमति समोय ॥ १९९ ॥

उदाहरण—कबित्त मनहरण।

महाराज सिवराज चढ़त तुरंग पर ग्रीवा जात नै करि गनीम अतिबल की । 'भूषन' चलत सरजा की सैन भूमि पर छाती दरकत है खरी अखिल खल की ॥ कियो दौरि घाव उमरावन अमीरन पै गई कटि नाक सिगरेई दिली-दल की। सूरत[1] जराई कियो दाह पातसाह उर स्याही जाय सब पातसाही मुख झलकी ॥ २०० ॥

असंगति (द्वितीय)

लक्षण—दोहा।

आन ठौर करनीय सो करै और ही ठौर।
ताहि असंगति और कबि-भूषन कहत सगौर ॥ २०१ ॥

की ओर से उसकी अगवानी को आए थे और उसे दिल्ली से निकल भागने में इन्होंने भी छिपकर सहायता की थी।

(१) पहले सन् १६६४ मे और फिर १६७० मे शिवाजी ने सूरत शहर को लूटा था।

उदाहरण—मनहरण दंडक।

भूपति सिवाजी तेरी धाक सों सिपाहिन के राजा पातसाहिन के मन ते अहं[1] गली। भौंसिला अभंग तू तौ जुरतो जहांई जंग तेरी एक फते होत मानो सदा संग ली। साहि के सपूत पुहुमी के पुरहूत कवि 'भूषन' भनत तेरी खरगउ दंगली। सत्रुन की सुकुमारी थहरानी सुन्दरी औ सत्रु के अगारन मैं राखे जंतु जगली॥ २०२॥

असंगति (तृतीय)

लच्छण-दोहा।

करन लगै औरै कछू करै औरई काज।
तहौं असंगति होत है कहि भूषन कबिराज॥ २०३॥

उदाहरण—मालती सवैया।

साहि तनै सरजा सिव के गुन नेकहु भाषि सक्यो न प्रबीनो। उद्यत होत कछू करिबे को करै कछु बीर महा रस भीनो। ह्वाँते गयो चकतै[2] सुख देन को गोसलखाने[3] गयो दुख दीनो। जाय दिली दरगाह सुसाह को 'भूषन' बैरि बनाय ही लीनो॥ २०४॥

---

(१) अहंकार गल गया।

[२] चकत्ता अर्थात् चगताईखाँ वंशज अवरंगजेब को।

[३] गुस्लखाने की घटना भूमिका मे देखिए।

विषम ।

लक्षण—दोहा ।

कहाँ बात यह कहँ वहै, यों जहँ करत बखान ।
तहाँ बिषम भूषन कहत, भूषन सुकबि सुजान ॥ २०५ ॥

उदाहरण—मालती सवैया ।

जावलि[1] बार सिंगारपुरी[2] औ जवारि[3] को राम के नैरि[4] को गाजी । 'भूषन' भौंसिला भूपति ते सब दूरि किए करि कीरति ताजी । बैर कियो सिवजी सों खवास[5] खाँ डौड़ियै सैन बिजैपुर बाजी । बापुरो एदिल साहि कहाँ कहाँ दिल्ली को दामनगीर सिवाजी ? ॥ २०६ ॥

---

[१] चन्द्रराव मोरे जावली का राजा था । उसे जीतकर शिवाजी ने सन् १६५५ ई० मे राज्य छीन लिया । इसी स्थान पर शिवाजी ने सन् १६५९ मे अफ़जलखाँ को मारा (छं० नं० ६३नोट देखिए ।

(२) कोकण देश मे सतारा शहर के पश्चिम-दक्षिण सिंगारपुर है । इसे १६६१ ई० मे शिवाजी ने अपने अधिकृत किया ।

(३) रावर के निकट एक छोटा सा स्थान है । इसे जयपुर (राजपूताने वाला नही) भी कहते हैं ।

(४) छन्द नं० १७३ का नोट देखिए ।

(५) बीजापुर के प्रधान मंत्री खान मुहम्मद का यह लड़का और स्वयं मंत्री भी था । जब प्रसिद्ध बादशाह अली आदिल शाह (एदिल साहि) मृत शय्या पर हुआ । तब उसने खवासखां को अपने

लै पेरनालो सिवा सरजा करनाटक[1] लौं सब देस बिगूँचे
बैरिन के भगे बालक वृन्द कहै कबि 'भूषन' दूरि पहूँचे ॥
नाँघत नाँघत घोर घने बन हारि परे यों कटे मनो कूँचे।
राजकुमार कहाँ सुकुमार कहाँ बिकरार पहार वे ऊँचे? ।२०७।

सम।

लक्षण—दोहा।

जहाँ दुहूँ अनुरूप को करिए उचित बखान।
सम भूषन तासों कहत भूषण सकल सुजान ॥ २०८ ॥

उदाहरण—मालती सवैया।

पंज हजारिन[3] बीच खड़ा किया मैं उसका कुछ भेद न पाया। 'भूषन' यों कहि औरंगजेब उजीरन सों बेहिसाब रिसाया॥ कम्मर की न कटारी दई इसलाम ने गोसलखाना

नाबालिग पुत्र सुल्तान सिकन्दर का 'मुतवल्ली (Regent and guardian) सन १६७० मे बनाया। सिवाजी से इसने कई समर किए पर स्वय युद्धमे न गया। सन् १६७५ मे यह छिपकर औरंगजेब से मिलगया और इसी कारण बहलोलखां (छन्द नं० ९६ का नोट देखिए) इत्यादि के इशारे पर मारा गया।

(१) छ० नं० १०७ का नोट देखिए।

(२) छं० नं० ११७ का नोट देखिए।

(३) पाच हजार सेना जिस सरदार के अधिकार मे हो। शिवाजी औरंगजेब के दरबार मे पंचहजारियों मे खड़ा किया गया था जिस पर वह बिगड़ उठा था।

बचाया। जोर सिवा करता अनरत्थ भली भई हत्थ हथ्यार न आया॥ २०९॥

पुनः—दोहा।

कुछ न भयो केतो गयो, हारयो सकल सिपाह।
भली करै सिवराज सों, औरँग करै सलाह॥ २१०॥

बिचित्र।

लक्षण—दोहा।

जहां करत हैं जतन फल. चित्त चाहि बिपरीत।
भूषण ताहि बिचित्र कहि; बरनत सुकबि बिनीत॥ २११॥

उदाहरण—दोहा।

तैं जयसिंहहिं गढ़ दिये, सिव सरजा जस हेत।
लीन्हे कैयो बरस मैं, बार न लागी देत॥ २१२॥

---

(१) ये जयपुर के महाराज थे और औरंगजेब ने इन्हें "मिर्जा" की उपाधि दी थी जिससे इनको "मिर्जा जयसिंह" अथवा "मिर्जा राजा" भी कहते हैं। ये सन् १६२१ ई० में गद्दी पर बैठे थे। (इनके बहुत दिनो बाद सवाई जयसिंह १६९९ मे गद्दी पर बैठे और जयपुर शहर बसाया)। मिर्जा जयसिंह और दिलेर खां सन् १६६५ मे शिवा जी से लड़न भेजे गए। जयसिंह ने सिंहगढ़ को घेरा और दिलेर खां ने पुरंधर को और शिवाजी ने जयसिंह से दब कर सन्धि की जिससे शिवाजी ने मुगलो के जितने किले जीते थे वे सब और निजामशाही बादशाहो से जीते हुए ३२ किलों मे से २० किले मिर्ज़ा राजा को

अन्यच्च। कवित्त मनहरण।

बेदर[1] कल्यान[2] दै परेंड़ा[3] आदि कोट साहि एदिल गँवा-यहै नवाय निज सीस को। 'भूषन' भनत भागनगरी[4] कुतुब साँई[5] दै करि गँवायो राम गिरि[6] से गिरीस को॥ भौंसिला भुवाल साहि तनै गढ़पाल दिन दोऊ ना लगाए गढ़ लेत

भेट किए और शिवाजी स्वय उनके साथ मार्च १६६६ मे दिल्ली गया, पर दिसम्बर मे निकल आया। सन् १६६७ मे इनका विष प्रयोग से देहान्त हुआ। ये शश (छ) हजारी थे।

(१) बहमनीवशज " बादशाहो " की राजधानी।

(२) कल्हान का सूबा काकन मे था। पहिले यह अहमदनगर के निजामशाही " बादशाहो " का था पर सन् १६३६ मे बीजापुर के अधिकार मे आया और सन् १६४८ ई० मे शिवाजी ने इसे बीजापुर के " बादशाह " आदिल शाह (एदिल) से जीत लिया।

(३) इस (परेंड़ा) नाम का कोई किला या स्थान इतिहास मे नहीं मिलता हाँ एक किला परेंदा नामक था जिसका अपभ्रश परेंड़ा जान पड़ता है। यह भी पहिले अहमदनगर का था और फिर आदिल शाह का हो गया जिस से शिवाजी ने इसे छीन लिया।

(४) छन्द नं० ११७ का नोट देखिए।

(५) कुतुबशाह। छन्द नं० ६२ का नोट देखिए।

(६) इस नाम का एक परगना था जिसमे इसी (रामगिरि) नाम की एक पहाड़ी है और इसी के पास रामगढ़ अथवा रामनैरि का किला भी था। यह गोलकुण्डा की रियासत में था।

पँचतीसं को । सरजा सिवाजी जयसाह मिरजा को लीबे सौ गुनी बड़ाई[2] गढ़ दीन्हे हैं दिलीस को ॥ २१३ ॥

प्रहर्षण

लक्षण । दोहा ।

जहँ मन बांछित अरथ ते प्रापति कछु अधिकाय ।
तहां प्रहरषन कहत हैं भूषन जे कविराज ॥ २१४ ॥

उदाहरण । मनहरण दण्डक ।

साहि तनै सरजा की कीरति सों चारो ओर चांदनी बितान छिति छोर छाइयतु है । 'भूषन' भनत ऐसो भूप भौंसिला है जाको द्वार भिच्छुकन सों सदाई भाइयतु है ॥ महा दानि सिवाजी खुमान या जहान पर दान के प्रमान जाके यों गनाइयतु है । रजत की हौंस किए हेम पाइयतु जासों हयन की हौंस किए हाथी पाइयतु है ॥ २१५ ॥

---

(१) शायद पैंतीस किले शिवाजी ने मिर्जा जयसिंह के भेंट किए थे ।

(२) अर्थात् तूने जयसिंह को दब कर किले नहीं दिए वरन उन्हें हिन्दू जान हिन्दू रुधिर बहाने के ठौर अपनी हार मान कर तूने उन्हें गढ़ दिए जिससे तेरी बड़ाई हुई और यश बढ़ा । छन्द के पहिले वाले दोहे मे भूषण जी ने यह शिवाजी के यश बढ़ाने का कारण कहा है पर बड़ी ही चतुराई से इस " विचित्र " अलंकार के उदाहरण मे लिखा ।

विषादन ।

लक्षण । दोहा ।

जहँ चित चाहे काज ते उपजत काज विरुद्ध ।
ताहि विषादन कहत हैं भूषन बुद्धि बिसुद्ध ॥२१६॥

उदाहरण । मालती सवैया ।

दारहि[1] दारि मुरादहि[3] मारि के संगर साह सुजै[4] बिचलायो । कै कर मैं सब दिल्ली की दौलति औरहु देस घने अपनायो ॥ बैर कियो सरजा सिव सों यह नौरंग के न भयो मन भायो । फौज पठाई हुती गढ़ लेन को गांठिहु[5] के गढ़ कोट गंवायो ॥ २१७ ॥

अपरंच[2] । दोहा ।

महाराज सिवराज तव बैरी तजि रस रुद्र ।
बचिबे को सागर तिरे बूड़े सोक समुद्र ॥ २१८ ॥

अधिक ।

लक्षण-दोहा ।

जहां बड़े आधार ते बरनत बढ़ि आधेय।

---

(१), (३), (४) यह तीनो औरंगज़ेब के भाई थे । इनका हाल प्रसिद्ध ही है कि इन्हें मारकर औरगज़ेब सिंहासन पर बैठा ।

(२) पीस कर । शूली देकर ।

(५) गाँठ के=अपने भी । धोती की मुर्री में लोग रुपए पैसे रख लेते हैं उसीसे यह मुहावरा निकला है ।

ताहि अधिक भूषन कहत जानि सुग्रन्थ प्रमेय ॥२१९॥

उदाहरण। दोहा।

सिव सरजा तव हाथ को नहिं बखान करि जात।

जाको बासी सुजस सब त्रिभुवन मैं न समात ॥२२०॥

पुनः। कवित्त मनहरण।

सहज सलील सील जलद से नील डील पब्बय से पील देत नाहिं अकुलात है।'भूषन' भनत महाराज सिवराज देत कंचन को ढेरु जो सुमेरु सो लखात है॥ सरजा सवाई कासों करि कबिताई तव हाथ की बड़ाई को बखान करि जात है? ; जाको जस टंक सातो दीप नव खंड महि मंडल की कहा ब्रहमंड ना. समात है॥ २२१ ॥

अन्योन्य।

लक्षण। दोहा।

अन्योन्या उपकार जहँ यह बरनन ठहराय।

ताहि अन्योन्या कहत हैं अलंकार कविराय ॥ २२२ ॥

उदाहरण। मालती सवैया।

तो कर सों छिति छाजत दान है दान हू सों अति तो कर छाजै। तैंही गुनी की बड़ाई सजै अरु तेरी बड़ाई गुनी सब साजै॥'भूषन' तोहि सों राज बिराजत राज सों तू सिव-राज बिराजै। तो बल सों गढ़ कोट गजैं अरु तू गढ़ कोटन के बल गाजै॥ २२३ ॥

बिशेष।

लक्षण—दोहा।

बरनत हैं आधेय को, जहं बिनही आधार।
ताहि बिसेष बखानहीं; भूषन कबि सरदार॥ २२४॥

उदाहरण—दोहा।

सिव सरजा सों जंग जुरि, चन्दावत[1] रजवत।
राव अमर[2] गो अमरपुर, समर रही रज तंत॥ २२५॥

पुनः। कबित्त मनहरण।

सिवाजी खुमान सलहेरि मैं दिलीस दल कीन्हों कतलाम करवालैं[3] गहि कर मैं। सुभट सराहे चन्दावत कछवाहे मुगलौ पठान ढाहे फरकत परे फर मैं॥ 'भूषन' भनत भौंसिला के भट उदभट जीति घर आए धाक फैली घर घर मैं। मारु के करैया अरि अमर पुरै गे तऊ अजौं मारु मारु सोर होत है समर मैं॥ २२६॥

---

(१) अमर सिंह चन्दावत। छन्द नं० ९७ का नोट देखिए।

(२) राव तो अमर पुर चला गया पर उसकी राजश्री (यहां पर वीरता) निराधार युद्धस्थल मे रह गई।

(३) "हाथ मे तलवार लेकर"। सिवाजी इस युद्ध में नहीं लड़ा था। वह तो इस युद्ध मे था ही नही और उसके मंत्री मोरोपंत नामक ब्राह्मण ने यह युद्ध जीता था, हॉ "लड़े सिपाही और नाम हो सरदार का" इसका हाल छ० न० ९७ के नोट मे देखिए।

व्याघात ।

लक्षण—दोहा ।

और काज करता जहां, करे औरई काज[1] ।
ताहि कहत व्याघात हैं, भूषन कबि सिरताज ॥ २२७ ॥

उदाहरण—मालती सवैया ।

ब्रह्म रचै पुरुषोत्तम पोसत संकर सृष्टि सँहारन हारे ।
तू हरि को अवतार सिवा नृप काज संवारे सबै हरि वारे ॥
'भूषन' यों अवनी यवनी कहैं "कोऊ कहै सरजा सों हहारे । तू
सबको प्रतिपालनहार बिचारे भतार न मारु हमारे ॥ २२८ ॥

अन्यच्च । कबित्त मनहरण ।

कसत मैं बार बार वैसोई बलन्द होत वैसोई सरस रूप समर भरत है । 'भूषन' भनत महराज सिवराज मनि, सघन सदाई जस फूलन धरत है ॥ बरछी कृपान गोली तीर केते मान, जोरावर गोला बान तिनहू को निदरत है । तेरो करबाल भयो जगत को ढाल, अब सोई हाल[2] म्लेच्छन के काल को करत है ॥ २२९ ॥

(१ यह लक्षण अशुद्ध प्रतीत होता है । "हितकारी वस्तु को अहित" वर्णन करने मे व्याघात अलंकार होता है (दूलह कृत "कवि कुल कंठा भरण" देखिए) । उदाहरण शुद्ध है ।

(२) इस समय ।

(कारण माला) गुम्फ ।

लक्षण—दोहा ।

पूरब पूरब हेतु कै, उत्तर उत्तर हेतु ।
या बिधि धारा बरनिए गुम्फ कहावत नेतु ॥ २३० ॥

उदाहरण । मालती सवैया ।

शंकर की किरपा सरजा पर जोर बढ़ी कवि 'भूषन' गाई । ता किरपा सों सुबुद्धि बढ़ी भुव भौंसिला साहि तनै की सवाई ॥ राज सुबुद्धि सों दान बढ़्यो अरु दान सों पुन्य समूह सदाई । पुन्य सों बाढ़्यो सिवाजी खुमान खुमान सों बाढ़ी जहान भलाई ॥ २३१ ॥

पुनः । दोहा ।

सुजस दान अरु दान धन, धन उपजै किरवान ।
सो जग मैं जाहिर करी, सरजा सिवा खुमान ॥ २३२ ॥

एकावली[1] ।

लक्षण—दोहा ।

प्रथम बरनि जहँ छोड़िए, जहां अरथ की पाँति ।
बरनत एकावलि अहै कवि, भूषन यहि भाँति ॥ २३३ ॥

---

(१) कारण माला में कारण—कार्य्य का सम्बध होता है पर एकावली में नहीं होता तथा मालादीपक मे पदावृत्ति दीपक का सम्बंध होता है सो भी एकावली में नहीं होता ।

उदाहरण। हरिगीतिका छन्द।

तिहुँ भुवन मैं 'भूषन' भनैं नरलोक पुन्य सुसाज मैं। नरलोक मैं तीरथ लसै महि तीरथों की समाज मैं[1]॥ महि मैं बड़ी महिमा भली महिमै महारज लाज मैं। रज लाज लाजत आजु है महराज श्री सिवराज मैं॥ २३४॥

मालादीपक एवं सार।

लक्षण—दोहा।

दीपक एकावलि मिले, मालादीपक होय।
उत्तर उत्तर उतकरष, सार कहत हैं सोय॥ २३५॥

उदाहरण।

माला दीपक। कबित्त मनहरण।

मन कबि 'भूषन' को सिव की भगति जीत्यो सिव की भगति जीत्यो साधु जन सेवा ने। साधु जन जीते या कठिन कलिकाल कलिकाल महाबीर महाराज महिमेवाने[3]। जगत में जीते महाबीर महाराजन ते महाराज बावन हू पातसाह लेवा ने। पातसाह बावनौ दिली के पातसाह दिल्ली पति पातसाहै जीत्यो हिन्दुपति सेवा ने॥ २३६॥

---

(१) नरलोक मै तीरथो की समाज मे महि (एक) तीरथ लसै

(२) महिमै (महिमाही) मैं रजलाज (बड़ी)। यहाँ दूरान्वयी दूषण है।

(३) महिमावान।

सार यथा। मालती सवैया।

आदि बड़ी रचना है बिरंचि की जामैं रह्यौ रचि जीव[1] जड़ो है। ता रचना महँ जीव बड़ो अति काहे ते ता उर ज्ञान गड़ो है॥ जीवन मैं नर लोग बड़े कबि 'भूषन' भाषत पैज अड़ो है। है नर लोग मैं राजा बड़ो सब राजन में सिवराज बड़ो है॥ २३७॥

यथासंख्य।

लक्षण—दोहा।

क्रम सों कहि तिनके अरथ, क्रम सो बहुरि मिलाय।
यथा संख्य ताको कहैं भूषन जे कबिराय॥ २३८॥

उदाहरण—कबित्त मनहरण।

जेई चहौ तेई गहौ सरजा सिवाजी देस संके दल दुवन के जे वै बड़े उर के। 'भूषन' भनत भौंसिला सों अब सनमुख कोऊ ना लरैया है धरैया धीर धुर के। अफजल[2] खान खान रुस्तमे[3] जमान फत्ते[4] खान कूटे लूटे ए उजीर

(१) जीवधारी और जड़ पदार्थ।

(२) छन्द नं० ६३ का नोट देखिए।

(३) सन् १६५९ के दिसम्बर मे इसकी शिवाजी से परनाले के निकट मुठभेड़ हुई और शिवाजी ने इसकी सेना का बड़ाही भयंकर कतलाम किया और इसे कृष्णानदी के उस पार तक खदेरा। इसका शुद्ध नाम रुस्तमे ज़र्मा था।

(४) यह सन् १६७० में शिवाजी से जंजीरा के किले मे लड़ा।

बिजैपुर के । अमर[1] सुजान मोहकम[2] बहलोल[3] खान खाड़े छांटे छांटे उमराव दिलीसुर के ॥ २३९ ॥

पर्य्याय ।

लक्षण—दोहा ।

एक अनेकन में रहै, एकहि में कि अनेक ।
ताहि कहत परयाय हैं भूषण सुकबि बिबेक ॥ २४० ॥

१ उदाहरण—दोहा ।

जीत रही औरंग में, सबै छत्रपति छाँड़ि ।
तजि ताहू को अब रही शिवसरजा कर माँड़ि ॥ २४१ ॥

पुनः । कबित्त मनहरण ।

कोट गढ़ दै कै माल मुलुक मैं बीजापुरी गोलकुंडा

यह शिवाजी से मिल गया और इस कारण इसके तीन साथियों ने इसे बन्दी कर लड़ाई जारी रक्खी ।

(१) छं० न० ९७ का नोट देखिए ।

(२) शिवाजी के समय मे यह कोई बड़ा नामी सरदार न था हां कोई साधारण लड़ाई में उससे अवश्य हारा होगा जिसका हाल इतिहास में नहीं मिलता पर आगे चलकर फर्रुखसियर बादशाह के समय में यह बढा था और सन् १७१७ में मरहटों से लड़ने को भेजा गया था ।

(३) छन्द नं० ९६ का नोट देखिए । यह दिल्ली का नहीं बरन बीजापुरी सरदार था ।

वारो पीछे ही को सरकतु है ।'भूषन' भनत भौंसिला भुवाल भुजबल रेवा ही[1] के पार अवरंग हरकतु है ॥ पेसकसैं[2] भेजत इरानैं[3] फिरगानैं[4] पति उनहू के उर याकी धाक धरकतु है । साहितनै सिवाजी खुमान या जहान पर कौन पातसाह के न हिए खरकतु है ? ॥ २४२ ॥

अगर के धूप धूम उठत जहांई तहाँ उठत बगूरे अब अति ही अमाप हैं । जहाँई कलाँवत अलापैं मधुरस्वर तहाँई भूत प्रेत अब करत बिलाप हैं ॥'भूषन' सिवाजी सरजा के बैर बैरिन के डेरन मैं परे मनो काहु के सराप हैं । बाजत हे जिन महलन में मृदंग तहा गाजत मतंग सिंघ बाघ दीह दाप हैं ॥ २४३ ॥

परिवृत्ति ।

लक्षण। दोहा ।

एक बात को दै जहाँ आन बात को लेत ।
ताहि कहत परिवृत्ति हैं भूषन सुकबि सचेत ॥ २४४ ॥

---

(१) नर्म्मदा नदी के उत्तर ओर ही ।

[२] पेशकश; नज़र, खिराज ।

[३] ईरान फ़ारस ।

[४] योरप वाले जैसे फ़रासीसी. पोर्टुगीज़ इत्यादि । ये योरुपी सौदागर शिवाजी को नजैंर भेजते थे । बाबर के पिता का राज्य भी फिरगाना कहलाता था ।

उदाहरण । कवित्त मनहरण ।

दच्छिन धरन धीर धरन खुमान, गढ़ लेत गढ़ धरन सों धरम दुवारु दै । साहि नर नाह को सपूत महा बाहु लेत मुलुक महान छीनि साहन को मारु दै ॥ संगर मैं सरजा सिवाजी अरि सैनन को सार हरि लेत हिन्दुवान सिर सारु दै । 'भूषन' भुसिल जय जस को पहारु लेत हरजू कों हारु हरगन को अहारु दै ॥ २४५ ॥

परिसंख्या ।

लक्षण । दोहा ।

अनत बराजि कछु बस्तु जहँ बरनत एकहि ठौर ।
तेहि परिसंख्या कहत हैं भूषन कबि दिलदौर ॥ २४६ ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक ।

अति मतवारे जहाँ दुरदै निहारियत तुरगन ही में चंचलाई परकीति है । 'भूषन' भनत जहाँ पर लगैं बानन मैं कोक पच्छिनहि माहिं बिछुरन रीति है ॥ गुनि गन चोर जहाँ एक चित्त ही के, लोक बंधैं जहाँ एक सरजा की गुन-प्रीति है । कम्प[1] कदली मैं बारि बुन्द बदली मैं सिवराज अदली के राज मैं यों राजनीति है ॥ २४७ ॥

---

[१] इसका दूसरा पाठ यों है "कम्प..... सिवराज अदली मैं अदली की राज नीति है" ।

विकल्प।

लक्षणं। दोहा।

कै वह कै यह कीजिए जहँ कहनावति होय।
ताहि बिकल्प बखानहीं भूषन कवि सब कोय॥ २४८॥

उदाहरणं[1]। मालती सवैया।

मोरँग[2] जाहु कि जाहु कमाऊँ[3] सिरीनगरैं[4] कि कबित्त बनाए। बाँधव[5] जाहु कि जाहु अमेरि[6] कि जोधपुरै कि चितौ-

---

[१] ए दोनोही उदाहरण (छं० नं० २४९, २५०) अशुद्ध हैं। विकल्प मे सन्देह ही रहना चाहिए पर इन दोनों छन्दो मे अन्त मे सन्देह हटा कर एक बात निश्चयात्मक कह दी है। कदाचित अपने नायक की पूर्ण प्रशंसा ही लिये के भूषण जी ने अपने ठीक उदाहरण अन्त मे जान बूझ कर अशुद्ध कर दिए हो, पर यह अन्य प्रकार से भी सम्भव था।

[२] इस नाम की रियासत का पता नही लगता। कदाचित मोरभंज की रियासत से तात्पर्य्य हो अथवा मुरजन किले से जो कांकण प्रान्त मे था।

[३] कमाऊँ (गढ़वाल) की रियासत मे भूषण जी गए थे। इस बिषय मे भूमिका देखिए।

[४] कश्मीर।

[५] बाँधव की रियासत। (रींवा)

[६] जयपुर में इस नाम का प्रसिद्ध किला है जहाँ शक्ति शिलामयी देवी हैं। "जय जय शक्ति शिलामयी जय जय गढ आमेर। जय जयपुर सुरपुर सहस जो जाहिर चहुँ फेर"॥

रहि धाए॥ जाहु कुतुब्ब कि एदिल पै कि दिलीसहु पै किन जाहु बोलाए।'भूषन'गाय फिरौ महि मैं बनिहै चित चाह सिवाहि रिझाए॥ २४९॥

पुनः मालती सवैया।

देसन देसन नारि नरेसन'भूषन'यों सिख देहिं दया सों। मंगन ह्वै करि, दन्त गहौ तिन, कन्त तुम्हैं हैं अनन्त महा सों[1]॥ कोट गहौ कि गहौ बन ओट कि फौज की जोट सजौ प्रभुता सों। और करौ किन कोटिक राह सलाह बिना बचिहौ न सिवा सों॥ २५०॥

समाधि।

लक्षण। दोहा॥

और हेतु मिलि कै जहां होत सुगम अति काज।
ताहि समाधि बखानहीं भूषन जे कविराज॥ २५१॥

उदाहरण। मालती सवैया।

बैर कियो सिव चाहत हो तब लौं अरि बाह्यो कटार कठैठो। योंही मलिच्छहि छाँड़ै नहीं सरजा मन तापर रोस मैं पैठो॥'भूषन'क्यों अफजल्ल बचै अठपाव[3] कै सिंह को

[१] चित्तौर अर्थात् मेवार अथवा उदयपुर।

[२] सौंह; कसम।

[३] उपद्रव; शरारत। यथा "करौ तुम अठपाव पावै हम गारी गावँ मै" [रघुनाथ—रसिक मोहन]।

धावँ उमैठो। बीछू के घाय धुक्योई[1] धरक है तो लग धाय धराधर बैठो ॥ २५२॥

समुच्चय।

लक्षण—दोहा।

एक बारही जहँ भयो बहु काजन को बंध।
ताहि समुच्चय कहत हैं भूषन जे मतिबंध ॥ २५३ ॥

उदाहरण—मालती सवैया।

माँगि पठायो सिवा कछु देस वजीर अजानन बोल गहे ना। दौरि लियो सरजा परनालो[2] यों 'भूषन' जो दिन दोय लगे ना ॥ धाक सों खाक बिजैपुर भो मुख आय गो खानै[3] खवास के फेनाँ[4]। भै भरकी करकी धरकी दरकी दिल एदिल साहि की सेना ॥ २५४ ॥

द्वितीय समुच्चय।

लक्षण[5]-दोहा।

वस्तु अनेकन को जहाँ बरनत एकहि ठौर।

---

[१] धुकधुकाया; कलेजा कापा।

[२] छन्द नं० १०७ का नोट देखिए।

[३] छं० नं० २०६ का नोट देखिए।

[४] भयानकरस पूर्ण।

[५] अन्य कबि इसका लक्षण यों देते हैं "द्वितीय समुच्चय में एक काज को कई कारण पुष्ट करते हैं।"

दुतिय समुच्चय ताहि को कहि भूषन कवि मौर ॥ २५५ ॥

उदाहरण—मालती सवैया।

सुन्दरता गुरुता प्रभुता भनि 'भूषन' होत है आदर जामैं।
सज्जनता औ दयालुता दीनता कोमलता झलकै परजा मैं॥
दान कृपानहु को करिबो करिबो अभै दीनन को बर जामैं।
साहन सों रन टेक बिबेक इते गुन एक सिवा सरजा मैं।२५६।

प्रत्यनीक।

लक्षण—दोहा।

जहा जोरावर सत्रु के पक्षी पै कर जोर।
प्रत्यनीक तासों कहैं भूषन बुद्धि अमौर॥ २५७॥

उदाहरण—अलसा सवैया[1]।

लाज धरौ सिवजू सों लरौ सब सैयद सेख पठान पठाय कै।'भूषन' ह्यां गढ़ कोटन हारे उहाँ तुग क्यों मठ तोरे

---

(१) अलसा सवैया नवीन मत की है। इसमें पहले सात भगन फिर एक रगन (रगनन्त भ मुनि) होते हैं। भगण के तीन अक्षरों में पहला गुरु और शेष दो लघु होते हैं तथा रगण के तीन अक्षरों मे पहला व तीसरा गुरु होता है और दूसरा लघु।

(२) औरंगजेब ने अनेक मन्दिर हिन्दुओं को सताने के लिए तोड़वा दिए, यहां तक कि काशीजी मे श्री विश्वनाथजी तक का मंदिर तोड़वा कर उसकी एक ओर की दीवार पर मसजिद बनवा दी जो अब तक जैसी की तैसी प्रस्तुत है। न जाने इसमे हिन्दुओं की क्या वास्तविक हानि होगई, पर हां इतना अवश्य हुआ कि ऐसीही बातों से

रिसाय कै ? ॥ हिन्दुन के[1] पति सों न बिसात सतावत हिन्दु गरीबन पाय कै। लीजै कलंक न दिल्लि के बालम आलम आलमगीर[2] कहाय कै ॥ २५८ ॥

पुनः। कबित्त मनहरण।

गौर[3] गरबीले अरबीले राठवर[4] गह्यो[5] लोह[5] गढ़ सिंहगढ़ हिम्मति हरष ते। कोट के कँगूरन मैं गोलन्दाज तीरन्दाज राखे हैं लगाय, गोली तीरन बरषते ॥ कै के सावधान किरवान कसि कम्मरन सुभट अमान चहुँ ओरन करषते। 'भूषन'

मुग़लों के ऐसे सुदृढ़ राज्य की चूरें हिल गईं और कुछ ही दिनों में वह भरभरा कर ढेर हो गया। आश्चर्य्य है कि औरंगजेब जैसे राजनीतिज्ञ शासक ने ऐसी उत्कट भूलें की! अस्तु। सन् १६६९ ई० की यह घटना है। बीभत्स रस।

(१) मेवार (उदयपुर) के राणा "हिन्दूपति" कहलाते हैं। शिवाजी को उसी वंश का होने से भूषण जी ने इस नाम से पुकारा।

(२) औरंगजेब का यह भी नाम था जिसका अर्थ है संसार भर पर अधिकार करलेने वाला।

(३) छ० नं० १३४ का नोट देखिए।

(४) जोधपुर के राजा गण। यहाँ उदयभानु राठौर (छं० न० १०० देखिए।)

(५) सिंहगढ़ (छं० नं० १०० देखिए) के गढ़ अर्थात् किले में लोह अर्थात् तलवार गहा

भनत तहाँ सरजा सिवा तैं चढ़ो राति के सहारे ते अराति अमरषं ते ॥ २५९ ॥

अर्थापत्ति (काव्यार्थापत्ति)।

लक्षण-दोहा।

"वह कीह्यो तो यह कहा" यों कहनावति होय।
अर्थापत्ति बखानहीं तहाँ सयाने लोय॥ २६०॥

उदाहरण। कवित्त मनहरण।

सयन मैं साहन को सुन्दरी सिखावैं ऐसे सरजा सों बैर जनि करौ महा बली है। पेसकसैं भेजत विलायति पुरुत-गाल सुनिकै सहमि जात करनाटं थली है॥ 'भूषन' भनत गढ़ कोट माल मुलुक दै सिवा सों सलाह राखिए तौ बात भली है। जाहि देत दंड सब डरिकै अखंड सोई दिल्ली दल-मली तौ तिहारी कहा चली है ? ॥ २६१ ॥

काव्यलिङ्ग।

लक्षण-दोहा।

है दिढ़ाइबे जोग जो ताको करत दिढ़ाव।
काव्यलिंग तासों कहैं भूषन जे कबिराव॥ २६२॥

---

(१) शत्रु पर क्रोध करके।

(२) छं० नं० २४२ का नोट देखिए।

(३) छं० नं० ११७ का नोट देखिए।

उदाहरण-मनहरण दंडक ।

साइति लै लीजिए बिलाइति को सर कीजै बलख बिलायति को बदी अरि डावरे ।'भूषन' भनत कीजै उत्तरी भुवाल बस पूरब के लीजिए रसाल गज छावरे ॥ दच्छिन के नाथ के सिपाहिन सों बैर करि अवरंग साहिजू कहाइए न बावरे । कैसे सिवराज मानु देत अवरंगै गढ़ गाढ़े गढ़पती गढ़ लीन्हे और रावरे ॥ २६३ ॥

अर्थान्तरन्यास ।

लक्षण-दोहा ।[1]

कह्यो अरथ जहँही लियो और अरथ उल्लेख ।
सो अर्थान्तरन्यास है कहि सामान्य बिसेख ॥ २६४ ॥

उदाहरण । सामान्य भेद । कबित्त मनहरण ।

बिना चतुरंग संग बानरन लेकै बाँधि बारिध को लंक रघुनन्दन जराई है । पारथ अकेले द्रोन भीषम से लाख भट जीति, लीन्ही नगरी बिराट में बड़ाई है ॥'भूषन' भनत है गुसुलखाने मैं खुमान अवरंग साहिबी हथ्याय हरि लाई है । तौ कहा अचम्भो महराज सिवराज सदा बीरन के हिम्मतै हथ्यार होत आई है ॥ २६५ ॥

---

(१) इसका लक्षण अन्य कवि यों देते हैं:—अर्थान्तरन्यास वह है जहाँ किसी वस्तु को पहले विशेष कह के फिर सामान्य कर दे ।

विशेषभेद। मालती सवैया।

साहि तनै सरजा समरत्थ करी करनी धरनी पर नीकी। भूलिगे भोज से बिक्रम से औ भई बलि बेनु की कीरति फीकी॥ 'भूषन' भिच्छुक भूप भए भलि भीख लै केवल भौंसिला ही की। नैसुक रीझि धनेस करै, लखि ऐसियै रीति सदा सिवजी की॥ २६६॥

प्रौढ़ोक्ति।

लक्षण-दोहा।

जहँ[1] उतकरष अहेत को बरनत हैं करि हेत।
प्रौढ़ोकति तासों कहत भूषन कबि बिरदेत[2]॥ २६७॥

उदाहरण-कबित्त मनहरण।

मानसर बासी हंस बंस न समान होत, चन्दन सों घस्यो घनसारउ[3] धरीक है। नारद की सारद की हाँसी मैं कहाँ की आभ सरद की सुरसरी को न पुण्डरीक है?॥ 'भूषन' भनत छक्यो छीरधि मैं थाह लेत फेन लपटानो ऐरा-

---

(१) इसका लक्षण अन्य कवियो ने यो भी कहा है:—प्रौढ़ोक्ति वह है जहाँ कोई बहुत बड़ा काज हो और उसके वास्ते कोई कारण वरणित न हो पर कोई कल्पित कारण कहा जाय।

(२) विरद (प्रशंसा) करने वाले।

(३) कपूर भी।

वत को करी कहै ?। कयलास ईस ईस सीस रजनीस वहै। अवनीस सिवा के न जस को सरीक है ॥ २६८ ॥

सम्भावना ।

लक्षण-दोहा।

" जु यों होय तौ होय इमि " जहँ सम्भावन होय ।
ताहि कहत सम्भावना कबि भूषन सब कोय ॥२६९॥

उदाहरण-कवित्त मनहरण ।

लोमस की ऐसी आयु होय कौन हू उपाय तापर कवच जो करनवारो धरिए। ताहू पर हूजिए सहस बाहु ता पर सहस गुनो साहस जो भीमहु ते करिए ॥ 'भूषन' कहैं यों अवरंगजू सों उमराव नाहक कहौ तौ जाय दक्खिन में मरिए। चलै न कछू इलाज भेजियत बे ही काज ऐसो होय साज तौ सिवा सों जाय लरिए ॥ २७० ॥

मिथ्याध्यवसित ।

लक्षण। दोहा ।

झूठ अरथ की सिद्धि को झूठो बरनत आन ।
मिथ्याध्यवसित कहतहैं भूषन सुकबि सुजान ॥२७१॥

उदाहरण-दोहा।

" पैग रन मैं चल यों लसैं ज्यों अंगद पग ऐन ।

---

(१) इस मे शिवाजी के विषय में झूठी बातें झूठी उपमाओं द्वारा कही गई हैं जैसा कि भूषणजी ने लक्षण में साफ लिख दिया है।

धुव सो भुव सो मेरु सो सिव सरजा को बैन ॥२७२॥

पुनः । कबित्त मनहरण ।

मेरु सम छोटो पन सागर सो छोटो मन धनद को धन ऐसो छोटो जग जाहि को । सूरज सो सीरो तेज चाँदनी सी कारी किति अमिय सो कटु लागै दरसन ताहि को ॥ कुलिस सो कोमल कृपान अरि भंजिबे को 'भूषन' भनत भारी भूप भौंसिलाहि को । भुव सम चल पद सदा महि मंडल में धुव्र सो चपल धुव बल सिव साहि को ॥ २७३ ॥

उल्लास ।

लक्षण—दोहा ।

एकहि के गुन दोष ते, औरै को गुन दोस ।
बरनत हैं उल्लास सो सकल सुकबि मतिपोस ॥२७४॥

उदाहरण (गुणेनदोषो) । मालती सवैया ।

काज मही सिवराज बली हिंदुवान बढ़ाइबे को उर ऊटै । 'भूषन' भू निरम्लेच्छ करी चहै, म्लेच्छन मारिबे को रन जूटै ॥ हिन्दु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावत लौं कोइ टूटै । चन्द अलोक ते लोक सुखी यहि कोक अभागे को सोक न छूटै ॥ २७५ ॥

पुनः (दोषेण गुणो) । मनहरण दण्डक ।

देस दहपट्ट कीने लूटि कै खजाने लीने बचै न गढ़ोई

काहू गढ़ सिरताज के । तोरादार[1] सकल तिहारे मनसबदार डाँड़े, जिनके सुभाय जंग दै मिजाज के ॥ 'भूषन' भनत बादसाह को यों लोग सब बचन सिखावत सलाह की इलाज के । डावरे की बुद्धि है कै बावरे न कीजै बैरु रावरे के बैर होत काज सिवराज के ॥ २७६ ॥

अन्यच्च (गुणेन गुणो) । दोहा ।

नृप सभान मैं आपनी होन बड़ाई काज ।
साहितनै सिवराज के करत कबित कबिराज ॥ २७७ ॥

अपरंच (दोषेन दोषो) । दोहा ।

सिव सरजा के बैर को यह फल आलमगीर ।
छूटे तेरे गढ़ सबै कूटे गए वजीर ॥ २७८ ॥

पुनरपि । मनहरण दण्डक ।

दौलति दिली की पाय कहाए अलमगीर बब्बर[2] अकब्बर[3] के बिरद बिसारे तैं । 'भूषन' भनत लरि लरि सरजा सों जंग निपट अभंग गढ़ कोट सब हारे तैं ॥ सुधर्‌यो न एकौ साज भेजि भेजि बे ही काज बड़े बड़े बे इलाज उमराव मारे तैं ।

---

(१) तिहारे सकल तोरादार (तथा) मनसबदार जिनके सुभाय मिजाज के (अभिमानी थे) युद्ध करके डाँड़े ।

(२) बाबर बादशाह, औरंगजेब के पांच पुश्त ऊपर का भारत का पहला मुग़ल बादशाह था ।

(३) अकबर औरंगज़ेब का परदादा था ।

मेरे कहे मेर करु, सिवाजी सों बैर करि गैर[1] करि नैर[2] निज नाहक उजारे तैं ॥ २७९ ॥

अवज्ञा ।

लक्षण-दोहा ।

औरे के गुन दोस ते होत न जहँ गुन दोस ।
तहँा अवज्ञा होत है भनि भूषन मति पोस ॥ २८० ॥

उदाहरण । मालती सवैया ।

औरन के अनबाढ़े कहा अरु बाढ़े कहा नहिं होत चहा है । औरन के अनरीझे कहा अरु रीझे कहा न मिटावत हा[3] है ।'भूषन'श्री सिवराजहि माँगिए एक दुनी बिच दानि महा है । मंगन औरन के दरबार गए तौ कहा न गए तौ कहा है ? ॥ २८१ ॥

अनुज्ञा ।

लक्षण-दोहा ।

जहँा सरस गुन देखि कै करै दोस की हौस ।
तहँा अनुज्ञा होत है भूषन कबि यहि रौस ॥ २८२ ॥

उदाहरण । कबित्त मनहरण ।

जाहिर जहान सुनि दान के बखान आजु महा दानि

---

(१) गैरकरि=बेजा करके ।

(२) नगर; देश ।

(३) "हाय" अर्थात् दुःख को नहीं मिटाता ।

साहितनै गरिबनेवाज के। 'भूषन' जवाहिर जलूस जरबाफ जोति देखि देखि सरजा की सुकबि समाज के ॥ तप करि करि कमलापति सों माँगत यों लोग सब करि मनोरथ ऐसे साज के। बैपारी जहाज के न राजा भारी राज के भिखारी हमैं कीजै महाराज सिवराज के ॥ २८३ ॥

लेश ।

लक्षण-दोहा ।

जहँ बरनत गुन दोष कै कहै दोष गुन रूप ।
भूषन ताको लेस कहि गावत सुकबि अनूप ॥ २८४ ॥

उदाहरण-दोहा ।

उदैभानु राठौर बर धरि धीरज, गढ़, ऐंड़ ।
प्रगटै फल ताको लह्यौ परि गो सुर पुर पैंड़ ॥ २८५ ॥
कोऊ बचन न सामुहे सरजा सों रन साजि ।
भली करी पिय ! समर ते जिय लै आए भाजि ॥ २८६ ॥

तदगुण ।

लक्षण । दोहा

जहाँ आपनो रंग तजि गहै और को रंग ।
ताको तदगुन कहत हैं भूषन बुद्धि उतंग ॥ २८७ ॥

उदाहरण। मनहरण दंडक

पम्पा[1] मानसर आदि अगन तलाव लागे जेहि के परन मैं अकथ युत[2] गथ के।'भूषन' यों साज्यो राजगढ़[3] सिवराज रहे देव चक चाहि कै बनाए राजपथ के॥ बिनु[4] अवलम्ब कलिकानि[5] आसमान मैं है होत बिसराम जहां इन्दु औ उदर्थ[6] के। महत उतंग मनि जोतिन के संग[7] आनि कैयो रंग चकहा[8] गहत रबि रथ के॥ २८८॥

---

(१) जिस (राजगढ़) के पक्षो अर्थात् पक्खो मे पम्पा, मान-सरोवर आदि अगणित तालाब लगे हैं अर्थात् चित्रित हैं।

(२) वे (तालाब) अकथनीय है और उनके साथ कितने ही गाथा लगे है अर्थात् वे इतिहासों और पुराणों में प्रसिद्ध हैं।

(३) इसका वर्णन छन्द नं० १४ का नोट एवं छन्द न० १५, २४ मे देखिए। जान पड़ता है कि वह वर्णन राजगढ़ ही का है न कि रायगढ़ का। भूमिका देखिये।

(४) बिना किसी चीज़ पर सहारा पाने के सूर्य और चन्द्रमा आसमान मे परेशान हो कर जिस राजगढ़ पर विश्राम ले लेते हैं।

(५) परेशानी।

(६) उदय व अस्त होनेवाला, सूर्य।

(७) के संग आनि=से मिलान हो कर।

(८) पहिए।

पूर्व्व रूप।

लक्षण। दोहा

प्रथम रूप मिटि जात जहँ फिरि वैसोई होय।
भूषन पूरब रूप सो कहत सयाने लोय॥ २८९॥

उदाहरण। मालती सवैया।

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यन्त पुनीत तिहू पुर मानी। राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकिहु ब्यास के अंग सोहानी॥ 'भूषन' यों कलि के कबिराजन राजन के गुन पाय नसानी। पुन्य चरित्र सिवा सरजै सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी॥ २९०॥

यों सिर पै छहरावत छार हैं जाते उठैं असमान बगूरे। 'भूषन' भूधरऊ धरकैं जिनके धुनि धक्कन यों बल रूरे॥ ते सरजा सिवराज दिए कबिराजन को गजराज गरूरे। सुंडन

(१) इस को पढ़ कर तुलसीदासजी की—

"भक्त हेतु विधि भवन बिहाई। सुमिरत सारद आवत धाई॥
"राम चरित सर बिन अन्हवाए। सो श्रम जाय न कोटि उपाए॥"
इत्यादि चौपाइयों का स्मरण हो आता है। इस विषय में हमने अपने विचार "सरस्वती, भाग १ संख्या १२" में हिंदी काव्य (आलोचना)" शीर्षक निबंध मे प्रकट किए है। विषयी राजाओं के कारण लोभी कवियों ने नायका इत्यादिक विषयो पर काव्य कर सरस्वती देवी को अपवित्र सी कर दिया था।

सों पहिले जिन सोखि कै फेरि महामद सों नद पूरे ॥२९१॥

श्री सरजा सलहेरि[1] के युद्ध घने उमरावन के घर घाले । कुम्भ चँदावत सैद पठान कबंधन धावत भूधर हाले ॥ भूषन'यों सिवराज की धाक भए पियरे अरुने रंग वाले । लोहै कटे लपटे अति लोहु[2] भए मुंह मीरन के पुनि लाले ॥२९२॥

यों कबि'भूषन' भाषत है यक तौ पहिले कलिकाल की सैली । तापर हिन्दुन की सब राह सु नौरँग साह करी अति मैली ॥ साहि तनै सिव के डर सों तुरकौ गहि बारिध की गति पैली । बेद पुरानन की चरचा अरचा द्विज देवन की फिरि फैली ॥ २९३ ॥

अतद्गुण ।

लक्षण । दोहा ।

जहँ संगति ते और को गुन कछूक नहिं लेत ।
ताहि अतदगुन कहत हैं भूषन सुकवि सचेत ॥ २९४ ॥

उदाहरण । मालती सवैया ।

दीन दयालु दुनी प्रतिपालक जे करता निरम्लेच्छ मही के ।'भूषन'भूधर उद्धरिबो सुने और जिते गुन ते सब जी के ॥ या कलि मैं अवतार लियो तऊ तेई सुभाय सिवाजी

---

[१] छन्द नं० ९७ का नोट देखिये ।

[२] लोहू; रुधिर ।

बली के । आय धर्‍यो हरि ते नर रूप पै काज करै सिगरे हरि ही के ॥ २९५ ॥

पुनः । कवित्त मनहरण ।

सिवाजी खुमान तेरो खग्ग बढ़े मान बढ़े मानस लौं बदलत कुरुष उछाहं ते ।'भूषन'भनत क्यों न जाहिर जहान होय प्यार पाय तो से ही दिपत नर नाह ते ॥ परताप फेटो रहो सुजस लपेटो रहो बरतन खरो नर पानिप अथाह ते। रंगरंग रिपुन के रकत सों रंगो रहै रातो दिन रातो पै न रातो होत स्याह ते ॥ २९६ ॥

अपरंच । दोहा ।

सिव सरजा की जगत मैं राजत कीरति नौल ।
अरि तिय अंजन हग हरै तऊ धौल की धौल ॥ २९७ ॥

अनुगुन ।

लक्षण । दोहा ।

जहां और के संग ते बढ़ै आपनो रंग ।
ता कहँ अनुगुन कहत हैं भूषन बुद्धि उतंग ॥ २९८ ॥

उदाहरण । कवित्त मनहरण ।

साहि तनै सरजा सिवा के सनमुख आय कोऊ बचि जाय न गनीम भुज बल मैं ।'भूषन'भनत भौंसिला की दिल

---

[१] मानसरोवर की भांति बेरुखी उछाह में परिणित हो जाती है ।

दौर सुनि धाक ही मरत म्लेच्छ औरंग के दल मैं ॥ रातौ दिन रोवत रहत यवनी हैं सोक परोई रहत दिली आगरे सकल मैं । कज्जल कलित अँसुवान के उमंग संग दूनो होत रोज रंग यमुना के जल मैं ॥ २९९ ॥

मीलित ।

लक्षण । दोहा ।

सदस बस्तु मैं मिलि जहां भेद न नेक लखाय ।
ताको मीलित कहत हैं भूषन जे कबिराय ॥ ३०० ॥

उदाहरण । कवित्त मनहरण ।

इन्द्र निज हेरत फिरत गज-इन्द्र अरु इन्द्र को अनुज[1] हेरै दुगधनदीस को ।'भूषन' भनत सुरसरिता को हंस हेरै बिधि हेरै हंस को चकोर रजनीस को ॥ साहि तनै सिवराज करनी करी है तैं जु होत है अचम्भो देव कोटियो तैंतीस को । पावत न हेरे तेरे जस मैं हिराने निज गिरि को गिरीस हेरैं गिरजा गिरीस को ॥ ३०१ ॥

उन्मीलित ।

लक्षण दोहा ।

सदस वस्तु मैं मिलत पुनि जानत कौनेहु हेत ।
उनमीलित तासों कहत भूषन सुकवि सचेत ॥ ३०२ ॥

---

[१] इन्द्र का छोटा भाई अर्थात् वरुण जो जल के देवता हैं ।

उदाहरण दोहा

सिव सरजा तव सुजस मैं मिले धौल छबि तूल।
बोल बास ते जानिए हंस चमेली फूल ॥ ३०३ ॥

सामान्य।

लक्षण दोहा।

भिन्न रूप जहँ सदस ते भेद न जान्यो जाय।
ताहि कहत सामान्य हैं भूषन कवि समुदाय ॥ ३०४ ॥

उदाहरण। मालती सवैया।

पावस की यक राति भली सु महाबली सिंह सिवा गमके ते। म्लेच्छ हजारन ही कटि गे दस ही मरहट्टन के झमके ते ॥'भूषन'हालि उठे गढ़ भूमि पठान कबंधन के धमके ते। मीरन के अवसान गये मिलि धोपनि सों चपला चमके ते ॥ ३०५ ॥

बिशेषक।

लक्षण-दोहा।

भिन्न रूप सादृश्य मैं लहिए कछू बिसेख।
ताहि बिशेषक कहत हैं भूषन सुमति उलेख ॥ ३०६ ॥

---

(१) तलवार। यथा "छत्रसाल जेहि दिसि पिलै काढ़ि धोप कर माहिं। तेहि दिसि सीस गिरीस पै बनत बटोरत नाहिं"॥ (छत्रप्रकाश) यहाँ शाइस्ता खाँ वाली लड़ाई का इशारा भूषण जी ने किया है।

उदाहरण । कबित्त मनहरण ।

अहमदनगर[1] के थान किरवान लै कै नवसेरी खानैं[2] ते खुमान भिन्यो बल ते । प्यादन सों प्यादे पखरैतन सों पखरैत बखतर वारे बखतरवारे हल ते ।। 'भूषन' भनत एते मान घमसान भयो जान्यो न परत कौन आयो कौन दल ते । सम बेष ताके, तहाँ सरजा सिवा के बाँके बीर जाने हाँके देत, मीर जाने चलते ।। ३०७ ।।

पिहित ।

लक्षण-दोहा ।

परके मन की जानि गति ताको देत जनाय ।
कछू क्रिया करि, कहत हैं पिहित ताहि कबिराय ।।३०८ ।।

उदाहरण-दोहा ।

गैर मिसिल ठाढ़ो सिवा अन्तरजामी नाम ।
प्रकट करी रिस, साह को सरजा करि न सलाम ।।३०९।।
आनि[3] मिल्यो अरि, यों गह्यो चखन चकत्ता चाव ।
साहि तनै सरजा सिवा दियो मुच्छ पर ताव ।।३१०।।

---

(१) निजामशाही "बादशाहों" की राजधानी । यहाँ पर शिवाजी ने नौशेरी खां को लूटा था ।

(२) नौशेरी खां को खानदौराँ की उपाधि थी (छ० नं० १०३ का नोट देखिए)

(३) बीर रस अपूर्ण ।

प्रश्नोत्तर ।

लक्षण—दोहा ।

कोऊ बूझै बात कछु कोऊ उत्तर देत ।
प्रश्नोत्तर ताको कहत भूषन सुकवि सचेत ॥ ३११ ॥

उदाहरण । मालती सवैया ।

लोगन सों भनि 'भूषन' यों कहै खान खवास कहा सिख दैहौ । आवत देसन लेत सिवा सरजै मिलिहौ भिरिहौ कि भगैहौ ॥ एदिल की सभा बोलि उठी यों सलाह करौ[१] ब कहाँ भजि जैहौ । लीन्हो कहा लरिकै अफजल्ल कहा लरिकै तुमहू अब लैहौ ? ॥ ३१२ ॥

पुनः । दोहा ।

को दाता को रन चढ़ो को जग पालनहार ? ।
कबि भूषन उत्तर दियो सिव नृप हरि अवतार ॥ ३१३ ॥

व्याजोक्ति ।

लक्षण । दोहा

आन हेतु सों आपनो जहाँ छिपावै रूप ।
व्याजउकुति तासों कहत भूषन सुकबि अनूप ॥ ३१४ ॥

उदाहरण । मालती सवैया ।

साहिन के उमराव जितेक सिवा सरजा सब लूटि लए हैं ।'भूषन'ते बिन दौलति ह्वै कै फकीर ह्वै देस बिदेस गए

(१) छं० नं० २०६ का नोट देखिए ।

हैं ॥ लोग कहैं इमि दच्छिन जेय[1] सिसौदिया रावरे हाल ठए हैं ? । देत रिसाय कै उत्तर यों हमही दुनियां ते उदास भए हैं[2] ॥ ३१५ ॥

पुनः। दोहा।

सिवा बैर औरंग बदन लगी रहै नित आहि।
कबि भूषन बूझे सदा कहै देत दुख साहि[3] ॥ ३१६ ॥

लोकोक्ति एवं छेकोक्ति।

लक्षण। दोहा।

कहनावति जो लोक की लोक उकुति सो जानि।
जहां कहत उपमान ह्वै छेक उकुति तेहि मानि ॥ ३१७ ॥

उदाहरण।

लोकोक्ति यथा। दोहा।

सिव सरजा की सुधि करौ भली न कीन्ही पीव।
सूबा ह्वै दच्छिन चले धरे जात कित जीव ? ॥ ३१८ ॥

छेकोक्ति। यथा। दोहा।

जे सोहात सिवराज को ते कबित्त रसमूल।

---

(१) दक्षिण का जीतने वाला सिसौदिया अर्थात् शिवाजी।

(२) इन दो पदो का पाठांतर यों है—"ईजति राखि सकैं अपनी इमि स्यानपनो करि त्योर ठए हैं। भेटत ही सब ही सों कहैं हम या दुनियां ते उदास भए है।"

(३) शाही; राज्यभार।

जे परमेस्वर पै चढ़ैं तेई आछे फूल ॥ ३१९।

पुनः। किरीटी सवैया [1]।

औरँग जो चढ़ि दक्खिन आवै तो ह्यांते सिधावैं सोऊ बिनु कप्पर। दीनो मुहीम को भार बहादुर [2] छागो [3] सहै क्यों गयन्द को झप्पर? ॥ सासता खां सँग वे हठि हारे जे साहब सातएं ठीक भुवप्पर। ये अब सूबहु आवैं सिवा पर "कालिह के जोगी कलींदे [4] को खप्पर" ॥ ३२० ॥

बक्रोक्ति।

लक्षण। दोहा।

जहां श्लेष सों काकु सों अरथ लगावै और।
बक्र उकुति ताको कहत भूषन कबि सिरमौर ॥ ३२१ ॥

---

(१) इस सवैया में "बसुभा" अर्थात् आठ भगण होते हैं। एक गुरु फिर दो लघु अक्षर=भगण।

(२) कदाचित यह खानबहादुर=खाजहा बदादुर के विषय हो—इसका हाल छन्द नं० ९६ में बहलोल वाले नोट में देखिये।

(३) बकरा, छगरा।

(४) तरबूजा। "नई नाइन बांस का नहना" की तरह यह भी एक कहावत है।

(५) वह प्रश्न जिससे उत्तर व्यंजित होजाय यथा "क्या मजाल!"

उदाहरण।

श्लेषसे बक्रोक्ति। कबित्त मनहरन।

साहि तनै तेरे बैर बैरिन को कौतुक सों बूझत फिरत कहौ काहे रहे तचि हौ?। सरजा के डर हम आए इतै भाजि तब सिंह सों डराय याहू ठौर ते उकाचि[1] हौ॥ 'भूषन' भनत वै कहैं कि हम सिव कहैं तुम चतुराई सों कहत बात रचि हौ। सिव जापै रूठैं तौ निपट कठिनाई तुम बैर त्रिपुरारि के त्रिलोक मैं न बचिहौ॥ ३२२॥

काकु से बक्रोक्ति। कबित्त मनहरण।

सासँता[2] खां दक्खिन को प्रथम पठायो तेहि बेटा के समेत हाथ जाय कै गंवायो है। 'भूषन' भनत जौ लौं भेजौ उत औरै तिन बे ही काज बरजोर कटक कटायो है॥ जोई सूबेदार जात सिवाजी सो हारि तासों अवरंग साहि इमि कहै मन भायो है। मुलुक लुटायो तौ लुटायो, कहा भयो? तन आपनो बचायो महा काज करि आयो है॥ ३२३॥

पुनः। दोहा।

करि मुहीम आये कहत हजरत मनसब दैन।
सिव सरजा सों जंग जुरि ऐहैं बचिकै है न॥ ३२४॥

---

(१) उचकोगे; उठ भागोगे।

(२) छन्द नं० ३५ का नोट देखिए।

स्वभावोक्ति ।

लक्षण । दोहा ।

सांचो तैसो बरनिए जैसो जाति स्वभाव ।
ताहि सुभावोकति कहत भूषन जे कबिराव ॥ ३२५ ॥

उदाहरण । मनहरण दंडक ।

दान समै द्विज देखि मेरुहू कुबेरहू की सम्पति लुटायबे को हियो ललकत है । साहि के सपूत सिव साहि के बदन पर सिव की कथान मैं सनेह झलकत है ॥'भूषन'जहान हिन्दुवान के उबारिबे को तुरकान मारिबे को बीर बलकत है । साहिन सों लरिबे की चरचा चलत आनि सरजा के दृगन उछाह छलकत है ॥ ३२६ ॥[1]

काहू के कहे सुने ते जाही ओर चाहैं ताही ओर इकटक घरी चारिक चहत[3] हैं । कहे ते कहत बात कहे ते पियत खात 'भूषन'भनत ऊँची साँसन जहत हैं ॥ पौढ़े हैं तौ पौढ़े बैठे बैठे खरे खरे हम को हैं कहा करत यों ज्ञान न गहत हैं । साहि के सपूत सिव साहि तव बैर इमि साहि सब रातौ दिन सोचत रहत हैं ॥ ३२७ ॥[2]

---

(१) इस कवित्त में दान, दया, तथा युद्ध वीर सभी वरणित है और वीररस भी पूर्ण है ।

(२) भयानक रस ।   (३) देखते हैं ।

उमड़ि कुड़ाल[1] मैं खवास खान आए भनि 'भूषन' त्यों धाए सिवराज पूरे मन के। सुनि मरदाने बाजे हय हिहनाने घोर मूछैं तरराने मुख बीर धीर जन के॥ एकै कहैं मार मार सम्हरि समर एकै म्लेच्छ गिरे मार बीच बेसम्हार तन के। कुंडन[2] के ऊपर कड़ाके उठैं ठौर ठौर जीरन[3] के ऊपर खड़ाके खड्गन के॥ ३२८॥

आगे आगे तरुन तरायले चलत चले तिनके अमोद[4] मन्द मन्द मोद सकसै। अड़दार बड़े गड़दारन[5] के हाँके सुनि अड़े गैर[6] गैर माहिं रोस रस अकसै॥ तुंडनाय सुनि गरजत गुंजरत भौंर 'भूषन' भनत तेऊ महा मद छकसै। कीरति के काज महराज सिवराज सब ऐसे गजराज कबि-राजन को बकसै॥ ३२९॥

---

(१) इसका पता इतिहास में नहीं चलता। इस नाम के किसी छोटे स्थान पर शिवाजी से खवास खां (छ० २०६ नोट) की फौज़ से कोई लड़ाई हुई होगी।

(२) लोहे का टोप।

(३) ज़िरह बख्तर।

(४) खेल कूद।

(५) ३१-३४ का नोट देखिए।

(६) गैल गैल; राह राह।

भाविक ।

लक्षण । दोहा ।

भयो, होन हारो, अरथ बरनत जहँ परतच्छ ।
ताको भाविक कहत हैं भूषन कबि मतिस्वच्छ ॥ ३३० ॥

उदाहरण । कबित्त मनहरण ।

अजौं भूतनाथ मुण्डमाल लेत हरषत भूतन अहार लेत अजहूँ उछाह है । 'भूषन' भनत अजौं काटे करबालन के कारे कुंजरन परी कठिन कराह है ॥ सिंह सिवराज सलेहेरि के समीप ऐसो कीन्हो कतलाम दिली दल को सिपाह है । नदी रन मंडल रुहेलन रुधिर अजौं अजौं रबिमंडल रुहेलन की राह है ॥ ३३१ ॥

गजघटा उमड़ी महा घनघटा सी घोर भूतल सकल मदजल सौं पटत है । बेला छाँड़ि उछलत सातौ सिंधु बारि. मन मुदित महेस मग नाचत कढ़त है ।'भूषन' बढ़त भौंसिला भुवाल को यों तेज जेतो सब बारहौ तरनि मैं बढ़त है । सिवाजी खुमान दल दौरत जहान पर आनि तुरकान पर प्रलै प्रगटत है ॥ ३३२ ॥

भाविक छबि ।

लक्षण । दोहा ।

जहँ दूरिस्थित बस्तु को देखत बरनत कोय ।

---

(१) छं• ९७ का नोट देखिए ।

भूषन भूषन राज भनि भाविक छबि सो होय ॥ ३३३ ॥

उदाहरण । मालती सवैया ।

सूबन साजि पठावत है नित फौज लखे मरहट्टन केरी ।
औरँग आपनि दुग्ग जमाति बिलोकत तेरियै फौज दरेरी ॥
साहि तनै [illegible] भई भनि 'भूषन' यों तुव धाक घनेरी ।
रातहु द्योस दिला[illegible] [illegible]तुव सैनिक सूरति[1] सूरति[2] घेरी ॥ ३३४ ॥

उदात्त ।

लक्षण । दोहा ।

अति सम्पति बरनन जहां तासों कहत उदात ।
कै आनै सु लखाइए बड़ी आन की बात ॥ ३३५ ॥

उदाहरण । कबित्त मनहरण ।

द्वारन मतंग दीसैं आंगन तुरंग हीसैं बन्दीजन बारनै[3] असीसैं जसरत हैं । 'भूषन' बखानै जरबाफ के सम्याने ताने झालरन मोतिन के झुंड झलरत हैं ॥ महाराज सिवा के नेवाजे कबिराज ऐसे साजि कै समाज तेहि ठौर बिहरत हैं । लाल करैं प्रात तहां नीलमनि करैं रात याही भांति सरजा की चरचा करत हैं ॥ ३३६ ॥

जाहु जनि आगे खता खाहु मति यारो गढ़ नाह के

---

(१) शकल ।

(२) छं० २०० का नोट, सूरत नाम का दक्षिण मे प्रसिद्ध शहर ।

(३) दरवाजों पर अथवा बार बार ।

डरन कहैं खान यों बखान कै । 'भूषन'खुमान यह सो है जेहि पूना माहिं लाखन मैं सासतां[1] खाँ डारयो बिन मान कै ॥ हिन्दुवान द्रुपदी की ईंजति बचैबे काज झपटि बिराट पुर बाहर प्रमान कै। वहै है सिवा जी जेहि भीम है अकेले मार्‌यो अफजल कीचक[2] को कीच घमसान कै ॥३३७॥

पुन । दोहा ।

या पूना मैं मति टिकौ खानै[3] बहादुर आय ।
ह्यांई साइस खान को दीन्हीं सिवा सजाय ॥ ३३८ ॥

अत्युक्ति ।

लक्षण । दोहा ।

जहां सूरतादिकन की अति अधिकाई होय ।
ताहि कहत अति उक्ति हैं भूषन जे कविलोय ॥ ३३९ ॥

---

(१) शाइस्ता खा । छं० ३५ का नोट देखिये ।

(२) राजा विराट का साला जिसने द्रौपदी का सतीत्व भग करना चाहा था । इसे भीमसेन ने मार डाला था । (महाभारत, विराट पर्व्व ।)

(३) खान बहादुर नाम का कोई व्यक्ति इतिहास मे नहीं मिलता । अवश्य ही भूषन जी ने खान जहां बहादुर को इस नाम से लिखा है जिसे औरंगजेब ने १६७२ मे दक्षिण का गवर्नर नियत किया था । इस का हाल छं० न० ९६ मे बहलोल वाले नोट मे देखिये ।

उदाहरण । मनहरण दंडक ।

साहि तनै सिवराज ऐसे देत गजराज जिन्हैं पाय होत कबिराज बे-फिकिरि हैं । झूलत झलमलात झूलैं जर-बाफन की जकरे जंजीर जोर करत किरिरि हैं ॥ 'भूषन' भँवर भननात घननात घंट पग झननात मनो घन रहे घिरि हैं । जिनकी गरज सुने दिग्गज बे-आब होत मद ही के आब गड़काब होत गिरि हैं ॥ ३४० ॥

आजु यहि समै महाराज सिवराज तुही जगदेव[1] जनक जजाति अम्बरीक सो ।'भूषन'भनत तेरे दान-जल जलधि मैं गुनिन को दारिद गयो बहि खरीक[2] सो ॥ चन्द कर किंजलक[3] चाँदनी पराग उड़-बृन्द मकरन्द बुन्द पुंज के सरीक सो । कुन्द[4] सम कयलास नाक-गंग नाल तेरे जस-पुंडरीक को अकास चंचरीक सो ॥ ३४१ ॥

पुनः । दोहा ।

महाराज सिवराज के जेते सहज सुभाय।
औरन को अति उक्ति से भूषन कहत बनाय ॥ ३४२ ॥

---

[१] पंवारो का बड़ा विदित और तेजस्वी राजा ।

[२] खरिका; दात खोदने की सींक ।

[३] कमल–फल के चारों ओर जो पीली व सफ़ेद सींकैं सी होती हैं ।

[४] कुन्द का छोटा सा सफ़ेद फूल ।

निरुक्ति ।

लक्षण—दोहा ।

नामन को निज बुद्धि सों कहिए अरथ बनाय ।
ताको कहत निरुक्ति हैं भूषन जे कविराय ॥ ३४३ ॥

उदाहरण—दोहा ।

कवि गन को दारिद द्विरद याही दल्यो अमान ।
याते श्री सिवराज को सरजा कहत जहान ॥ ३४४ ॥
हर्यो रूप इन मदन को याते भो सिव नाम ।
लियो विरद सरजा सबल अरि गज दलि संग्राम ॥ ३४५ ॥

पुनः । कबित्त मनहरण ।

आजु सिवराज महराज एक तुही सरनागत जनन को दिवैया अभै दान को। फैली महि मंडल बड़ाई चहुँ ओर ताते कहिए कहां लौं ऐसे बड़े परिमान को ? ॥ निपट गँभीर कोऊ लाँघि न सकत बीर जोधन को रन देत जैसे भाऊ[1] खान को। दिल दरियाव क्यों न कहैं कविराव तोहिं तो मैं बाहिरात आनि पानिप जहान को ॥ ३४६ ॥

---

[1] भाऊसिंह के विषय में छन्द नम्बर ३५ का नोट देखिए। इन्हे "भाऊखान" वैसेही कहा गया है जैसे अम्बर (जयपुर) के महाराजा जयसिंह "मिर्ज़ा" कहाते थे । वास्तव में भाऊ खां नामक कोई मुसलमान सरदार न था ।

हेतु ।

लक्षण—दोहा ।

"या निमित्त यहई भयो" यों जहँ बरनन होय ।
भूषन हेतु बखानहीं कबि कोबिद सब कोय ॥ ३४७ ॥

उदाहरण । मनहरण दण्डक ।

दारुन दइत हरनाकुस बिदारिबे को भयो नरसिंह रूप तेज बिकरार है ।'भूषन'भनत त्योंही रावन के मारिबे को रामचन्द्र भयो रघुकुल सरदार है । कंस के कुटिल बल बंसन बिधुंसिबे को भयो यदुराय बसुदेव को कुमार है । पृथी पुरहूत साहि के सपूत सिवराज म्लेच्छन के मारिबे को तेरो अवतार है ॥ ३४८ ॥

अनुमान ।

लक्षण । दोहा ।

जहां काज ते हेतु कै जहां हेतु ते काज ।
जानि परत, अनुमान तहँ कहि भूषन कबिराज ॥ ३४९ ॥

उदाहरण । मनहरन दंडक ।

चित्त अनचैन आँसू उमगत नैन देखि बीबी कहैं बैन मियां कहियत काहि नै ? ।'भूषन' भनत बूझे आए दरबार ते कँपत बार बार क्यों सम्हार तन नाहिंनै ? सीनो धक-धकत पसीनो आयो देह सब हीनो भयो रूप न चितौत

बाएँ दाहिनै। सिवाजी की संक मानि गए हौ सुखाय तुम्हैं जानियत दक्खिन को सूबा करो साहि नै ॥ ३५० ॥

अंझा[1] सी दिन की भई संझा सी सकल दिसि गगन लगन रही गरद छवाय है। चील्ह गीध बायस समूह घोर रोर करैं ठौर ठौर चारों ओर तम मड़राय है ॥ 'भूषन' अँदेस देस देस के नरेस गन आपुस मैं कहत यों गरब गँवाय है। बड़ो बड़वा को जितवार चहुँघा को दल सरजा सिवा को जानियत इत आयहै ॥ ३५१ ॥

अथ शब्दालंकार।

दोहा।

जे अरथालंकार ते भूषन कहे उदार।
अब शब्दालंकार ये कहत सुमति अनुसार ॥ ३५२ ॥

छेक एवं लाट अनुप्रास।

लक्षण—दोहा।

स्वर समेत अच्छर पदनि आवत सदस प्रकास।
भिन्न अभिन्नन पदन सों छेक लाट अनुप्रास ॥ ३५३ ॥

उदाहरण। अमृतध्वनि छन्द[2]

दिल्लिय दलन दबाय करि सिव सरजा निरसंक। लूटि

---

१ नागा अर्थात् दिन गायब सा हो गया।

२ इसमें छः पद होते हैं जिनमें प्रथम दो मिलकर एक दोहा होते है, और चार अंतिम पदों में काव्य छन्द होता है। अन्त के

लियो सूरति सहर बंकक्करि अति डंक ॥ बंकक्करि अति डंकक्करि अस संकक्कुलि खल। सोचच्चकित भरोच्चलिय बिमोच्चखजल ॥ तट्ठट्ठइमनं कट्ठट्ठिकं सोइ रट्ठट्ठिल्लियं। सद्दिसि दिसि भद्दबिभई रद्दिल्लियं ॥ ३५४ ॥

चारो पदोमें आठ आठ कलाओं के पीछे यति होती है। हमने जिन आचार्यों के दिए हुए लक्षण देखे उन्होंने यह नहीं लिखा है कि इस छन्द के पदो का अतिम अक्षर अवश्य लघु होता है, पर यह बात सदा पाई जाती है। भूषण जी इसमे कुडलिया की भांति प्रथम के एक या दो शब्द अतमे भी अवश्य लाते है, यद्यपि यह आवश्यक नही है। अन्य कवियो की अमृतध्वनियों में थोड़े बहुत शब्द अथवा अक्षर-समूह निरर्थक आजाते हैं, पर भूषण जी इस दोष से खूब ही बचे है। इसका नाम जैसा ही अच्छा है वैसा ही यह पढ़ने में बड़ा टेढ़ा छन्द है। इसका नाम तो "विषध्वनि" होता तो ठीक था।

१ डंका बक करके।

२ इस तरह खलो को सशक करके।

३ भरोंच शहर भागा।

४ वही बात मन मे ठानकर।

५ कठिन [पूरे] तौर से ठीक करके।

६ रटकर अर्थात् बार २ कहकर ठेल दिया।

७ भली भॉति सब दिशाओं मे।

८ भद होकर और दब कर।

९ दिल्ली रद्द हो गई।

गत बल खानदलेल[1] हुव खान बहादुर मुद्ध।
सिव सरजा सलहेरि[2] ढिग क्रुद्धद्धरि[3] किय युद्ध॥
क्रुद्धद्धरि किय युद्धद्धुव[4] अरि अद्धद्धरि[5] धरि।
मुंडड्डरि[6] तहँ रुंडड्डकरतँ[7] डुंडड्डर्ग[8] भरि॥

---

१ दिलेर खां के विषय में छं० नं. २१२ के नोट में मिर्ज़ा जयसिंह वाला नोट देखिये। शिवाजी की हार के बाद दिलेर खां (दलेल खा) दक्षिण और मालवा का सूबेदार रहा। सन १६७२ में दिलेर खा ने चाकन और सलहेरि को साथ २ घेरा और सलहेरि में उसकी फौज की शिवाजी ने खूब ही खबर ली। छं नं० ९७ का नोट देखिए। १६६७ मे दिलेर खा ने गोलकुण्डा पर धावा किया था पर मधुनापंत से उसे हारना पड़ा। १६७९ मे सम्भाजी अपने पिता (शिवाजी) से नाराज होकर दिलेर खा के यहा भग गया और उसने बाप बेटो को लड़ाना चाहा पर औरंगज़ेब ने उसे (सम्भाजी को) दिल्ली भेज देने को लिखा। इतने बीच में दिलेर खा शिवाजी के सेनापति जनार्दन पंत से युद्ध मे हारा और सम्भाजी को दिल्ली में भेज कर उसने जान बूझ कर भाग जाने दिया। दिलेर खां १६८४ में मरा।

२ छं० ९७ का नोट देखिए।

३ क्रोध धर कर।

४ ध्रुव (निश्चय) युद्ध किया।

५ आधे २ करके; काट कर।

६ मुंड डाल कर।

७ रुंड डकार रहे हैं।

८ डुंड (हाथ कटे हुए कबंध) डग भरते (दौड़ते) हैं।

खेदिद्दर[1] वर छेदिद्दय[2] करि मेदद्दधि[3] दल।
जंगग्गति[4] सुनि रंगग्गलि[5] अवरंगग्गत[6] बल॥ ३५५॥
लिय धरि मोहकम[7] सिंह कहँ अरु किसोर नृपकुर्म्म[8]।
श्री सरजा संग्राम किय भुम्मिम्मधि[9] करि धुम्म॥ भुम्मिम्माधि
किय धुम्मम्मंड़ि[10] रिपु जुम्मम्मलिकरि[11]। जंगग्गरजि[12] उतंगग्गरब[13]

---

१ दर (स्थानों; मोरचों) से खेद कर।

२ छेद डाला।

३ फौज की मेद (चर्बी) को दही ऐसी फेंट डाली।

४ जंग का हाल।

५ रंग गल गया।

६ बल जाता रहा।

७ छं० २३९ का नोट देखिए।

८ नृप कुमार किशोर सिंह, कोटा नरेश महाराज माधव सिंह के पुत्र थे। दक्षिण में ये मुगलों की ओर से लड़ने गये थे वहीं शिवाजी से भी इनसे लड़ाई हुई होगी। सन् १६८८ ई० तक ये दक्षिण में लड़े थे।

९ भूमि में।

१० धूम माड़कर।

११ जुम्मा (मुँह) मल कर।

१२ जंग में गर्ज कर।

१३ बड़े गर्व वाले।

मतंगग्गनं हरि ॥ लक्खक्खनं रन दक्खक्खलनि अल-ग्ग क्खिति भरि । मोलल्लहि जस नोलल्लरि बहलोलल्लिय धरि ॥ २५६ ॥

लिय जिति दिल्ली मुलुक सब सिव सरजा जुरि जंग ।
भनि 'भूषन' भूपति भजे भंगग्गरब तिलंग ॥
भंगग्गरब तिलंगग्गयउ कलिंगग्गलि अति ।
दुन्दद्दबि दुहु दन्दद्दलनि बिलन्दद्दहसति ॥

---

१ हाथियों के समूह ।

२, ३, ४ लाखन दक्ष खलन से क्षण (भर के) रण (में) अलक्षित क्षिति भर दी ।

५ मोल लेकर ।

६ नवल (नए तरह से) लड़ कर ।

७ बहलोल (छं० ९६ का नोट) को पकड़ लिया । बहलोल पकड़ा नहीं गया था, बरन् घेर लिया गया था । मरहटा सरदारों ने इसे शिवाजी के वास्ते कुछ दण्ड लेकर जाने दिया था । भूषण जी कैद होना यों भी कह दिया करते थे यथा " बन्दि सहस्त खँ हूं को कियो जसवन्त से भाऊ करन्न से दोषै " परन्तु शाइस्ता खा को शिवाजी ने कभी कैद नहीं कर पाया था [देखिये शि० भू० छन्द नं० ७७]

८ युद्ध में दब कर दोनो दलों (तिलंग और कलिंग) को दंद (दुःख) हुआ ।

९ बड़ा डर हुआ ।

लच्छच्छिन करि म्लेच्छच्छय[1] किय रच्छच्छबि[2] छिति।
हल्लग्गि[3] नरपल्लरि परनल्लिय[4] जिति ॥२५७॥

पुनः छप्पय।

मुंड कटत कहुँ रुंड नटत कहुँ सुंड पटत घन। गिद्ध लसंत कहुँ सिद्ध हँसत सुख वृद्धि रसत मन॥ भूत फिरत करि बूत भिरत सुर दूत घिरत तहँ। चंडि नचत गन मंडि रचत धुनि डण्डि[5] मचत जहँ॥ इमि ठानि घोर घमसान अति 'भूषन' तेज कियो अटल। सिवराज साहि सुव खग्ग बल दलि अडोल बहलोल दल॥ २५८॥

क्रुद्ध फिरत अति युद्ध जुरत नहिं रुद्ध मुरत भट। खग्ग बजत अरि बग्ग[6] तजत सिर पग्ग सजत चट॥ ढुक्कि फिरत मद झुक्कि भिरत करि कुक्कि गिरत गनि। रंक रकत हर संग[7] छकत चतुरंग थकत भनि। इमि करि संगर अति ही

---

१ क्षण भर में लाखो म्लेच्छों का क्षय करके।

२ भूमि (भारत भूमि) की छवि की रक्षा की।

३ हल्ला (धावा) कर (४) परनाले (छं० १०७ का नोट) को जीत लिया।

५ दुन्द; युद्ध।

६ घोड़े की बाग।

७ साथी गण [यहा पर हर के साथी अर्थात् भूत प्रेत]

गाजी खग्ग सों खपाए खल, खाने खाने खलन के खेरे भये[1] खीस हैं । खड़गी[2] खजाने खरगोस खिलवत[3]खाने खीसैं खोले खसखाने खांसत खबीस हैं ॥ ३६१ ॥

अन्यच्च—दोहा ।

औरन के जाँचे कहा नहिं जाँच्यो सिवराज ? ।
औरन के जाँचे कहा जो जाँच्यो सिवराज ? ॥३६२॥

यमक अनुप्रास ।

लक्षण-दोहा ।

भिन्न अरथ फिरि फिरि जहाँ ओई अच्छर वृन्द ।
आवत हैं, सो जमक करि बरनत बुद्धि बिलन्द ॥ ३६३ ॥

उदाहरण । कबित्त मनहरण ।

पूनाँ[4]वारी सुनि कै अमीरन की गति लई भागिबे को मीरन समीरन की गति है । मार्‍यो जुरि जंग जसवन्त[5] जसवन्त[6] जाके संग केते रजपूत[7] रज[8] पूत पति है ॥ 'भूषन' भनै

---

(१) खलों का एक एक घर नष्ट हो गया ।
(२) गैंड़ा ।
(३) एकान्त का कमरा ।
(४) शाइस्ता खां का इशारा है ।
(५) जसवन्त सिंह [छं० नं० ३५ का नोट]
(६) यशवाला; यशी ।
(७) राजपूत ।
(८) राजश्री युक्त ।

यों कुलभूषन भुसिल सिवराज ! तोहि दीन्ही सिव राज-बरकति है। नौहू खंड दीप[1] भूप भूतल के दीप[2] आजु समै के दिलीप[3] दिलीपति को सिदंति[4] है॥ ३६४॥

पुनिरुक्तिवदाभास।

लक्षण। दोहा।

भासति है पुनरुक्ति सी नहिं निदान पुनरुक्ति।
वदाभास-पुनरुक्ति सो भूषन बरनत युक्ति॥ ३६५॥

उदाहरण। कबित्त मनहरण।

अरिन के दल सैन[5] संगर मैं समुहाने टूक टूक सकल कै डारे घमसान मैं। बार बार रूरो महानद परबाह पूरो बहत हैं हाथिन के मद ज़ल दान मैं॥ 'भूषन' भनत महा बाहु भौंसिला भुवाल सूर[6], रबि कैसो तेज तीखन कृपान मैं। माल मकरन्द जू के नन्द कला निधि तेरो सरजा सिवाजी जस जगत[7] जहान मैं॥ ३६६॥

---

(१) द्वीप सात हैं।
(२) चिराग़।
(३) रघु के पिता राजा दिलीप।
(४) सीदाति, कष्ट देती है।
(५) शयन (में) संग रमैं अर्थात् साथही साथ मरे पड़े हैं।
(६) बीर।
(७) जागता है।

चित्र ।

लक्षण—दोहा ।

लिखे सुने अचरज बढ़ै रचना होय बिचित्र ।
कामधेनु आदिक घने भूषन बरनत चित्र ॥ २६७ ॥

उदाहरण (कामधेनु चित्र) माधवी[1] सवैया ।

धुव जो	गुरता	तिनको	गुरु भूषन	दानि बडो	बिरजा	पिव है ।
हुव जो	हरता	रिन[2]को	तरु[3] भूषन	दानि बडो	सिरजौं[4]	छिव[5]है ॥
भुव जो	भरता	दिन[6]को	नरु भूषन	दानि बड़ो	सरजा	सिव है ।
तुव जो	करता	इनको	अरु भूषन	दानि बडो	बरजौं[7]	निवहै ॥२६८

(१) इस सवैया में " बसुसा " अर्थात् आठ सगण होते है। सगण के तीन अक्षरों में प्रथम दो लघु और अन्तिम गुरु होता है । देवजी एक दूसरे प्रकार की सवैया को माधवी कहते हैं और आठ सगण वाली सवैया का वरणन नहीं करते । कविराज श्री सुखदेव मिश्र उस सवैया को " बाम " कहते हैं और इस " बसुसा " वाली का नाम उन्होंने माधवी लिखा है । भूषण जी का यह कामधेनु चित्र-वाला छन्द बिलकुल अच्छा नहीं । उसमें ७×४=२८ छन्द अवश्य बनते हैं । पर ऐसे छन्द अच्छे हो भी नहीं सकते हैं ।

(२) (औरों के) क़र्ज़ को ।
(३) कल्प बृक्ष ।
(४) रचा हुआ पैदायशी ।
(५) छीव; उन्मत्त ।
(६) वर्तमान समय का ।
(७) बर जानिब है; बड़ा जानकार (ज्ञाता) है ।

संकर ।

लक्षण-दोहा ।

भूषन एक कबित्त मैं भूषन[1] होत अनेक ।
संकर ताको कहत हैं जिन्हैं कबित्त की टेक ॥३६९॥

उदाहरण । मनहरण दण्डक ।

ऐसे बाजिराज देत महाराज सिवराज 'भूषन' जे बाज की समाजैं निदरत[2] हैं । पौन[3] पाय हीन, दृग घूंघट मैं लीन, मीन जल मैं बिलीन, क्यों बराबरी करत हैं ? ॥ सबते[4] चलाक चित तेऊ कुलि आलम के रहैं उर अन्तर मैं धीर न धरत हैं । जिनै[5] चढ़ि आगे को चलाइयतु तीर, तीर[6] एक भरि तऊ तीर पीछे ही परत हैं ॥ ३७० ॥

ग्रन्थालंकार नामावली । गीतिका छन्द[7] ।

उपमा अनन्वै कहि बहुरि उपमा[8] प्रतीप प्रतीप । उप-

---

(१) अलकार ।

(२) अनुप्रास ललितोपमा एव प्रतीप अलंकार ।

(३) अनुप्रास एवं अधिक तद्रूप रूपक ।

(४) अनुप्रास एवं प्रतीप ।

(५) यमक एवं अत्युक्ति ।

(६) जितनी दूर पर जाकर तीर गिर पड़े ।

(७) यह छब्बीस कला का छन्द होता है । इसके प्रत्येक पद के अन्त में लघु अक्षर होता है ।

(८) उपमेयोपमा ।

मेय-उपमा है बहुरि मालोपमा कबि दीप ॥ ललितोपमा रूपक बहुरि परिनाम पुनि उल्लेख । सुमिरन भ्रमौ संदेह सुद्धापन्हुत्यौ सुभ बेख ॥ ३७१ ॥

हेतूअपन्हुत्यौ बहुरि परजस्तपन्हुति जान । सुभ्रांत पूर्ण अपन्हुत्यौ छेकाअपन्हुति मान ॥ बर कैतवापन्हुति गनौ उतप्रेक्षा बहुरि बखानि । पुनि रूपकातिसयोक्ति भेदक अतिसयोक्ति सुजानि ॥ ३७२ ॥

अरु अक्रमातिसयोक्ति चंचल अतिसयोक्तिहि लेखि । अत्यंतअतिसैउक्ति पुनि सामान्य चारु बिसेखि ॥ तुलि-योगिता दीपक अवृति प्रतिबस्तुपम दृष्टान्त । सु निदर्सना व्यतिरेक और सहोक्ति बरनत शान्त ॥३७३॥

सु बिनोक्ति भूषन समासोक्तिहु परिकरौ अरु बंस । परिकर सु अंकुर श्लेष त्यों अप्रस्तुतौपरसंस ॥ परयायउक्ति गनाइए ब्याजस्तुतिहु आक्षेप । बहुरो विरोध बिरोधभास बिभावना सुख खेप ॥ ३७४ ॥

सु बिसेषउक्ति असम्भवौ बहुर असंगति लेखि । पुनि विषम सम सुबिचित्र प्रहषन अरु बिषादन पेखि ॥ कहि अधिक आन्योन्यहु विसेष व्यघात भूषन चारु । अरु गुम्फ एकावली मालादीपकहु पुनि सारु ॥ ३७५ ॥

पुनि यथासंख्य बखानिए परजाय अरु परिवृत्ति । परि-

---

(१) प्रहर्षण ।

संख्य कहत बिकल्प हैं जिनके सुमति सम्पत्ति ॥ बहुर्‍यो समाधि समुच्चयो पुनि प्रत्यनीक बखानि । पुनि कहत अर्था-पत्ति कबिजन काव्यलिंगहि जानि ॥ ३७६ ॥

अरु अर्थअन्तरन्यास भूषन प्रौढ़उक्ति गनाय । सम्भावना मिथ्याध्यवसितऽरु यों उलासहि गाय ॥ अवज्ञा अनुज्ञा लेस तदगुन पूर्वरूप उलेखि । अनुगुन अतदगुन मिलित उन्मी-लितहि पुनि अवरेख ॥ ३७७ ॥

सामान्य और बिशेष पिहितौ प्रश्नउत्तर जानि । पुनि ब्याजउक्ति रु लोकउक्ति सु छेकउक्ति बखानि ॥ बक्रोक्ति जान सुभावउक्तिहु भाविकौ निरधारि । भाविकछबिहु सु उदात्त कहि अत्युक्ति बहुरि बिचारि ॥ ३७८ ॥

बरने निरुक्तिहु हेतु पुनि अनुमान कहि अनुप्रास । भूषन भनत पुनि जमक गनि पुनरुक्तिवदआभास ॥ युत चित्र संकर एकसत भूषन कहे अरु पाँच[1] । लखि चारु ग्रंथन

---

(१) एक+सत+पांच=१०६ अलंकार । भूषण जी १०६ अलंकार वर्णन करना लिखते हैं, पर ग्रन्थ मे १०९ अलंकार पाए जाते हैं । लुप्तोपमा, न्यूनाधिक रूपक और गनगुप्तोत्प्रेक्षा के लक्षण और उदाहरण ग्रन्थ में दिए है (छन्द नं० ३६-३८, ६४-६६ और १०६-१०८ देखिए) और ये सब छन्द भूषणकृत अवश्य जान पड़ते है पर इनका नाम इस सूची में नहीं है । कदाचित भूषण जी ने इन्हें मुख्य अलंकारों में न माना हो ।

निज मतो[1] युत सुकबि मानहु साँच ॥ ३७९ ॥

दोहा।

सुभ सत्रहसै तीस पर बुध सुदि[2] तेरसि मान ।
भूषण सिव भूषन कियो पढ़ियो सुनौ सुजान ॥ ३८० ॥

उदाहरण—मनहरण दंडक ।

एकु प्रभुता को धाम, सजे तीनौ बेद काम, रहैं पंच आनन षड़ानन सरबदा । सातौ बार आठौ याम जाचक नेवाजै नव अवतार थिर राजै कृपन[3] हरि गदा ॥ सिवराज 'भूषन' अटल रहै तौलौं जौलौं त्रिदस भुवन सब, गंग औ नरमदा । साहि तनै साहसिक भौंसिला सुरज बंस दासरथि राज तौलौं सरजा थिर सदा ॥ ३८१ ॥

दोहा ।

पुहुमि पानि रबि ससि पवन जब लौं रहै प्रकास ।

---

(१) दूसरे आचार्य्यों के मत के अतिरिक्त इन्हों ने कुछ बातें अपने ही मत से लिखी है। जान पड़ता है इसी कारण कभी २ इनके लक्षण अन्य आचार्य्यों से भिन्न हो जाते हैं (जैसे छन्द नं० ६०, १४६, २५५ व २६७ इत्यादि देखिए) ।

(२) सम्बत् १७३० बुध सुदी १३ को ग्रन्थ समाप्त हुआ पर किस मास में सो नहीं लिखा । इसका ब्योरा भूमिका में देखिए ।

(३) कृपाण; तलवार ।

सिव सरजा तब लौं जियौ भूषन सुजस प्रकास ॥३८२॥

इति श्री कवि भूषण विरचिते शिवराजभूषणे
अलंकार बरणनं।

॥ समाप्तम् । सुभमस्तु ॥

॥ श्री शिवा बावनी[1] ॥

छप्पय[2]।

कौन करे बस वस्तु कौन यहि लोक बड़ो अति ? । को साहस को सिंधु कौन रज लाज धरे मति ? ॥ को चकवा को सुखद बसै को सकल सुमन महि ? । अष्ट सिद्धि नव निद्धि देत मांगे को सो कहि ? ॥ जग बूझत उत्तर देत इमि कबि 'भूषन' कबि कुल सचिव । दच्छिन नरेस, सरजा, सुभट साहिनन्द, मकरन्द[3], सिव ॥ १ ॥

---

(१) जैसा कि भूमिका में लिखा गया है यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं, बरन भूषण जी के ५२ छन्दों का एक संग्रह मात्र है। इसी हेतु प्रचलित प्रतियो का क्रम छोड़ कर हमने अपना नया क्रम स्थिर किया है, क्योकि हम उक्त प्रचलित क्रम को बहुत ही अनुपयुक्त समझते है।

(२) यह छन्द "स्फुट कविता" से लेकर उपयुक्त जान हमने यहाँ रख दिया है।

(३) माल मकरन्द।

कबित्त । मनहरण ।

साजि चतुरंग बीर रंग मैं तुरंग चढ़ि सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है। 'भूषन' भनत नाद बिहद नगारन के नदी नद मद गब्बरनै[1] के रलत है ॥ ऐलै[2] .फैल खैल-भैलै[3] खलक मैं गैल गैल गजन की ठेल पेल सैल उसलत है। तारा सो तरनि धूरि धारा मैं लगत, जिमि थारा पर पारा पारावार[4] यों हलत है ॥ २ ॥

बाने[5] फहराने घहराने घंटा गजन के नाहीं ठहराने राव राने देस देस के । नग भहराने ग्राम नगर पराने सुनि बाजत निसाने[6] सिवराज जू नरेस के[7] ॥ हाथिन के हौदा

---

(१) गर्ब्ब धारियो के ।
(२) अहिलै; बहुत विशेष ।
(३) खलभल ।
(४) समुद्र ।
(५) एक झंडीदार अस्त्र ।
(६) निशान का अर्थ झंडा है पर भूषण जी ने उसे डंका के आशय में लिखा है ।

(७) सरदार कबि ने इसके द्वितीय पद के अन्तिम भाग को यों लिखा है "सुनि बाजत निसाने भाउ सिंहजू नरेस के" और तीसरे पद का प्रथमार्द्ध यों "ककुभ के कुंजर कसमसाने गंग भनै" परन्तु शब्दों एवं वाक्य-रचना से यह भूषण कृत जँचता है, इसके अतिरिक्त गंगजी अकबर शाह के समय में थे पर भाऊसिंह सन् १६५८ ईसवी में बून्दी की गद्दी पर बैठे, सो यह कबित्त गंगकृत नहीं हो सकता ।

उकसाने कुम्भ कुंजर के भौन को भजाने अलि छूटे लट केस के। दल के दरारे हुते कमठ करारे फूटे केरा कैसे पात बिहराने फन सेस के ॥ ३ ॥

प्रेतिनी पिसाचऽरु निसाचर निसाचरिहु मिलि मिलि आपुस मैं गावत बधाई है। भैरौं भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से जुत्थ जुत्थ जोगिनी जमाति जुरि आई है॥ किलकि किलकि कै कुतूहल करति काली, डिम डिम डमरू दिगम्बर बजाई है। सिवा पूँछैं सिव सों समाज आजु कहाँ चली, का हू पै सिवा नरेस भृकुटी चढ़ाई है? ॥ ४ ॥

बद्दल न होहिं दल दच्छिन घमंड माहिं घटा हू न होहिं दल सिवाजी हँकारी के। दामिनी दमंक नाहिं खुले खग्ग बीरन के, बीर सिर छाप लखु तीजा[2] असवारी के॥ देखि देखि मुगलों की हरमैं भवन त्यागैं उझकि उझकि उठैं बहत बयारी के। दिल्ली मति भूली कहै बात घन घोर घोर बाजत नगारे जे सितारे गढ़ धारी के॥ ५ ॥

बाजि गजराज सिवराज सैन साजतहि दिल्ली दिलगीर दसा दीरघ दुखन की। तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगनियाँ न घामै घुमरात छोड़ि सेजियाँ सुखन की ॥ 'भूषन'

---

(१) सेना के दरेरा (दबाव) से।

(२) सम्भवतः तीज का चन्द्रमा।

भनत पतिबाँह बहियाँ न तेऊ छहियाँ छबीली ताकि रहियाँ रुखन की। बालियाँ बिथुरि जिमि आलियाँ नलिन पर लालियाँ मलिन मुगलानियाँ मुखन की॥ ६॥

कत्ता की कराकँनि चकत्ता को कटक काटि कीन्ही सिवराज बीर अकह कहानियाँ। 'भूषन' भनत तिहु लोक मैं तिहारी धाक दिल्ली औ बिलाइत सकल बिललानियाँ॥ आगरे अगारनं है फाँदती कगारन छ्वै बाँधती न बारन मुखन कुम्हिलानियाँ। कीबी कहैं कहाँ औ गरीबी गहे भागी जाहिं बीबी गहे सूथनी सु नीबी गहे रानियाँ॥ ७॥

ऊँचे घोर मन्दरँ के अन्दर रहन वारी ऊँचे घोर मन्दरं के अन्दर रहाती हैं। कन्दं मूल भोग करैं कन्दं मूल भोग

---

(१) पति की बांहों से नहीं बहीं अर्थात् अलग नहीं हुई।
(२) रूखो (पेड़ों) की।
(३) अलि; भौरे।
(४) कड़ाके से; जोर से चल्लाकर।
(५) मकानों मे।
(६) कहती हैं कि क्या करैगी?
(७) मन्दिर; मकान।
(८) पब्बंत।
(९) क़न्द मूलक (व्यंजन)।
(१०) जड़ैं औरं ज़मीन के अन्दर होनेवाले फल।

करैं, तीन बेर खातीं सो तौ तीन बेर खाती हैं ॥ भूषनँ सिथिल अंग भूषनँ सिथिल अंग बिजनँ डुलातीं तेब बिजनँ डुलाती हैं। 'भूषन' भनत सिवराज बीर तेरे त्रास नगनँ जड़ातीं ते वै नगनँ जड़ाती हैं ॥ ८ ॥

उतरि पलँग ते न दियो है धरा पै पग तेऊ सगबग निसि दिन चलीं जाती हैं। अति अकुलातीं मुरझातीं ना छिपातीं गात बात न सोहाती बोले अति अनखाती हैं। भूषन' भनत सिंह साहि के सपूत सेवा तेरी धाक सुने अरि नारी बिललाती हैं। कोऊ करें घाती कोऊ रोतीं पीटि छाती घरै तीनि बेर खातीं ते वै बीनि बेर खाती हैं ॥ ९ ॥

अन्दर ते निकसीं न मन्दिर को देख्यो द्वार बिन रथ पथ ते उघारे पावँ जाती हैं। हवा हू न लागती ते हवा ते

(१) तीन मर्तबा।

(२) बेरी के तीन फल।

(३) ज़ेवरो से।

(४) भूखो से।

(५) पंखा।

(६) ते अब।

(७) जंगलो में।

(८) मारी मारी फिरती हैं।

(९) ज़ेवरों में नगीने जड़वाती थीं।

(१०) नंगे जाड़ा खा रही हैं।

विहाल भईं लाखन की भीर मैं सम्हारतीं न छाती हैं ॥ 'भूषन' भनत सिवराज तेरी धाक सुनि हयादारी[1] चीर फारि मन झुझलाती हैं। ऐसी परीं नरम हरम बादसाहन की नासपाती खातीं ते बनासपाती[2] खाती हैं ॥ १० ॥

अतर गुलाब रस चोवा[3] घनसार सब सहज सुबास की सुरति बिसराती हैं। पल भरि पलँग ते भूमि न धरति पावँ भूली खान पान फिरैं बन बिललाती हैं ॥ 'भूषन' भनत सिवराज तेरी धाक सुनि दारा हार बार न सम्हार अकुलाती हैं। ऐसी परीं नरम हरम बादसाहन की नासपाती खातीं ते बनासपाती खाती हैं ॥ ११ ॥

सोंधे[4] को अधार किसमिस जिनको अहार चारि को सो अंक लंक चन्द सरमाती हैं। ऐसी अरि नारी सिवराज बीर तेरे त्रास पायन मैं छाले परे कन्द मूल खाती हैं ॥ ग्रीषम तपनि एती तपती न सुनि कान कंज कैसी कली बिनु पानी मुरझाती हैं। तोरि तोरि आछे[5] से पिछौरा सों निचोरि, मुख कहैं "अब कहां पानी मुकतों मैं पाती हैं ?" ॥ १२ ॥

---

[१] हया (शर्म) रखने वाली।
[२] बनस्पति।
[३] चन्दन का माचा।
(४) सुगन्ध।
(५) अच्छे से अर्थात् बढ़िया (मोती)।

साहि सिरताज औ सिपाहिन मैं पातसाह अचल सु सिंधु केसे जिनके सुभाव हैं। 'भूषन' भनत परी शस्त्र रन सेवा धाक काँपत रहत न गहन चित चाव हैं ॥ अथह बिमल जल कालिंदी के तट केते परे युद्ध विपति के मारे उमराव हैं। नाव भरि बेगम उतारैं बांदी डोंगा भरि साहि मक्का मिसि उतरत दरियाव हैं ॥ १३ ॥

किबले[1] के ठौर बाप बादसाह साहिजहाँ ताको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है। बड़ो भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो मेहरहु[2] नाहिं वाको जायो सगो भाई है। बंधु तो मुरादबक्स बादि चूक[3] करिबे को बीच लै कुरान खुदा की कसम खाई है। 'भूषन' सुकवि कहै सुनो नवरंगजेब एते काम कीन्हे फेरि पादसाही पाई है ॥ १४ ॥

हाथ तसबीह[4] लिए प्रात उठि बन्दगी को आपही कपट रूप कपट सु जप के। आगरे में जाय दारा चौक मैं चुनाय लीन्हों छत्रही छिनायो मनो बूढ़े मरे बप के ॥ कीन्हों है सगोत घात

---

(१) ऊँचा । पूज्य ।

(२) मेहरबानी ।

(३) दगाबाजी ।

(४) जपने की मुसल्मानी माला ।

सो मैं नाहिं कहौं फेरि पील पै तोरायो चार चुगुल के गपके। 'भूषन' भनत छरछन्दी मतिमन्द महा सौ सौ चूहे खाय कै बिलारी बैठी तप के॥ १५॥

कैयक हजार जहाँ गुर्ज-बरदार ठाढ़े करि कै हुस्यार नीति पकरि समाज की। राजा जसवन्त को बुलाय कै निकट राखे तेऊ लखैं नीरे जिन्हैं लाज स्वामि-काज की॥ 'भूषन' तबहुँ ठठकत ही गुसुलखाने सिंह लौं झपट गुनि साहि महराज की। हटकि हथ्यार फड़ बांधि उमरावन की कीन्ही तब नौरंग ने भेंट सिवराज की॥ १६॥

सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रहिबे के जोग ताहि खरो कियो जाय जारन के नियरे। जानि गैर मिसिल गुसीले गुसा धरि उर कीन्हो ना सलाम न बचन बोले सियरे॥ 'भूषन' भनत महावीर बलकन लाग्यो सारी पातसाही के उड़ाय गये जियरे। तमक ते लाल मुख सिवा को निरखि भये स्याह मुख नौरँग सिपाह मुख पियरे॥ १७॥

राना भो चमेली और बेला सब राजा भए ठौर ठौर रस लेत नित यह काज है। सिगरे अमीर आनि कुन्द होत घर

---

(१) हाथी से मरवा डाला।

(२) गप्प मारने से, झूठ बोलने से।

(३) इस छन्द में रौद्र एवं भयानक रस हैं।

घर भ्रमत भ्रमर जैसे फूलन की साज है ॥ 'भूषन' भनत सिव-राज बीर तैंही देस देसन में राखी सब दच्छिन की लाज है । त्यागे सदा षटपद-पद अनुमानि यह अलि नवरंगजेब चम्पा सिवराज है ॥ १८ ॥

कूरम[1] कमल कमधुज[2] है कदमफूल गौर है गुलाब रानाँ[3] केतकी बिराज है । पाँडरि पँवार जुही सोहत है चन्द्रावल सरस बुँदेला सो चमेली साज बाज है । 'भूषन' भनत मुच-कुन्द बड़गूजर हैं बघेले बसन्त सब कुसुम समाज है । लेइ रस एतेन को बैठि न सकत अहै अलि नवरंगजेब चम्पा सिवराज है[4] ॥ १९ ॥

देवल गिरावते फिरावते निसान अली ऐसे डूबे राव राने सबी[5] गए लबकी । गौरा गनपति आप औरन को देत ताप आप के मकान सब मारि गये दबकी ॥ पीरा पय-

---

(१) महाराज जयपुर कछवाह होनें के कारण कूर्मवंशी कहलाते हैं ।

(२) महाराज जोधपुर । कबन्धज । युद्ध मे इनके पूर्वपुरुष जयचन्द महाराजा कन्नोज का कबन्ध उठा था, इसी से उनके वंशी कबन्धज कहलाते हैं ।

(३) महाराना उदयपुर ।

(४) इस छन्द में सम अभेद रूपक है ।

(५) लबलबा गये, निर्बल हो गये ।

गम्बरा दिगम्बरा दिखाई देत सिद्ध की सिधाई गई रही बात रब की। कासिहु ते कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न होतो तौ सुनति होत सब की ॥ २० ॥

साँच को न मानै देवी देवता न जानै अरु ऐसी उर आनै मैं कहत बात जब की। और पातसाहन के हुती चाह हिन्दुन की अकबर साहजहाँ कहैं साखि तब की ॥ बब्बर के तिब्बर हुमायूँ हद्द बाँधि गये दो मैं एक करी ना कुरान बेद ढब की। कासिहु की कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न होतो तौ सुनति होत सब की ॥ २१ ॥

कुम्भकर्न असुर औतारी अवरंगजेब कीन्ही कत्ल मथुरा दोहाई फेरी रब की। खोदि डारे देवी देव सहर मुहल्ला बाँके लाखन तुरुक कीन्हे छूटि गई तब की ॥ 'भूषन' भनत

---

(१) खोदा (यहां पर) मुसलमानी देवता।

(२) खतना, मुसल्मानी।

(३) तीन बार।

(४) कुरान और बेद की जो दो ढबैं हैं उनको एक मे न किया, अर्थात् बेद की रीतियों के उठाने का प्रयत्न न किया।

(५) सन १६६९ ई० में औरंगजेब ने देहरा केशवराय को मथुरा मे तोड़ा—इसे महाराज बीरसिंहदेव बुँदेला ने ३३ लक्ष मुद्रा लगा कर बनवाया था।

भाग्यो कासीपति बिस्वनाथ[1] और कौन गिनती मैं भूली गति भव की। चारौं वर्ण धर्म छोड़ि कलमा[2] नेवाज पढ़ि सिवा जी न होतो तौ सुनति होत सब की ॥ २२ ॥

दावा पातसाहन सों कीन्हो सिवराज बीर जेर कीन्हो देस हद्द बाँध्यो दरबारे से[3]। हठी मरहठी तामैं राख्यो ना मवास[4] कोऊ छीने हथियार डोलैं बन बनजारे से ॥ आमिष अहारी मांसहारी दै दै तारी नाचैं खाँडे तोड़ किरचैं उड़ाये सब तारे से। पील सम डील जहाँ गिरि से गिरन लागे मुंड मतवारे गिरैं झुंड मतवारे से[5] ॥ २३ ॥

छूटत कमानें[6] और तीर गोली बानन के मुसकिल होत मुरचान हू की ओट मैं। ताही समै सिवराज हुकुम कै हल्ला

---

(१) औरंगजेब ने विश्वनाथ जी का मन्दिर सन १६६९ ई० मे तोड़ा था—उसी समय कहा जाता है कि श्री विश्वनाथ जी की मूर्ति मन्दिर से भाग ज्ञानवापी नामक कूप मे (जो मन्दिर के पिछवाड़े है) जाकर कूद पड़ी।

(२) कलमा यह है:—"ला इलाहे इल्लिल्ला: मोहम्मद रसूलिल्ला:" अर्थात् सिवाय परमेश्वर के कोई सबल नहीं है, मोहम्मद परमेश्वर का बसीठी है—मुसलमानों के अनुसार जो कोई ये दोनों बातें मानता हो वही मुसल्मान है—

(३) दरबारे से, दरबार ही से, खास दरबार से—

(४) क़िला—मोर्चा—

(५) पूर्णोपमा अलंकार॥

(६) तोप।

कियो दावा बाँधि पर हला बीर भट जोट मैं ॥ 'भूषन' भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहौं किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट झोट[1] मैं। ताव दै दै मूछन कँगूरन पै पाँव दै दै अरि मुख घाव दै दै कूदे परैं कोट मैं ॥ २४ ॥

उतै पातसाह जू के गजन के ठट्ट छूटे उमड़ि घुमड़ि मतवारे घन भारे हैं। इतै सिवराज जू के छूटे सिंह राज औ बिदारे कुम्भ करिन के चिक्करत कारे हैं ॥ फौजैं सेख सैयद मुगल औ पठानन की मिलि इखलास[3] काहू मीर न सम्हारे हैं। हद्द हिन्दुवान की बिहद्द तरवारि राखि कैयो बार दिल्ली के गुमान झारि डारे हैं ॥ २५ ॥[2]

जीत्यो सिवराज सलहेरि को समर सुनि सुनि असुरन[4] के सु सीने धरकत हैं। देवलोक नागलोक नरलोक गावैं जस अजहूं लौं परे खग्ग दाँत खरकत हैं ॥ कटक कटक काटि कीट से उड़ाय केते 'भूखन' भनत मुख मोरे सरकत हैं। रन-भूमि लेटे अधकटे फरलेट परे रुधिर लपेटे पठनेटे फरकत हैं ॥ २६ ॥

मालती सवैया।

केतिक देस दल्यो दल के बल दच्छिन चंगुल चापि कै

(१) झुरमुट, समूह—

(२) इस छन्द में पूर्ण वीर रस एवं पदार्थवृत्त अलंकार है—

(३) सलहेरि के युद्ध में मुग़लों का सेनापति इखलास खाँ था।

(४) मुसल्मान (टाड देखिये)।

चाख्यो। रूप गुमान हन्यो गुजरात को सूरति[1] को रस चूसि कै नाख्यो॥ पंजन पेलि मलिच्छ मल्यो सब सोई बच्यो जेहि दीन ह्वै भाख्यो। सोरँग है सिवराज बली जेहिं नौरँग मैं रँग[2] एक न राख्यो॥ २७॥

सूबा निरानँद बादरखान गे लोगन बूझत ब्योंत बखानो। दुग्ग सबै सिवराज लिये धरि चारु विचारु हिये यह आनो॥ 'भूषन' बोलि उठे सिगरे हुतो पूना मैं साइतखान को थानो। जाहिर है जग मैं जसवन्त लियो गढ़सिंह मैं गीदर[3] बानो॥ २८॥

कवित्त मनहरन।

जोर करि जैहैं जुमिला[4] हू के नरेस पर तोरि अरि खण्ड खण्ड सुभट समाज पै। 'भूषन' असाम रूम बलख बुखारे जैहैं चीन सिलहट तरि जलधि जहाज पै॥ सब उमरावन की हठ कूरताई देखौ कहैं नवरंगजेब साहि सिरताज पै। भीख

---

[१] सन् १६६४ और १६७० ई० में शिवाजी ने सूरत लूटी थी।

[२] काव्यलिंग अलंकार।

[३] जसवन्त सिंह ने सिंहगढ़ को घेरा परन्तु फिर कुछ किये बिना मोहासिरा उठा लिया। यह छन्द स्फुट कविता से यहां रक्खा गया है।

[४] शि० भू० छन्द न० ११२ देखिये।

[५] आसाम में है। वहां की नारंगी मशहूर है।

माँगि खैहैं बिनु मनसब रैहैं पै न जैहैं हजरत महाबली सिवराज पै ॥ २९ ॥

चन्द्रावल[1] चूर करि जाहली जपत कीन्हो मारे सब भूप औ सँहारे पुर धाय कै। 'भूषन' भनत तुरकान दलथम्भ[2] काटि अफ़ज़ल मारि डारे तबल[3] बजाय कै ॥ एदिल सौं बेदिल हरम कहैं बार बार अब कहा सोवो सुख सिंहहि जगाय कै। भेजना है भेजौ सो रिसालैं[4] सिवराज जू की बाजीं करनालैं परनालै पर आय कै ॥ ३० ॥

मालती सवैया।

साजि[5] चमू जनि जाहु सिवा पर सोवत जाय न सिंह जगावो। तासों न जंग जुरौ न भुजंग महा विष के मुख मैं कर नावो॥ 'भूषन' भाषत बैरिबधू जनि एदिल औरँग लौं दुख पावो। तासु सलाह की राह तजौ मति, नाह दिवाल की राह न धावो ॥ ३१ ॥

---

[१] शि० भू० छन्द नम्बर २०६ का नोट देखो। चन्द्रावल, चन्द्ररावल, चन्द्रराव मोरे।

(२) दल थम्भ का कोई पता नहीं लगता। स्यात यह रणथम्भ हो जहाँ का राजा हम्मीर देव विदित हो गया है। अथवा दल (फौज) का थाँभने वाला (आधार)

(३) डंका।

(४) ख़िराज।

(५) यह छन्द स्फुट कविता से आया है।

छप्पय।

बिज्जपूर[1] बिदनूर[2] सूर सर धनुष न संधहिं।
मगल बिनु मल्लारि[3] नारि धम्मिल[4] नहिं बंधहिं॥ गिरत गब्भ[5] कोटै गरब्भ[6] चिंजी चिंजा[7] डर। चालकुंड[8] दलकुंड[9] गोलकुंडा संका उर॥ भूषन' प्रताप सिवराज तव इमि दच्छिन दिसि संचरहि। मधुरां[10]-धरेस धकधकत सो द्रविड़ निबिड़ डर दबि डरहि॥ ३२॥

---

(१) किसी विज्ञ पूरा का पता नहीं लगता। शायद यह बिजैपूर (बीजा पूर) हो।

(२) बिदनूर बीजापुर की रियासत मे एक नगर था जिसपर एक राजा शासन करता था। सन् १६७३ ई० में वह डर कर शिवाजी के अधीन हो गया।

(३) मलाबार बासी।

(४) फूल मोती आदि से गुथे हुए बाल।

(५) गर्भ्भ।

(६) किले के भीतर ही, कोट गर्भ्भ मे ही।

(७) लड़की लडका।

(८) चाल एक बन्दरगाह है। इसके पास सन १५३१ ई० के लगभग इसाइयो ने एक किला बनवाया था।

(९) दल कश्मीर में एक बडी झील है।

(१०) अब इसे मदुरा कहते है और यह मदराम मे एक जिला है।

कबित्त मनहरण ।

अफ़जल खान को जिन्हों ने मयदान मारा बीजापुर गोलकुंडा मारा जिन आज है । 'भूषन' भनत फरासीस त्यों फिरंगी मारि हबसी तुरक डारे उलटि जहाज है ॥ देखत मैं रुसतम[१] खाँ को जिन खाक किया साल की सुरति आजु सुनी जो अवाज है । चौंकि[२] चौंकि चकता कहत चहुँघा ते यारो लेत रहौ खबरि कहाँ लौं सिवराज है ॥ ३३ ॥

फिरगाने[३] फिकिरि औ हद्द सुनि हबसाने 'भूखन' भनत कोऊ सोवत न घरी है । बीजापुर बिपति बिडरि सुनि भाज्यो सब दिल्ली दरगाह बीच परी खरभरी है ॥ राजन के राज सब साहिन के सिरताज आज सिवराज पातसाही चित धरी है । बलख बुखारे कसमीर लौं परी पुकार धाम धाम धूम-धाम रूम साम परी है[४] ॥ ३४ ॥

गरुड़[५] को दावा सदा नाग के समूह पर दावा नाग जूह पर सिंह सिरताज को । दावा पुरहूत[६] को पहारन के

---

(१) रुस्तमें जमां । देखिये शि० भू० छन्द नं० २३९ का नोट ।
(२) पूर्ण भयानक रस ।
(३) बाबर के पिता का राज्य ।
(४) भयानक रस ।
(५) निदर्शना अलंकार ।
(६) इन्द्र ।

कुल पर पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को ॥ 'भूषन अखंड नवखंड महिमडंल मैं तम पर दावा रवि किरन समाज को । पूरब पछाँह देस दच्छिन ते उत्तर लौं जहाँ पादसाही तहाँ दावा सिवराज को ॥ ३५ ॥

दारा की न दौर यह रारि नहीं खजुवे[1] की बाँधिबो नहीं है कैधौं मीर सहवाल[2] को । मठ विश्वनाथ को न बास ग्राम गोकुल को देवी को न देहरा न मन्दिर गोपाल को ॥ गाढ़े गढ़ लीन्हे अरु बैरी कतलान कीन्हे ठौर ठौर हासिल[3] उगाहत है साल को । बूड़ति है दिल्ली सो सम्हारै क्यों न दिल्लीपति धक्का आनि लाग्यो सिवराज महाकाल को ॥३६॥

गढ़नें[4] गँजाय गढ़धरन सजाय करि छाँड़ि केते धरम दुवार दै भिखारी से । साहि के सपूत पूत बीर सिवराज सिंह केते गढ़धारी किये बन बनचारी से ॥ 'भूषन' बखानै केते दीन्हे बंदीखाने सेख सैयद हजारी[5] गहे रैयति बजारी

---

(१) खजुये मे शाहशुजा औरंगज़ेब से हारा था ।

(२) इसका इतिहास में नाम नहीं मिलता, कोई छोटा सर्दार होगा, लाल कवि ने इसका वर्णन किया है-इसका ठीक नाम शहबाज़ खाँ था ।

(३) चौथ, सरदेश मुखी आदि ।

(४) किलों को गँजवा कर ।

(५) एक हज़ार सिपाहियों का अफ़सर ।

से। महतौं[1] से मुगल महाजनैं[2] से महाराज डाँड़ि लीन्हे पकरि पठान पटवारी से[3] ॥ ३७ ॥

सक्र जिमि सैल पर अर्क[4] तम फैल पर बिघन की रैल पर लम्बोदर[5] लेखिये। राम दसकन्ध पर भीम जरासन्ध पर 'भूषन' ज्यों सिन्धु पर कुम्भज[6] बिसेखिये॥ हर ज्यों अनंग पर गरुड़ भुजंग पर कौरव के अंग पर पारथ ज्यों पेखिये। बाज ज्यों बिहंग पर सिंह ज्यों मतंग पर म्लेच्छ चतुरंग पर सिवराज देखिये[7] ॥ ३८ ॥

बारिध के कुम्भभव घन बन दावानल तरुन तिमिर हू के किरन समाज हौ। कंस के कन्हैया कामधेनु हू के कंटकाल[8] कैटभ के कालिका बिहंगम के बाज हौ॥ 'भूषन' भनत जग जालिम के सचीपति पन्नग के कुल के प्रबल

---

(१) महतौं।

(२) कलवार।

(३) पूर्णोपमा।

(४) सूर्य्य।

(५) गणेशजी।

(६) अगस्त्य मुनि जिन्होंने समुद्र पी लिया था—वे घड़े से पैदा हुए थे।

(७) मालोपमा।

(८) कांटों का घर।

पच्छिराज हौ। रावन के राम कार्तवीज के परसुराम दिल्ली-पति दिग्गज के सेर सिवराज हौ[७] ॥ ३९ ॥

दर बर दौरि करि नगर उजारि डारि कटक कटायो कोटि दुजन दरब[२] की। जाहिर जहान जंग जालिम है जोरावर चलै न कछूक अब एक राजा रव[३] की॥ सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुवकम्प थर थर काँपत बिलायति अरब[४] की। हालत दहलि जात काबुल कँधार बीर रोष करि काढ़ै समसेर ज्यों गरब की[५] ॥४०॥

सिवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यों कहत बार बार कहि पातसाह गरजा। सुनिये, खुमान[७] हरि तुरुक गुमान महि देवन जेंवायो. कबि 'भूषन' यों अरजा॥ तुम वाको पाय कै जरूर रन छोरो वह रावरे वजीर छोरि दंत करि परजा। मालुम तिहारो होत याहि मैं निवारो रनु कायर सों कायर औ सरजा सों सरजा॥ ४१ ॥

---

(१) सम अभेद रूपक।

(२) दुर्ज्जन की द्रव्य से इकट्ठा की हुई सेना कटवा डाली।

(३) राव।

(४) अरब की बिलायत थर थर काँपती है।

(५) अहंकार की अथवा पच्छिम की तलवार।

(६) यह छन्द स्फुट कविता से आया है।

(७) शिवाजी।

कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन के एकै पातसाहन के देस दाहियतु है ।'भूषन' भनत महाराज सिवराज एकै साहन की फौज पर खग्ग बाहियतु है ॥ क्यों न होहिं बैरिन की बौरी सुनि बैरि-बधू दौरनि तिहारे कहौ क्यों निबाहियतु है । रावरे नगारे सुने बैरवारे नगरनि नैनवारे नद न निवारे चाहियतु है ॥ ४२ ॥

चकित चकत्ता चौंकि चौंकि उठै बार बार दिल्ली दहसति चित चाहै खरकति है । बिलखि बदन बिलखात बिजैपुर पति फिरत फिरंगिन की नारी फरकति है । थर थर काँपत कुतुब साहि गोलकुंडा हहरि हबस भूप भीर भरकति है । राजा सिवराज के नगारन की धाक सुनि केते पातसाहन की छाती दरकति है ॥ ४३ ॥

मोरँग कुमाउँवौ पलाऊँ बाँधे एक पल कहाँ लौं गनाऊं जेऽब भूपन के गोत हैं । 'भूषन' भनत गिरि बिकट निवासी

---

(१) भयानक रस ।

[२] चंचलातिशयोक्ति ।

(३) भयानक रस ।

[४] शि० भू० छन्द नं० २४१ का नोट देखिये ।

[५] 'भागना' हो सकता है;'पला' भी । पला नामक एक ग्राम यमुना जी के किनारे था ।

लोग, बावनी बवंजा[1] नव कोटि धुन्ध जोत[2] हैं। काबुल कँधार खुरासान जेर कीन्हो जिन मुगल पठान सेख सैयदहु रोत हैं। अब लगि[3] जानत हे बड़े होत पातसाह सिवराज प्रगटे ते राजा बड़े होत[4] हैं ॥ ४४ ॥

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी डग्ग नाचे डग्ग पर रुंड मुंड फरके। भूषन भनत बाजे जीति के नगारे भारे सारे[5] करनाटी भूप सिंहल को सरके ॥ मारे सुनि सुभट [6]पनारेवारे उदभट तारे लगे फिरन सितारे गढ़धर के। बीजापुर बीरन के, गोलकुंडा धीरन के, दिल्ली उर मीरन के दाड़िम से दरके[7] ॥ ४५ ॥

---

[१] बजूना नामक एक स्थान फतेहपूर सिकरी के पास था।

[२] धुँधली जोति के अर्थात तेजहत।

[३] काव्यलिंग अलंकार।

[४] यह छन्द स्फुट कविता से यहाँ आया है।

[५] करनाटक पर शिवाजी ने सन १६७६–७८ मे आक्रमण किया था।

[६] इस छन्द में पनारे गढ का बरणन अशुद्ध सा जँचता है क्योकि परनाले मे सन १६६१ ई० एवं सन् १६७३ ई० मे लड़ाई हुई थी और करनाटक की चढ़ाई सन् १६७८ ई० मे हुई थी। सम्भव है कि पनाले किले के फौजी कहीं बाहर लड़े हों और वहां मारे गये हो।

[७] पूर्णोपमा।

मालवा उजैन भनि 'भूषन' भेलास[1] ऐन सहर सिरोंज[2] लौं परावने परत हैं । गोंडवानो[3] तिलगानो फिरगानो[4] करनाट[5] रुहिलानो रुहिलन[6] हिये हहरत हैं ॥ साहि के सपूत सिवराज तेरी धाक सुनि गढ़पति बीर तेऊ धीर न धरत हैं । बीजापुर गोलकुंडा आगरा दिली के कोट बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत हैं ॥ ४६ ॥

मारि करि पातसाही खाकसाही कीन्हीं जिन जेर कीन्हों जोर सों लै हद्द सब मारे की । खिसि गई सेखी फिसि गई सूरताई सब हिसि गई हिम्मति हजारों लोग सारे की ॥ बाजत दमामे लाखौं धौंसा आगे घहरात गरजत मेघ ज्यों बरात चढ़े भारे की । दूँलहो सिवाजी भयो दच्छिनी दमामे वारे दिली दुलहिनि भई सहर सितारे की ॥ ४७ ॥

---

[१] भेलसा—इसमें बहुत से प्राचीन बौद्ध स्तूप हैं-यह ग्वालियर राज्य में है ।

[२] शीराज़ हो सकता है—सिरोज नामक एक शहर बुन्देलखण्ड के समीप भी था ।

[३] वर्त्तमान समय का प्राय: समस्त मध्य प्रदेश उस समय गोंडवाना कहलाता था क्योंकि वहा गोंड विशेषतया रहते थे ।

[४] बाबर के पिता का राज्य ।

[५] करनाटक ।

[६] भूमिका देखिए ।

[७] सम अभेद रूपक ।

डाढ़ी के रखैयन की डाढ़ी[1] सी रहति छाती बाढ़ी मरजाद जस हद्द हिन्दुवाने की। कढ़ि गई रैयति के मन की कसक सब मिट गई ठसक तमाम तुरकाने की ॥ 'भूषन' भनत दिलीपति दिल धकधका सुनि सुनि धाक सिवराज[2] मरदाने की। मोटी भई चंडी बिनु चोटी के चबाय सीस खोटी भई सम्पति चकत्ता के घराने की ॥ ४८ ॥

जिन फन फुनकार उड़त पहार भार कूरम कठिन जनु कमल बिदलि गो। बिषजाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन झारन चिकारि मद दिग्गज उगलि गो ॥ कीन्हों जेहि पान पयपान सो जहान कुल कोल हू उछलि जल सिन्धु खलभलि गो। खग्ग[3] खगराज महाराज सिवराज जू को अखिल भुजंग मुगलद्दल निगलि गो ॥ ४९ ॥

सुमन[4] मैं मकरन्द रहत है साहि नन्द मकरन्द सुमन रहत ज्ञान बोध है। मानस मैं हंस बंस रहत हैं तेरे जस हंस में रहत करि मानस बिसोध है ॥'भूषन'भनत भौंसिला

---

[१] जली हुई। जंगल मे पत्तियां जलाई जाती हैं उसे "दाढ़ा" कहते हैं।

[२] इस छन्द मे कहीं कहीं शिवराज के स्थान पर छत्रशाल का नाम लिखा है परन्तु शुद्ध शिवराज ही का नाम समझ पड़ता है।

[३] सम अभेद रूपक।

[४] यह छन्द स्फुट कविता से आया है।

भुवाल भूमि तेरी करतूति रही अदभुत रस ओध है। पानि मैं जहाज रहे लाज के जहाज महाराज सिवराज तेरे पानिप पयोध है ॥ ५० ॥

बेद राखे बिदित पुरान राखे सार युत रामनाम राख्यो अति रसना सुघर मैं। हिन्दुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की काँधे मैं जनेऊ राख्यो माला राखी गर मैं॥ मीड़ि राखे मुगल मरोड़ि राखे पातसाह बैरी पीसि राखे बरदान राख्यो कर मैं। राजन की हद्द राखी तेग बल सिव-राज देव राखे देवल स्वधर्म्म राख्यो घर मैं ॥ ५१ ॥

सपत नगेस चारौं ककुभ[1] गजेस कोल कच्छप दिनेस धरैं धरनि अखंड को। पापी घालै धरम सुपथ चालै मारतंड करतार प्रन पालै प्रानिन के चंड को॥'भूषन' भनत सदा सरजा सिवाजी गाजी म्लेच्छन को मारै करि कीरति घमंड को। जग काज वारे निहिचिन्त करि डारे सब भोर देत आसिष तिहारे भुजदंड को ॥ ५२ ॥

[१] पृथ्वी के हाथी अर्थात् दिग्गज।

श्री छत्रशाल दशक ।

दोहा ।

इक हाड़ा[1] बूँदी धनी मरद महेवा वाल[2] ।
सालत नौरंगजेब को ये दोनो छतसाल ॥
वै देखौ छत्ता पता यै देखो छतसाल ।
वै दिल्ली की ढाल[3] यै दिल्ली ढाहन वाल ॥

कवित्त मनहरण ।

छत्रशाल हाडा बूंदी नरेश विषयक ।

चले चन्दबानं[4] घनबान औ कुहूकबानं[5] चलत कमानं[6]

---

(१) एक छत्रसाल हाडा बूदी नरेश थे–ये महाराज गोपीनाथ के पुत्र और राव रतन सिंह के पौत्र थे–ये स्वयं बावन लड़ाइयों मे शरीक रहे थे । सन् १६५८ ई० मे धौलपूर मे दारा और औरगजेब की जो लडाई राज्यार्थ हुई थी उसमे ये महाराज दारा के दल के हरौल मे थे । उसी लड़ाई मे बडी बहादुरी दिखा कर ये मारे गये । उसीका बरणन भूषण ने इस दशक के प्रथम दो छन्दो मे किया है ।

(२) दूसरे छत्रसाल चम्पति राय बुँदेला के पुत्र थे । इन्हीं के अनिवार्य प्रयत्नो से इनका राज्य बुँदेलखड भर में फैल गया था ।

(३) क्योंकि वे दिल्ली की ओर हो दारा की तरफ से लड़े थे ।

(४) अर्द्धचन्द्र बाण ।

(५) अंधेरे में चलने वाले बाण ।

(६) तोप ।

धूम आसमाग ह्वै रहो । चली जमडाढ़ैं बाढ़वारैं तरवारैं जहां लोह आँच जेठ के तरनि मान वै रहो । ऐसे समै कौजैं बिचलाई[१] छत्रसालसिंह अरि के चलाये पायँ बीर रस च्वै रहो ॥ हय चले हाथी चले संग छोंड़ि साथी चले ऐसी चलाचली मैं अचल हाड़ा ह्वै रहो ॥ १ ॥

दारा साहि नौरँग जुरे हैं दोऊ दिली दल एकै गये भाजि एकै गये रुँधि चाल मैं[२] । बाजी कर कोऊ दगाबाजी करि राखा जेहिं कैसेहू प्रकार प्रान बचत न काल[३] मैं ॥ हाथी ते उतरि हाड़ा जूझो लोह लंगर[४] दै एती लाज कामें जेती लाज छत्रसाल मैं । तन तरवारिन मैं मन परमेसुर मैं प्रान स्वामि-कारज मैं माथो हरमाल मैं ॥ २ ॥

---

(१) पूर्णोपमा, पदार्थावृत्त दीपक, परिसंख्या औ भूषणानुसार पर्य्याय अलंकार ।

(२) कोई भाग गये और कोई सेना के संचालन मे फँस गये, अर्थात् इस प्रकार से सेना चलाई गई कि उनकी सेना ऐसे स्थान पर जा पड़ी कि जहाँ से वह शत्रु से भली भांति लड़ नहीं सकती थी ।

(३) कोई ऐसे थे कि जिस समय किसी प्रकार नहीं बचते थे तो उन्होंने दगाबाजी करके अपने हाथ बाजी रक्खा, (अर्थात् प्रान बचाये) ।

(४) जब हाथी लड़ाई से भागने लगतें हैं तब उनके पैरो में लंगड़ (मोटी जंजीर) डाल देते है कि वे भाग न सकैं ।

छत्रशाल बुंदेला महेवानरेश विषयक ।

निकसत म्यान ते मयूखैं[1] प्रलय भानु कैसी फारैं तम तोम से गयन्दन के जाल को । लागत लपटि कंठ बैरिन के नागिनि सी रुद्रहि रिझावै दै दै मुंडन के माल को ॥ लाल छितिपाल छत्रसाल महाबाहु बली कहां लौं बखान करौं तेरी करबाल को । प्रतिभट[2] कटक कटीले केते काटि काटि कालिका सी किलकि कलेऊ देति काल को ॥ २ ॥

भुज भुजगेस की वै संगिनी भुजंगिनी सी खेदि खेदि खातीं दीह दारुन दलन के । बखतर पाखरिन बीच धसि जाति मीन पैरि पार जात परबाह ज्यों जलन के ॥ रैया राय चम्पति[3] को छत्रसाल महाराज भूषन सकत को बखानि

---

(१) किरनैं ।

(२) पूर्णोपमा अलंकार ।

(३) चम्पतिराय छत्रसाल बुँदेला के पूज्य पिता थे । ये महाराज बुँदेलो मे बड़े ही प्रतापी हो गये है । पहिले महाराज चम्पति शाहजहा से मित्रता रखते थे और उनकी ओर से दारा के साथ काबुल मे भी लड़ने गये थे—वहा इन महाराज ने इतनी बीरता दिखाई और अफगानो को इतना शीघ्र परास्त कर दिया कि दारा को इनकी बीरता से द्वेष उत्पन्न हुवा—इसी द्वेष के कारण इनसे और दारा से शत्रुता हो गई । तब ये महाराज औरंगजेब की ओर हो गये और इन्होने धौलपुर के युद्ध मे हरौल दल के नेता होकर दारा को परास्त

यों बलन के। पच्छी पर-छीने[1] ऐसे परे पर छीने[2] बीर तेरी बरछी ने बर[3] छीने हैं खलन के ॥ ४ ॥

रैया राय चम्पति को चढ़ो छत्रसालसिंह भूषन भनत समसेर जोम जमकैं[4]। भादौं की घटा सी उठीं गरदैं गगन घेरैं सेलैं समसेरैं फेरैं दामिनी सी दमकैं॥ खान उमरावन के आन राजा रावन के सुनि सुनि उर लागै घन कैसी घमकैं। बैहरं[5] बगारन की अरि के अगारन की नाँघती पगारन[6] नगारन की धमकैं ॥ ५ ॥

अत्र गहि छत्रसाल खिझ्यो खेत बेतवै के उत ते पठाननहू कीन्हीं झुकि झपटैं। [7]हिम्मति बड़ी के गबड़ी[8]

करके औरंगजेब को राज्य दिलाने मे पूरा योग दिया (यथा "चम्पति राय जगत जस छायो—ह्वै हरौल दारा बिचलायो" लाल कृत छत्र-प्रकाश)।

[१] पखकटे।

[२] पर अर्थात् शत्रु खंडित हो गए।

[३] बल।

[४] पूर्णोपमा अलंकार।

[५] वायु।

[६] घेरा।

[७] पूर्णोपमा अलंकार।

[८] गबड़ी (कबड्डी) एक प्रकार का खेल होता है—इसमें खेलाड़ी दो भागो मे विभक्त हो जाते है। एक समूह का एक

के खिलवारन लौं देत सै हजारन हजार बार चपटैं[2]॥ भूषन भनत काली हुलसी असीसन को सीसन को ईस[1] की जमाति जोर जपटैं[2]। समद लौं समद[3] की सेना त्यौं बुँदेलन की सेलैं समसेरैं भईं बाड़व की लपटैं॥ ६॥

है बर हरट्ट[4] साजि गै बर[5] गरट्ट[6] सम[7] पैदर के ठट्ट फौज जुरी

खेलाडी कबड्डी कबड्डी कहता दूसरे गोल मे जाता है और यह प्रयत्न करता है कि उसकी एकही साँस न टूटने पावे और वह उस गोल के किसी खेलाड़ी को छूकर लौट आवै। अगर उसने ऐसा कर लिया तो उस गोल के जिस खेलाड़ी को उसने छुवा उसे मानो उस ने मार डाला, नहीं तो स्वयं मर गया। दूसरे गोल वाले चाहते हैं कि उसे पकड़ कर मार डाले और उसकी सांस बलात् तोडवा दे, और एक सांस बिना तोड़े उसे लौटने न दें। उसके पीछे दूसरे गोल का एक खिलाड़ी वैसा ही करता है। इसी प्रकार जब किसी गोल के सब खेलाड़ी मर जाते है तो वह गोल हार जाता है।

[१] महादेव जी।

[२] चपेट करते है।

[३] अब्दुस्समद दिल्ली का एक सरदार था। बेतवै नदी के किनारे सन् १६९० ई० के करीब यह छत्रसाल से भारी युद्ध मे हारा था।

[४] हृष्ट पुष्ट।

[५] गजबर; अच्छे हाथी।

[६] समूह।

[७] उसी भांति के।

तुरकाने की । भूषन भनत राय चम्पति को छत्रसाल रोप्यो रन ख्याल ह्वैकै ढाल हिन्दुवाने की ॥ कैयक हजार एक बार बैरी मारि डारे रंजक दगनि मानो अगिनि रिसाने की । सैद अफगन[1] सेन सगर सुतन लागी कपिल सराप लौं तराप तोपखाने की ॥ ७ ॥

चाक[2] चक चमू के अचाक[3] चक चहूँ ओर चाक सी फिरत धाक चम्पति के लाल की । भूषन भनत पातसाही मारि जेर कीन्हीं काहू उमराव ना करेरी करबाल[4] की ॥ सुनि सुनि रीति बिरदैत[5] के बड़प्पन की थप्पन उथप्पन की बानि छत्रसाल की । जंग जीतिलेवा ते वै ह्वैकै दामदेवा[6] भूप सेवा लागे करन महेवा महिपाल की ॥ ८ ॥

---

(१) सैद अफ़गन दिल्ली का एक सरदार था और छत्रसाल से लड़ने को वह भेजा गया था । छत्रसाल ने उसे पराजित किया था । लालकवि कृत छत्र-प्रकाश देखिये । मटौंध जीतने के बाद छत्र-साल ने पहिले स्वयं विचालत होकर फिर घोर युद्ध कर उसे हराया था तब इसकी जगह शाह कुली नियत हुआ ।

(२) चाक, मोटी ताज़ी ।

(३) अचानक ।

(४) तलवार ।

(५) यश वरणन करने वाला ।

(६) कर देने वाले ।

कीबे को समान प्रभु ढूँढि देख्यो आन पै निदान दान युद्ध में न कोऊ ठहरात हैं। पंचम[1] प्रचंड भुज दण्ड को बखान सुनि भागिबे को पच्छी लौं पठान थहरात हैं॥ संका मानि सूखत अमीर दिली वारे जब चम्पति के नन्द के नगारे घहरात हैं। चहूँ ओर चकित चकत्ता के दलन पर छत्ता के प्रताप के पताके फहरात हैं[2] ॥ ९ ॥

राजत अखण्ड तेज छाजत सुजस बड़ो गाजत गयन्द दिग्गज़न हिय साल को। जाहि के प्रताप सों मलीन आफताप[3] होत ताप तजि दुजन करत बहु ख्याल को॥ साज सजि गज तुरी[4] पैदरि कतार दीन्हे भूषन भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को?। और राव राजा[5] एक मन मैं न ल्याऊं अब साहू[6] को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को॥१०॥

---

(१) पंचम सिंह बुन्देलो के पूर्व्व पुरुष थे। महाराज बुन्देल (जो बुन्देलो के पुरखा थे) इनके पुत्र थे। पचमसिंह बड़े प्रतापी और देवी के बड़े भारी भक्त थे।

(२) पूर्णोपमा, चंचलातिशयोक्ति, पूर्ण भयानक रस। यह छन्द स्फुट कविता से यहाँ आया है।

(३) आफ़ताब, सूर्य्य।

(४) घोड़ा।

(५) भूमिका एवं स्फुट काव्य के छन्द नं० ३ का नोट देखिए।

(६) महाराज साहूजी छत्रपति शिवाजी के पौत्र थे। शिवा जी के पुत्र और साहू जी के पिता का नाम शम्भाजी था। साहू

स्फुट काव्य ।

॥ दोहा ॥

रेवा[1] ते इत देत नहिं पथिक म्लेच्छ निवास ।
कहत लोग इन पुरनि मैं है सरजा को त्रास ॥ १ ॥

कवित्त मन हरन ।

बाँजि[2] बम्ब चढ़ो साजि बाजि जब कलाँ भूप गाजी महाराज राजी भूषन बखानते । चंडी की सहाय महि मंडी तेजताई ऐंड़ छंडी राय राजा जिन दंडी औनि आन ते[3] ॥ मन्दी भूत रवि रजँ[4] बन्दी भूत हठ धर नन्दी भूतपति भो अनंदी अनुमान ते । रङ्कीभूत दुवन कँरङ्कीभूत दिगदंती

जी के ही राज्य काल मे मुगल सम्राज्य पूर्ण रूप से ध्वस्त हो गया था । साहूजी ने बहुत वर्ष राज्य किया था । शाही कैद मे इनका संन् १७०७ ई० मे छुटकारा हुआ था ।

(१) नर्म्मदा नदी ।

(२) यह छन्द शिवा बावनी से आया है क्योंकि यह शिवाजी विषयक नहीं है ।

(३) देवीजी की सहायता से (सुलकी ने) पृथ्वी तेज से ता (छादित) कर मढ दिया, और उन राय राजाओं ने भी जिन्होने औरो से भूमि दड मे ले ली थी ऐंड छोड दी ।

(४) राज श्री ।

(५) कल्की; दिग्गज श्वेत वर्ण थे सो इस रज से आच्छादित होने से वे मैले हो गये और इसी कारण वे कलंकी कहे गए ।

पंकीभूत[1] समुद सुलंकी[2] के पयान ते ॥ २ ॥

रहत अछक पै मिटै न धक[3] पीवन की निपट जु नांगी डर काहू के डरै नहीं। भोजन बनावै नित चोखे खानखानन के सोनित पचावै तऊ उदर भरै नहीं ॥ उगिलत आसौ[4] तऊ सुकल समर बीच राजै रावबुद्ध[5] कर बिमुख परै नहीं ॥

---

(१) चहला (कीच) से भरा हुआ ।

(२) अनुप्रास । पँवार आदि जो चार अग्निकुल के क्षत्री हैं उनमे एक सुलकी भी है । बघेले क्षत्री सुलकी क्षत्रियो मे है । बघेल खड के अतिरिक्त ये लोग बाधवगढ़ और गुजरात मे भी राज्य करते थे । इनके राज्य अब भी बहुत से है जिनमे रींवा प्रधान है । मेवार मे भी इनकी एक शाखा है जिसकी सोलह उप-शाखाये हैं । यह छन्द हृदयराम सुत रुद्र के विषय में है । शि० भू० छन्द नं० २८ का नोट देखिये ।

(३) बड़ी चोप ।

(४) आसव, मदिरा । तलवार के लिये लाल रग का खून क्योंकि उत्तम मद्य भी लाल रग का माना गया है ।

(५) छत्रसाल हाड़ा बूँदी नरेश के भाई भीमसिंह के पौत्र अनिरुद्धसिह थे । राव बुद्धसिंह इन्हीं अनिरुद्धसिंह के पुत्र थे । औरगजेब के मरने पर उसके पुत्र शाहआलम (बहादुरशाह) और आजम मे राज्यार्थ जाजऊ पर जो घोर युद्ध हुआ था उसमे राव बुद्धसिह शाहआलम की ओर थे । इसी दिन इन्हे रावराजा की उपाधि मिली । जैपुर के राजा जैसिंह ने अन्त मे राव बुद्ध का

तेग या तिहारी मतवारी है अछक तौलौं जौलौं गजराजन की गजक[1] करै नहीं ॥ ३ ॥

जादिन चढ़त दल साजि अवधूतसिंह[2] तादिन दिगन्त लौं दुवन दाटियतु है । प्रलै कैसे धाराधर धमकैं नगारा धूरि धारा ते समुद्रन की धारा पाटियतु है ॥ भूषन भनत भुवगोल को कहर तहाँ हहरत तगा[4] जिमि गज काटियतु है । काँच से कचरि जात सेस के असेस फन कमठ की पीठि पै पिठी सी बाँटियतु[5] है ॥ ४ ॥

मेचक[6] कवच साजि बाहन बयारि बाजि गाढ़े दल गाजि रहे दीरघ बदन के । भूषन भनत समसेर सोई दामिनी है हेतु नर कामिनी के मान के कदन के । पैदरि बलाकाँ

राज्य छीन लिया था परन्तु इनके पुत्र उमेदसिंह ने फिर उसे प्राप्त कर लिया ।

(१) शराबी लोग जो शराब के साथ थोड़ी सी नमकीन या चटपटी ग़िज़ा खाते है वही गज़क है । यह छन्द छत्रशाल दशक से आया है ।

(२) इनका इतिहास में पता नहीं लगता । भूमिका देखिए ।

(३) मेघ ।

(४) तागा, डोरा ।

(५) पूर्णोपमा, सम्बन्धातिशयोक्ति ।

(६) काला ।

(७) बगुला ।

धुरवान के पताका गहे घेरियत चहूँ ओर सूने ही सदन के। ना करु निरादर पिया सों मिलु सादर यै आये बीर बादर बहादर मदन के[2] ॥ ५ ॥

उलदत[3] मद अनुमद[4] ज्यों जलधि जल बल हद भीम कद काहू के न आह के। प्रबल प्रचंड गंड[5] मंडित मधुप वृन्द बिन्ध्य से बिलन्द सिन्धु सात हू के थाह के ॥ भूषन भनत झूल झम्पति झपान झुकि झूमत झुलत झहरात रथ डाई के। मेघ से घमंडित मजेजदार[6] तेज पुंज गुंजरत कुंजर कुमाऊं नरनाह के[7] ॥ ६ ॥

---

(१) जब बादल बड़े जोर से उठता है तब उसमें दूर से जो लम्बे लम्बे खड़े दूसरे प्रकार के पतले धूम्र वरण बादल दौड़ते हैं उन्हें धोरवा कहते है।

(२) सम अभेद रूपक, उत्तमा दूती की मानवती नायका प्रति शिक्षा।

(३) डालते हैं।

(४) मद पर मद।

(५) कनपटी।

(६) एक प्रभाव सूचक पद। इसके शुद्ध अर्थ का पता नहीं लगता।

(७) अनुप्रास, पूर्णोपमा। इस छन्द के साथ एक जनश्रुति है। भूषण ने जब कुमाऊँ नरेश के यहां जाकर यह छन्द सुनाया था तो उन्हे सन्देह हुआ कि स्यात् जो यह सुनते थे कि शिवाजी ने इन्हे लाखों रुपये दिए वह अशुद्ध है, नहीं तो ये मेरे यहा क्यों आते

बलख बुखारे मुलतान लौं हहर पारै कपि लौं पुकारै कोऊ धरत न सार है। रूम रूँदि डारै खुरासान खूँदि मारै खाक खादर[1] लौं झारै ऐसी साहु[2] की बहार है॥ कक्कर[3] लौं बक्खर[4] लौं मक्कर[5] लौं चले जात टक्कर लेवैया कोऊ वार है न पार है। भूषन सिरौंज[6] लौं परावने परत फेरि दिल्ली

परन्तु तो भी इस बात पर निश्चय न होने से इन्हे राजसन्मानित कवि समझ कर उसने एक लाख रुपये भूषण को बिदाई में दिये, परन्तु भूषण ने वह धन कुमायूँ नरेश (उद्योतसिंह) को वापस करके कहा कि उनका प्रयोजन कुमायूँ जाने से केवल शिवाजी का यश वर्द्धन था, शिवाजी की कृपा से अब उन्हें रुपये पैसे की कोई आवश्यकता नहीं रह गई थी।

(१) खादर नदी के निकट की नीची भूमि को कहते हैं। इसमे रूखापन बहुत होता है।

(२) शिवाजी का पौत्र। छं० द० छं० न० १० का नोट देखो।

(३) एक कोकर देश मुलतान के पास है; एक कोकरा देश उड़ीसा और दक्षिण के बीच मे है। कोकरमडा का एक दुर्ग तापती नदी के उत्तर किनारे पर है।

(४) एक भक्खार गुजरात के पास थी और एक भाकर मुलतान के निकट था।

(५) मकरान नामक एक स्थान सिन्ध के निकट था।

(६) शीराज़ हो सकता है। सिरोज नामक एक स्थान बुन्देलखण्ड के पास भी है।

पर परति परिन्दन की छारं है ॥ ७ ॥

सारस से सूबा करबानक से साहिजादे मोर से मुगल मीर धीर मैं धचै[2] नहीं। बगुला से बंगस बलूचियौ बतक ऐसे काबिली कुलंग याते रन मैं रचै नहीं ॥ भूषन जू खेलत सितारे मैं सिकार सम्भा[3] सिवा को सुवन जाते दुवन सँचै नहीं। बाजी सब बाज की चपेटैं चंग चहूँ ओर तीतर तुरक दिल्ली भीतर बचै नहीं[4] ॥ ८ ॥

राखी हिन्दुवानी हिन्दुवान को तिलक राख्यो स्मृति औ पुरान राखे वेद विधि सुनी मैं। राखी रजपूती रजधानी राखी राजन की धरा मैं धरम राख्यो राख्यो गुन गुनी मैं।

---

(१) पूर्णोपमा, भयानक रस।

(२) धरै नहीं।

(३) शम्भाजी महाराज शिवाजी के पुत्र थे। इन्होंने ९ वर्ष सन १६८९ ई० तक राज किया। ये महाराज बहादुर थे परन्तु अपने पिता की भाति मुन्तज़िम न थे। सन १६८९ ई० में औरंगजेब ने इन्हें पकड़ लिया और कहा "यदि तुम मुसल्मान हो जाओ तो तुम्हारा राज्य तुमको वापस कर दिया जाय" इस पर इन्होंने कहा "दुष्ट तुझ पर थू और तुम्हारे मत पर थू"। इस पर औरंगज़ेब ने बड़े निर्दयी पन से इन्हें मरवा डाला।

(४) संचार नहीं करता।

भूषन सुकवि जीति हद्द मरहट्टन की देस देस कीरति बखानी तव सुनी मैं। साहि के सपूत सिवराज समसेर तेरी दिली दल दाबि कै दिवाल राखी दुनी मैं॥ ९॥

॥ समाप्तम्। शुभमस्तु ॥

---

(१) इसे कुछ लोग मतिराम कृत मानते है ("कहै मतिराम" इत्यादि) परन्तु उनका शिवाजी के दरबार में जाना कहीं लिखा नहीं है। यह छन्द भूषण का ही जान पड़ता है।